D.El.Ed.

DIPLOMA IN ELEMENTARY EDUCATION

प्रारंभिक शिक्षा में पत्रोपाधि

(डी.एल.एड.)

विविधता, समावेशी शिक्षा और जेण्डर

द्वितीय वर्ष

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

छत्तीसगढ़, रायपुर

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक [1][**संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य**] बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,**

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म

और उपासना की **स्वतंत्रता,**

प्रतिष्ठा और अवसर की **समता**

प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन **सब में**

व्यक्ति की गरिमा और [2][**राष्ट्र की एकता और अखंडता**] सुनिश्चित करने वाली **बंधुता**

बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. को **एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

---

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''प्रभुत्व-संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''राष्ट्र की एकता'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।

प्रारंभिक शिक्षा में पत्रोपाधि (डी.एल.एड.)

Diploma in Elementary Education (D.El.Ed.)

विविधता, समावेशी शिक्षा और जेण्डर

द्वितीय वर्ष

प्रकाशन वर्ष—2021

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्,
छत्तीसगढ़, रायपुर

प्रकाशन वर्ष–2021

विविधता, समावेशी शिक्षा और जेण्डर

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

डी. राहुल वेंकट I.A.S.

संचालक

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् छत्तीसगढ़, रायपुर

पाठ्य सामग्री समन्वयक

डेकेश्वर प्रसाद वर्मा

विषय संयोजक

अनुपमा नलगुण्डवार

विशेष सहयोग

हेमंत कुमार साव, संतोष कुमार तंबोली

पाठ्य सामग्री संकलन एवं लेखन

मधु दानी, व्ही.पी.चन्द्रा, प्रीति देशपाण्डेय,
दीपक राजदान, बेनीराम मौर्य

आवरण एवं लेआउट

सुधीर कुमार वैष्णव, हिमांशु वर्मा

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् छत्तीसगढ़, रायपुर उन सभी लेखकों/प्रकाशकों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता है जिनकी रचनाएँ/आलेख इस पुस्तक में समाहित है।

प्राक्कथन

विद्यालय में अध्ययनरत बच्चे भविष्य में राष्ट्र का स्वरूप व दिशा निर्धारण करते हैं तथा विद्यालय शिक्षक शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में किसी अन्य विकासात्मक प्रसास की तरह समाज की बदलती आवश्यकताओं और मांगों को पूरा करने के लिए निरन्तर प्रयासरत रहते हैं।

''शिक्षा बिना बोझ के'' यशपाल समिति की रिपोर्ट (1993) के अनुसार शिक्षकों की तैयारी के अपर्याप्त अवसर से स्कूल में अध्ययन–अध्यापन की गुणवत्ता प्रभावित होती है तथा कोठारी आयोग (64–66) से भी स्पष्ट है कि शिक्षा में गुणात्मक सुधार के लिए शिक्षकों को बतौर पेशेवर तैयार करना अत्यंत जरूरी है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 में भी शिक्षकों की बदलती भूमिका को रेखांकित किया गया है। आज एक शिक्षक के लिए जरूरी है कि वह बच्चों को जाने, समझे, कक्षा में उनके व्यवहार को समझे, उनके सीखने के लिए उपयुक्त माहौल तैयार करें, उनके लिए उपयुक्त सामग्री व गतिविधियों का चुनाव करे, बच्चों की जिज्ञासा को बनाए रखें उन्हें अभिव्यक्ति का अवसर प्रदान करें उनके अनुभवों का सम्मान करें। तात्पर्य यह कि आज की जटिल परिस्थितियों में शिक्षकों की भूमिका कहीं अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण व महत्वपूर्ण हो गई है।

इसी परिप्रेक्ष्य में शिक्षक–शिक्षा को और कारगर बनाने की आवश्यकता है। शिक्षक–शिक्षा में आमूल–चूल परिर्वतन की आवश्यकता बताते हुए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 में शिक्षकों की भूमिका के संबंध में कहा गया है ''सीखने–सिखाने की परिस्थितियों में उत्साहवर्धक सहयोगी तथा सीखने को सहज बनाने वाले बनें जो अपने विद्यार्थियों को उनकी प्रतिभाओं की खोज में, उनकी शारीरिक तथा बौद्धिक क्षमताओं को पूर्णता तक जानने में, उनमें अपेक्षित सामाजिक तथा मानवीय मूल्यों व चरित्र के विकास में तथा जिम्मेदार नागरिकों की भूमिका निभाने में समर्थ बनाएँ।''

प्रश्न यह है कि शिक्षक को तैयार कैसे किया जाए? बेहतर होगा कि विद्यालय में आने के पूर्व ही उसकी बेहतर तैयारी हो, इसके लिए उसे विद्यालय के अनुभव दिए जाएँ। इसीलिए शिक्षक शिक्षा के पाठ्यक्रम व विषयवस्तु को पुनः देखने की जरूरत महसूस हुई, और डी.एल.एड. के पाठ्यक्रम में बदलाव किया गया है।

पाठ्यसामग्री का लक्ष्य शिक्षा की समझ, विषयों की समझ, बच्चों के सीखने के तरीके की समझ, समाज व शिक्षा का संबंध जैसे पहलुओं पर केन्द्रित है। पाठयक्रम में शिक्षण के तरीकों पर जोर देने के स्थान पर विषय की समझ को महत्व दिया गया है। साथ ही शिक्षा के दार्शनिक पहलू को समझने, पाठ्यचर्या के आधारों को पहचानने और बच्चों की पृष्ठभूमि में विविधता व उनके सीखने के तरीकों को समझने की शुरुआत की गई है।

चयनित पाठ्यसामग्री में कुछ लेखक/प्रकाशकों की पाठ्य सामग्री प्रशिक्षार्थियों

के हित को ध्यान में रखकर उनके मूल स्परूप को लिया गया है। कहीं–कहीं स्वरूप में परिवर्तन भी किया गया है, कुछ सामग्री अंग्रेजी की पुस्तकों से ली गई है। हमारा प्रयास यह है कि प्रबुद्ध लेखकों की लेखनी का लाभ हमारे भावी शिक्षकों को मिल सके। इग्नू और एन.सी.ई.आर.टी. सहित लेखकों/प्रकाशकों की पाठ्यसामग्री किसी भी रूप में उपयोग की गई है, हम उनके ह्रदय से आभारी हैं। हम विद्या भवन सोसायटी उदयपुर, दिगंतर जयपुर, एकलव्य भोपाल, अजीम प्रेमजी फाउण्डेशन बैंगलुरू, आई.सी.आई.सी.आई. फाउण्डेशन पुणे, आई.आई.टी. कानपुर, छत्तीसगढ़ शिक्षा संदर्भ केन्द्र रायपुर के आभारी हैं जिनकी टीम ने एस.सी.ई.आर.टी. और डाइट/बी.टी.आई.के संकाय सदस्यों के साथ मिलकर पठन–सामग्री को वर्तमान स्वरूप प्रदान किया।

अंत में पाठ्यसामग्री तैयार करने में प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े सहयोगियों का हम पुनः आभार व्यक्त करते हैं। पाठ्यक्रम तैयार करने पाठ्य सामग्री के संकलन व लेखन कार्य से जुड़े लेखन समूह सदस्यों को भी हम धन्यवाद देना चाहेंगे जिनके परिश्रम से पाठ्य सामग्री को यह स्वरूप दिया जा सका। पाठ्य–सामग्री के संबंध में शिक्षक –प्रशिक्षकों, प्रशिक्षार्थियों के साथ–साथ अन्य प्रबुद्धजनों, शिक्षाविदों के भी सुझावों व आलोचनाओं की हमें अधीरता से प्रतीक्षा रहेगी जिससे भविष्य में इसे और बेहतर स्वरूप दिया जा सके।

रायपुर
वर्ष 2021

संचालक
राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्,
छत्तीसगढ़, रायपुर

विषय–सूची

इकाई	अध्याय	पेज न.
इकाई–1	**समाज में विविधता और समानता –**	01–11

- सामान्य परिचय
- इकाई के उद्देश्य
- विविधता से आशय
  - दोस्ती करना
  - जाति व्यवस्था असमानता का एक अन्य रूप
  - भारत में विविधता
  - हम विविधता को कैसे समझें?
  - भौगोलिक स्थितियाँ विविधता का एक कारक
  - विविधता में एकता
- आइए समानता पर भी चर्चा करें
- पाठ का सारांश
- अभ्यास कार्य
- प्रयोजना कार्य

इकाई–2	**विविधता और भेदभाव –**	12–20

- सामान्य परिचय
- इकाई के उद्देश्य
  - पूर्वाग्रह
  - लड़के और लड़की में भेदभाव
  - रुढ़िबद्ध धारणाओं की समझ
  - असमानता एवं भेदभाव
  - समाज में भेदभाव का सामना
  - समानता के लिए संघर्ष
- अभ्यास कार्य
- परियोजना कार्य

इकाई–3	**विविधता : समाज और विद्यालय में एक महत्वपूर्ण स्रोत –**	21–31

- सामान्य परिचय
- इकाई के उद्देश्य
  - विविधता को पाटने में बच्चों की भागीदारी –

भाग I – छोटे विद्यालय में आरंभ

विषय–सूची

इकाई	अध्याय	पेज न.
	भाग II – वृहत या अपेक्षाकृत बड़े विन्यासों में भिन्नताओं को मान्यता भाग III – शिक्षण विधि द्वारा भिन्नता को संभालना तथा बच्चों की भागीदारी • सारांश • अभ्यास कार्य • परियोजना कार्य	
इकाई–4	**समावेशन तथा विशेष आवश्यकता के बच्चे –** • सामान्य परिचय • इकाई के उद्देश्य • समावेशन की अवधारणा • NCF-2005, NCFTE-2009 में समावेशी शिक्षा • शैक्षिक व्यवस्था में समावेशन • समावेशी शिक्षा की आवश्यकता • विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति नजरिया • समावेशन प्रोत्साहन के तरीके • अभ्यास कार्य • परियोजना कार्य	**32–39**
इकाई–5	**विशेष आवश्यकता वाले बच्चे, वर्गीकरण, प्रकार, पहचान व शिक्षा –** • सामान्य परिचय • शीघ्र हस्तक्षेप • इकाई के उद्देश्य • बच्चों का सामान्य वर्गीकरण (पहचान, कारण, शिक्षा) • निःशक्त जन अधिनियम के आधार पर विशेष आवश्यकता /दिव्यांगता के प्रकार • सारांश • अभ्यास कार्य • परियोजना कार्य	**40–56**
इकाई–6	**समावेशन के अवसर व संभावनाएँ –** • सामान्य परिचय • समावेशी शिक्षा के मायने • शिक्षा में समावेशन चुनौती व समाधान	**57–65**

विषय–सूची

इकाई	अध्याय	पेज न.
	• हम कुछ कर सकते है • सारांश • अभ्यास कार्य • परियोजना कार्य	
इकाई–7	**संसाधन, प्रोत्साहन, योजनाएँ व अनुशंसाएँ –** • सामान्य परिचय • दिव्यांग बच्चों के लिए बाधारहित वातावरण का निर्माण • CWSN बच्चों हेतु संसाधन • दिव्यांगता एवं शिक्षण सामग्री • मूल्यांकन • कानूनी प्रावधान एवं सुविधाएँ • दिव्यांग बच्चे एवं खेलकूद • पुनर्वास • सारांश • अभ्यास कार्य • परियोजना कार्य	**66–84**
इकाई–8	**जेण्डर : अवधारणा, महिला, पुरूष एवं तृतीय लिंग –** • सामान्य परिचय • इकाई के उद्देश्य • जेण्डर का अर्थ • जेण्डरीकरण • सेक्स और जेण्डर में अन्तर • सामाजिक लिंग–प्राकृतिक लिंग • पहनावा, गुण व विशेषताएँ • भूमिकाएँ एवं जिम्मेदारियाँ • लैंगिक अन्तर एवं जैविकीय सत्य • औरतों के बारे में फैलाई गई अफवाहें • सामाजिकरण एवं सालैंगीकरण • सामाजिककरण की प्रक्रिया • तृतीय लिंग अथवा ट्रांसजेण्डर	**85–103**

विषय–सूची

इकाई	अध्याय	पेज न.
	• सारांश • अभ्यास कार्य • परियोजना कार्य • संदर्भ सूची	
इकाई–9	**मातृ एवं पितृ सत्तात्मक समाज में चुनौतियाँ –** • सामान्य परिचय • इकाई के उद्देश्य • पितृसत्ता क्या हैं? • पितृसत्ता की पहचान • पितृसत्ता व्यवस्था में नियंत्रण के क्षेत्र • पितृसत्तात्मक व्यवस्था और विभिन्न संस्थाएँ • मातृसत्तात्मक व्यवस्था • सारांश • अभ्यास कार्य • परियोजना कार्य • संदर्भ सूची	104–110
इकाई–10	**संसाधन, प्रोत्साहन, योजनाएँ व अनुशंसाएँ –** • सामान्य परिचय • इकाई के उद्देश्य • बालिकाओं की शिक्षा हेतु किए गए योगदान • प्रथम स्कूल प्रथम अध्यापिका • शिक्षा एक हथियार • सारांश • अभ्यास कार्य • परियोजना कार्य • संदर्भ सूची	111–116

इकाई – 1

समाज में विविधता और समानता

(Diversity and Equality in Society)

सामान्य परिचय (Introduction)

''भिन्नताएँ, विविधताओं को जन्म देती हैं, एक जुटता विविधिता को संरक्षित करती है।''

रविन्द्रनाथ टैगोर

NCF - 2005 एवं RTE - 2009 आने के बाद से कक्षाओं और विद्यालयों में विविधता को एक महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में अपनाया जा रहा है। विद्यालयों में विविधता के उचित प्रबंधन के द्वारा समावेशन को प्रोत्साहित करने तथा गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने आदि के अवसरों में बढ़ोतरी हुई है।

इकाई के उद्देश्य (Objectives of the unit)

1. विविधता का अर्थ समझना।
2. अपने आसपास/कक्षा/समाज में विद्यमान विविधता को पहचानना।
3. उपरोक्त में विद्यमान विविधताओं को संसाधन के रूप में देखना। विशेषकर कक्षा में बच्चों के बीच विद्यमान विविधता को संसाधन के रूप में देख पाना।
4. यह समझ पाना कि विविधता हमें समृद्ध करती है।
5. धर्म, रहन–सहन, खानपान, भाषा, त्यौहार में भिन्नता के कारण उपलब्ध विविधता को देखना–समझना।
6. गैर बराबरी अर्थात असमानता और विविधता के मध्य फर्क को समझना।

विविधता से आशय (Meaning of Diversity)

अपनी कक्षा में या अपने चारों तरफ नजर दौड़ाइए। क्या कोई है जो बिलकुल आपकी तरह दिखते हों? इस पाठ में आप पढ़ेंगे कि लोग एक दूसरों से कई मामलों में भिन्न होते हैं। वे न केवल अलग दिखते हैं, बल्कि वे अलग–अलग क्षेत्रों से भी आते हैं। उनके धर्म, रहन–सहन, खान–पान, भाषा, त्यौहार आदि भी भिन्न होते हैं। ये भिन्नताएँ हमारे जीवन को कई तरह से रोचक बनाती हैं।

इन भिन्नताओं के कारण ही भारत में विविधता है। विविधता या अनेकता हमारे जीवन को किस तरह बेहतर बनाती है ? भारत इतनी विविधताओं वाला देश कैसे बना? क्या सभी तरह की भिन्नताएँ विविधता का ही भाग होती हैं? चलिए, कुछ उत्तर पाने के लिए हम इस पाठ को पढ़ते हैं।

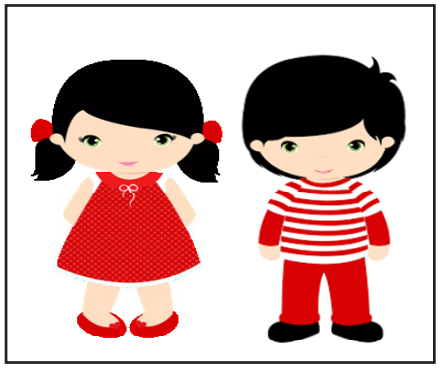

चित्र1.1

आप जैसे तीन शिक्षक छात्राध्यापकों ने ऊपर दिया गया चित्र 1.1 बनाया है।

दिए गए खाली बॉक्स में आप अपना चित्र बनाइए। क्या आपका चित्र दिए गए चित्र जैसा ही है? हो सकता है कि आपका चित्र इस चित्र से बहुत भिन्न हो। ऐसा इसीलिए है क्योंकि हम सबका चित्रकारी करने का अपना–अपना एक तरीका होता है। जिस तरह यह हमारी चित्रकारी में भिन्नता है, उसी तरह हमारे रूप–रंग, खान–पान आदि में भी भिन्नता है।

नीचे दिए प्रश्नों के उत्तर दीजिए और अपने किसी साथी से यह पता कीजिए कि आप और आपके साथी के जवाब एक जैसे हैं। शायद नहीं।

अपने बारे में निम्नलिखित जानकारी दीजिए :–

- बाहर जाते समय कपड़े ..... जो मुझे पहनना पसंद है।
- मेरे द्वारा बोली जाने वाली भाषा ..... है।
- मेरा पसंदीदा खेल ..... है।
- मुझे ..... के बारे में किताबें पढ़ना पसंद है।

इनमें से कुछ जवाब आपके जवाबों से मिलते–जुलते होंगे। आप जिस कक्षा का अध्यापन करते हैं वहां के विद्यार्थी कौन–कौन सी भाषाएँ/बोली बोलते हैं? नीचे लिखिए–

_____

_____

अब तक आपको यह अंदाजा हो गया होगा कि कई मामलों में आप उनसे बिलकुल अलग हैं।

विविधता पहचान के उद्देश्य

- मानव की विभिन्नता में उनके मूल्यों के योगदान का सम्मान।
- सभी शिक्षकों एवं विद्यार्थियों की पूरी क्षमता को बढ़ावा देने की समावेशन संस्कृति का विकास।

• दोस्ती करना

क्या ऐसे इंसान से दोस्ती करना आपके लिए आसान होगा जो आपसे बहुत भिन्न है? नीचे दी गई कहानी पढ़ें और सोचें।

मैंने इसे एक मजाक की तरह लिया। मजाक जो कि फटे–पुराने कपड़े पहने उस छोटे–से लड़के के लिए था, जो दिल्ली के जनपथ मार्ग के भीड़–भाड़ वाले चौराहे की लालबत्ती पर अखबार बेचता था। मैं जब भी वहां से साइकिल से गुजरता, वह अंग्रेजी का अखबार हाथ में लहराते हुए मेरे पीछे भागता और उस दिन की सुर्खियों को हिन्दी–अंग्रेजी के मिले–जुले शब्दों में चिल्लाकर सुनाता रहता। इस बार मैं पटरी के सहारे रुका और मैंने उससे हिन्दी का अखबार मांगा। उसका मुंह खुला का खुला रह गया। उसने पूछा, "मतलब, आपको हिन्दी आती है?"

"बिलकुल", मैंने अखबार के पैसे देते हुए कहा। "क्यों? तुमने क्या सोचा?" वह रूका। "पर आप लगते तो...अंग्रेज हैं," वह बोला।

"मतलब कि आप हिन्दी पढ़ भी सकते हैं?"

"हाँ, बिलकुल पढ़ सकता हूँ।" इस बार मैं थोड़ा अधीर होते हुए बोला। "मैं हिन्दी बोल सकता हूं, पढ़ सकता हूँ और लिख भी सकता हूँ। मैंने स्कूल में दूसरे ''सब्जेक्ट' (विषय) के साथ हिन्दी पढ़ी है।''

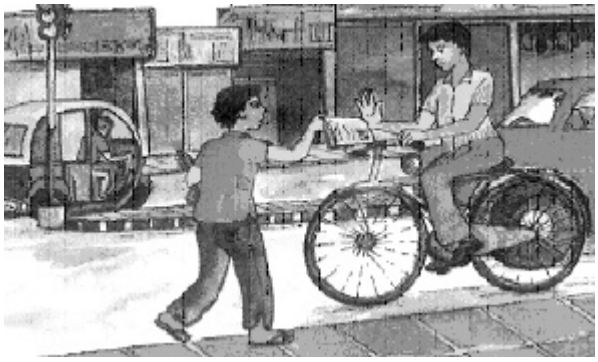

चित्र 1.2

"सब्जेक्ट" उसने पूछा। अब जो कभी स्कूल नहीं गया उसको मैं क्या समझाता कि सब्जेक्ट क्या होता है? "वह कुछ होता है...." मैंने शुरू किया ही था कि बत्ती हरी हो गई और मेरे पीछे गाड़ियों के हॉर्न का शोर सौ गुना बढ़ गया। मैंने भी अपने आप को ट्रैफिक के साथ आगे बढ़ने दिया।

अगले दिन वह फिर से वहां पर था। वह मुस्कुरा रहा था और मेरी तरफ हिन्दी का अखबार बढ़ाते हुए उसने कहा, "भैया, आपका अखबार। अब बताइए ये सब्जेक्ट क्या चीज है?" अंग्रेजी का यह शब्द उसकी जबान पर अजीब लग रहा था। ऐसा लगा मानो अंग्रेजी में 'सब्जेक्ट' शब्द का जो दूसरा अर्थ है 'प्रजा', उस अर्थ में वह उसका प्रयोग कर रहा है।

"ओह, यह कुछ पढ़ाई–लिखाई से संबंधित है, "मैंने कहा। उसके बाद चूँकि बत्ती लाल हो गई थी सो मैंने पूछा, "तुम कभी स्कूल गये हो?" "कभी नहीं," उसने जवाब दिया। फिर बात बढ़ाते हुए उसने गर्व से कहा, "मैं जब इतना ऊंचा था तभी से मैंने काम करना शुरू कर दिया था।" उसने मेरी साइकिल की गद्दी के बराबर अपने आप को नापा। "पहले मेरी माँ मेरे साथ आती थी, लेकिन अब मैं अकेले ही कर लेता हूँ।"

"अभी तुम्हारी माँ कहाँ है?" मैंने पूछा। पर तब तक बत्ती हरी हो गई और मैं चल पड़ा। मैंने उसे अपने पीछे कहीं से चिल्लाते हुए सुना, "वह मेरठ में है और उसके साथ....''.बाकी ट्रेफिक के शोरगुल में डूब गया। "मेरा नाम समीर है," उसने अगले दिन कहा और बड़े शर्माते हुए मेरा नाम पूछा, "आपका नाम?" यह तो बड़े आश्चर्य की बात थी। मेरी साइकिल डगमगाई। "मेरा नाम भी समीर है", मैंने बताया। "क्या", उसकी आँखें एकदम से चमक उठीं। "हाँ", मैंने मुस्कराते हुए कहा। "तुम्हें पता है समीर का अर्थ है – हवा, पवन। और पवनपुत्र कौन हैं जानते हो न ?....हनुमान।"

"तो अब तो आप समीर एक और मैं समीर दो," उसने खूब खुश होते हुए कहा। "हाँ ठीक है" मैंने जवाब दिया और अपना हाथ आगे बढ़ाया। "हाथ मिलाओ समीर दो।"

उसका छोटा–सा हाथ मेरे हाथ में एक नन्ही चिड़िया की तरह समा गया। मैं साइकिल चलाकर आगे बढ़ चुका था, पर उसके हाथ की गर्माहट अब तक महसूस कर रहा था।

अगले दिन उसके चेहरे पर उसकी चिरपरिचित मुस्कान नहीं थी। "मेरठ में बड़ी गड़बड़ हो गई है," उसने कहा। "वहाँ दंगों में बहुत लोग मारे गए हैं। "मैंने मुख्य अखबार की सुर्खियों की तरफ देखा। बड़े–बड़े अक्षरों में लिखा था– सांप्रदायिक दंगे। "लेकिन समीर"...मैंने शुरू किया ही था "मैं मुस्लिम समीर हूँ" वह बोल पड़ा। "और मेरे सभी लोग मेरठ में हैं। उसकी आँखें भर आई। जब मैंने उसके कंधे पर हाथ रखा, उसने नजर ऊपर नहीं उठाई।

अगले दिन वह चौराहे पर नहीं था न उसके अगले दिन वह दिखा और न आगे फिर कभी। अंग्रेजी या हिन्दी का कोई अखबार मुझे नहीं बता सकता कि मेरा समीर दो आखिर कहां गया।

(पोइली सेनगुप्ता की कहानी द लाइट्स चेंज्ड (The Lights changed) पर आधारित)

कुछ प्रश्न

1. समीर एक और समीर दो में कोई तीन अंतर लिखिए जिसे आप विविधता के रुप में देखते हैं–

_____

_____

2. क्या ये अंतर उन्हें दोस्त बनने से रोक पाए? नहीं तो क्यों?

_____

_____

3. आपके आसपास/कक्षा में एक ही नाम वाले व्यक्ति/विद्यार्थी हैं तो उनमें आप कौन सी विविधताएँ पाते हैं।

_____

_____

जहाँ समीर एक को अंग्रेजी ज्यादा अच्छी आती है, वहीं समीर दो हिन्दी बोलता है। हालॉकि दोनों की भाषाएँ अलग हैं, फिर भी दोनों एक–दूसरे से बात कर पाए। उन्होंने उसके लिए प्रयास किया क्योंकि उनके लिए बात करना महत्वपूर्ण था। समीर एक और समीर दो की धार्मिक व सांस्कृतिक पृष्ठभूमियाँ अलग हैं। जहाँ समीर एक हिन्दू है, वहीं समीर दो मुसलमान है। दोस्ती हुई क्योंकि दोनों दोस्ती करना चाहते थे। **खान–पान, पहनावा, धर्म, भाषा की ये भिन्नताएँ विविधता के पहलू हैं।**

अपनी विविध धार्मिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों के अलावा समीर एक और समीर दो कई अन्य मामलों में भी एक–दूसरे से अलग थे। उदाहरण के लिए समीर एक ने स्कूल में पढ़ाई की थी जबकि समीर दो अखबार बेचता था। समीर दो को स्कूल जाने का मौका मिला ही नहीं। आपने संभवतः अपने इलाके में ऐसे कई लोगों को देखा होगा जो गरीब हैं और जिनकी भोजन, घर और कपड़े की जरूरतें भी पूरी नहीं हो

पातीं। यह फर्क उस फर्क से अलग है, जिसके बारे में हमने पहले पढ़ा। यह विविधता का रूप नहीं है, बल्कि **गैर–बराबरी का रूप है।**

गैर–बराबरी का मतलब है कि कुछ लोगों के पास न अवसर हैं और न ही जमीन या पैसे जैसे संसाधन, जो दूसरों के पास हैं। यह लोगों के बीच मौजूद असमानता यानी गैर–बराबरी है।

• जाति व्यवस्था–असमानता का एक अन्य रुप (Caste system-another form of inequality)

जाति व्यवस्था असमानता का एक और उदाहरण है। इस व्यवस्था में समाज को अलग–अलग समूहों में बाँटा गया। इस बँटवारे का आधार था कि लोग किस–किस तरह का काम करते हैं। लोग जिस जाति में पैदा होते थे, उसे बदल नहीं सकते थे। उदाहरण के लिए अगर आप कुम्हार के घर में पैदा हो गईं तो आपकी जाति कुम्हार ही होती है और आप बस वही बन सकते थे। कोई व्यक्ति जाति से जुड़ा अपना पेशा भी नहीं बदल सकता था, इसलिए उस ज्ञान के अलावा किसी अन्य को हासिल करना जरूरी नहीं समझा जाता था। इससे गैर–बराबरी पैदा हुई ।

कुछ प्रश्न

1. समीर दो स्कूल क्यों नहीं जाता था? आपकी राय में अगर वह स्कूल जाना चाहता तो क्या जा पाता?
2. क्या यह सही है कि कुछ बच्चे स्कूल जा पाते हैं और कुछ जा ही नहीं पाते? इस पर अपनी राय लिखिए।
3. सूची बनाइए कि आपने भारत के अलग–अलग प्रांतों के कौन–कौन से व्यंजन खाए हैं।
4. अपनी मातृभाषा के अलावा उन भाषाओं की सूची बनाइए जिनके आप कुछ शब्द भी जानते हैं।
5. उन त्यौहारों की सूची बनाइए जो हो सकता है कि समीर एक और समीर दो मनाते हों।

   समीर एक :.....

   समीर दो :.....
6. क्या आप ऐसी किसी परिस्थिति के बारे में सोच सकते हैं जब आपने उससे दोस्ती की जो आप से बहुत अलग हो? इसका वर्णन एक कहानी के रूप में कीजिए।

असमानता एक दृष्टिकोण है, जिसमें धर्म, आस्था, भाषा, क्षमता आदि के आधार पर बनें समूहों में परस्पर ऊँच–नीच की भावना दिखायी देती है, जिसके कारण जाति, धर्म, लिंग परम्पराओं आदि के आधार पर समाज में स्पष्ट विभेदीकरण दिखायी देता है जो अनुचित है।

संविधान की धारा 14 से 18 के मध्य समानता के अधिकारों की बात की गयी है। अनुच्छेद 15 में सार्वजनिक जीवन मे किसी भी प्रकार के भेदभाव का प्रतिरोध किया गया है।

• भारत में विविधता **(Diversity in India)**

भारत विविधताओं का देश है। हम विभिन्न भाषाएँ बोलते हैं। विभिन्न प्रकार का खाना खाते हैं, अलग–अलग त्यौहार मनाते हैं और भिन्न–भिन्न धर्मों का पालन करते हैं। लेकिन गहराई से सोचें तो वास्तव में हम एक ही तरह की चीजें करते हैं केवल हमारे करने के तरीके अलग हैं।

भारतीय संस्कृति की विविधताओं का अनेक लेखकों ने वर्णन किया है। नोबल पुरस्कार विजेता डॉ. अमर्त्य सेन ने कहा है कि ''भारतीय संस्कृति परम्पराओं एवं विविधता का सर्वोत्तम उदाहरण है। यह भारत की अमूर्त विरासत है।'' इस विरासत की सर्वोत्तम व्याख्या ICH-2003 (Indian Cultural Heritage-2003 में यूनेस्को द्वारा की गयी है जिसमें व्यापक स्तर पर संपूर्ण विश्व के विविध अनुभवों एवं सोचों जैसे – पद्धतियो, प्रतिरूपणों, अभिव्यक्तियों ज्ञान, कौशल, उद्देश्यों, वास्तुशिल्पों तथा उससे संबद्ध सांस्कृतिक परम्पराओं का उल्लेख है। जो कुछ मामलों में समुदायों, समूहों, व्यक्तियों द्वारा सांस्कृतिक विरासत के रूप में स्थापित है।

• हम विविधता को कैसे समझें?

करीब दो–सवा दो सौ वर्ष पहले जब रेल, हवाई जहाज, बस और कार हमारे जीवन का हिस्सा नहीं थे, तब भी लोग संसार के एक भाग से दूसरे भाग की यात्रा करते थे। वे पानी के जहाज में, घोड़ों या ऊँट पर बैठकर जाते या फिर पैदल चलकर।

अक्सर ये यात्राएँ खेती और बसने के लिए नई जमीन की तलाश में या फिर व्यापार के लिए की जाती थी। चूँकि यात्रा में बहुत समय लगता था, इसलिए लोग नई जगह पर अक्सर काफी लंबे समय तक ठहर जाते थे। इसके अलावा सूखे और अकाल के कारण भी कई बार लोग अपना घर–बार छोड़ देते थे। उन्हें जब पेट भर खाना तक नहीं मिलता था तो वे नई जगह जा कर बस जाते थे। कुछ लोग काम की तलाश में और कुछ युद्ध के कारण घर छोड़ देते थे।

लोग जब नई जगह में बसना शुरू करते थे तो उनके रहन–सहन में थोड़ा बदलाव आ जाता था। कुछ चीजें वे नई जगह की अपना लेते थे और और कुछ चीजों में वे पुराने ढर्रे पर ही चलते रहते थे। इस तरह उनकी भाषा, भोजन, संगीत, धर्म आदि में नए और पुराने का मिश्रण होता रहता था। उनकी संस्कृति और नई जगह की संस्कृति में आदान–प्रदान होता और धीरे–धीरे एक मिश्रित यानी मिली–जुली संस्कृति उभरती।

अगर अलग–अलग क्षेत्रों का इतिहास देखें तो हमें पता चलेगा कि किस तरह विभिन्न सांस्कृतिक प्रभावों ने वहाँ के जीवन और संस्कृति को आकार देने में योगदान किया है। इस तरह से कई क्षेत्र अपने विशिष्ट इतिहास के कारण विविधता संपन्न हो जाते हैं।

• भौगोलिक स्थितियाँ–विविधता का एक कारक (Geographical status- One factor of Diversity)

लोग अलग–अलग तरह की भौगोलिक स्थितियों में किस प्रकार सामंजस्य बैठाते हैं, उससे भी विविधता उत्पन्न होती है। उदाहरण के लिए समुद्र के पास रहने में और पहाड़ी इलाकों में रहने में बड़ा फर्क है। न केवल वहाँ के लोगों के कपड़ों और खान–पान की आदतों में फर्क होगा, बल्कि जिस तरह का काम वे करेंगे, वे भी अलग होंगे। शहरों में अक्सर लोग यह भूल जाते हैं कि उनका जीवन उनके भौतिक वातावरण से किस तरह गहराई से जुड़ा हुआ है। ऐसा इसलिए कि शहरों में लोग विरले ही अपनी सब्जी या अनाज उगाते हैं। वे इन चीजों के लिए बाजार पर ही निर्भर रहते हैं।

आइए, भारत के दो भागों लद्दाख और केरल के उदाहरण के जरिए यह समझने की कोशिश करें कि किसी क्षेत्र की विविधता पर उसके ऐतिहासिक और भौगोलिक कारकों का क्या असर पड़ता है।

कुछ प्रश्न

एटलस में भारत का नक्शा देखिए और उसमें ढूंढ़िए कि ये दोनों क्षेत्र–लद्दाख तथा केरल कहाँ पर हैं। इन दोनों क्षेत्रों की भौगोलिक स्थितियाँ वहाँ के भोजन, कपड़े और व्यवसाय/पेशे को कैसे प्रभावित करती हैं? उनकी सूची बनाइए।

लद्दाख जम्मू और कश्मीर के पूर्वी हिस्से में पहाड़ियों में बसा एक रेगिस्तानी इलाका है। यहाँ पर बहुत ही कम खेती संभव है, क्योंकि इस क्षेत्र में बारिश बिलकुल नहीं होती और यह इलाका हर वर्ष काफी लंबे समय तक बर्फ से ढँका रहता है। इस क्षेत्र में बहुत ही कम पेड़ उग पाते हैं। पीने के पानी के लिए लोग गर्मी के महीनों में पिघलने वाली बर्फ पर निर्भर रहते हैं।

यहाँ के लोग एक खास किस्म की भेड़ पालते हैं जिससे पश्मीना ऊन मिलता है। यह ऊन कीमती है, इसीलिए पश्मीना शाल बड़ी महँगी होती है। लद्दाख के लोग बड़ी सावधानी से इस ऊन को इकट्ठा करके कश्मीर के व्यापारियों को बेच देते हैं। मुख्यतः कश्मीर में ही पश्मीना शालें बुनी जाती हैं।

यहाँ के लोग दूध से बने पदार्थ, जैसे मक्खन, चीज (खास तरह का छेना) एवं मांस, खाते हैं। हर एक परिवार के पास कुछ गाय, बकरी और याक होती है।

रेगिस्तान होने का यह मतलब नहीं कि व्यापारी यहाँ आने के लिए आकर्षित नहीं हुए। लद्दाख तो व्यापार के लिए एक अच्छा रास्ता माना गया क्योंकि यहॉ कई घाटियाँ हैं जिनसे गुज़र कर मध्य एशिया के काफ़िले उस इलाके में पहुँचते थे जिसे आज तिब्बत कहते हैं। ये काफ़िले अपने साथ मसाले, कच्चा रेशम, दरियाँ, आदि लेकर चलते थे।

लद्दाख के रास्ते ही बौद्ध धर्म तिब्बत पहुँचा। लद्दाख को छोटा तिब्बत भी कहते हैं। करीब चार सौ साल पहले यहाँ पर लोगों का इस्लाम धर्म से परिचय हुआ और अब यहाँ अच्छी–खासी संख्या में मुसलमान रहते हैं। लद्दाख में गानों और कविताओं का बहुत ही समृद्ध मौखिक संग्रह है। तिब्बत का ग्रंथ ''केसर सागा'' लद्दाख में काफी प्रचलित है। उसके स्थानीय रुप को मुसलमान और बौद्ध दोनों ही लोग गाते हैं और उस पर नाटक खेलते हैं।

केरल भारत के दक्षिणी–पश्चिमी कोने में बसा हुआ राज्य है। यह एक तरफ समुद्र से घिरा हुआ है और दूसरी तरफ पहाड़ियों से। इन पहाड़ियों पर विविध प्रकार के मसाले जैसे कालीमिर्च, लौंग, इलायची आदि उगाए जाते हैं। इन मसालों के कारण यह क्षेत्र व्यापारियों के लिए बहुत ही आकर्षक बना।

सबसे पहले अरबी एवं यहूदी व्यापारी केरल आए। ऐसा माना जाता है कि ईसा मसीह के धर्मदूत संत थॉमस लगभग दो हजार साल पहले यहाँ आए। भारत में ईसाई धर्म लाने का श्रेय उन्हीं को जाता है। अरब से कई व्यापारी यहाँ आकर बस गए। इब्नबतूता ने, जो करीब सात सौ साल पहले यहाँ आए, अपने यात्रा वृत्तांत में मुसलमानों के जीवन का विवरण देते हुए लिखा है कि मुसलमान समुदाय की यहाँ बड़ी इज्जत थी।

वास्कोडिगामा पानी के जहाज से यहाँ पहुँचे तो पुर्तगालियों ने यूरोप से भारत तक का समुद्री रास्ता जाना।

इन सभी ऐतिहासिक प्रभावों के कारण केरल के लोग विभिन्न धर्मों का पालन करते हैं जिनमें इस्लाम, ईसाई, हिन्दू एवं बौद्ध धर्म शामिल हैं।

चित्र 1.3

चीन के व्यापारी भी केरल आए। यहाँ पर मछली पकड़ने के लिए जो जाल इस्तेमाल किये जाते हैं वे चीनी जालों से हू–ब–हू मिलते हैं और उन्हें ''चीना–वला'' कहते हैं।

इसमें 'चीन' शब्द इस बात की ओर इशारा करता है कि उसकी उत्पत्ति कहाँ हुई होगी। केरल की उपजाऊ जमीन और जलवायु चावल की खेती के लिए बहुत उपयुक्त है और वहाँ के लोग मछली, सब्जी और चावल खाते हैं।

चित्र1.4

जहाँ केरल और लद्दाख की भौगौलिक स्थिति एक–दूसरे से बिलकुल अलग है, वहीं हम यह भी देखते हैं कि दोनों क्षेत्रों के इतिहास में एक ही प्रकार के सांस्कृतिक प्रभाव है। दोनों ही क्षेत्रों को चीन और अरब से आने वाले व्यापारियों ने प्रभावित किया। जहाँ केरल की भौगोलिक स्थिति ने मसालों की खेती संभव बनाई, वही लद्दाख की विशेष भौगोलिक स्थिति और ऊन ने व्यापारियों को अपनी ओर खींचा। इस तरह पता चलता है कि किसी भी क्षेत्र के सांस्कृतिक जीवन का उसके इतिहास और भूगोल से प्रायः गहरा रिश्ता होता है।

विविध संस्कृतियों का प्रभाव केवल बीते हुए कल की बात नहीं है। हमारे वर्तमान जीवन का आधार ही काम के लिए एक जगह से दूसरी जगह जाना है। हर एक कदम के साथ हमारे सांस्कृतिक रीति–रिवाज और जीने का तरीका धीरे–धीरे उस नए क्षेत्र का हिस्सा बन जाते हैं जहाँ हम पहुँचते हैं। ठीक इसी तरह अपने पड़ोस में हम अलग–अलग समुदायों के लोगों के साथ रहते हैं। अपने रोजमर्रा के जीवन में हम मिल–जुलकर काम करते हैं और एक–दूसरे के रीति–रिवाज और परंपराओं में घुलमिल जाते हैं।

चित्र 1.5

कुछ प्रश्न

1. केरल और लद्दाख के लोगों में किस–किस तरह की भिन्नताएँ एवं समानताएँ हैं? और क्यों हैं?
2. भारत के विभिन्न क्षेत्रों में पाए जाने वाले खानपान की भिन्नताओं को चिन्हित कर भिन्नता के कोई दो भौगोलिक कारणों पर विचार कीजिए।

• विविधता में एकता (Unity in Diversity)

भारत की विविधता या अनेकता को उसकी ताकत का स्रोत माना गया है। जब अंग्रेजों का भारत पर राज था तो विभिन्न धर्म, भाषा और क्षेत्र की महिलाओं और पुरुषों ने अंग्रेजों के खिलाफ मिलकर लड़ाई लड़ी थी। भारत के स्वतंत्रता संग्राम में अलग–अलग परिवेशों के लोग शामिल थे। उन्होंने एकजुट होकर आंदोलन किया, इकट्ठे जेल गए। और अंग्रेजों ने सोचा था कि वे भारत के लोगों में फूट डाल सकते हैं क्योंकि उनमें काफी विविधताएँ हैं और इस तरह उनका राज चलता रहेगा। मगर लोगों ने दिखला दिया कि वे एक–दूसरे से चाहे कितने ही भिन्न हों, अंग्रेजों के खिलाफ लड़ी जाने वाली लड़ाई में वे सब एक थे।

यह गीत जलियांवाला बाग हत्याकांड के बाद अमृतसर में गाया गया था। इस हत्याकांड में एक ब्रिटिश जनरल ने उन शांतिप्रिय, निहत्थे लोगों पर खुले आम गोलियाँ चलवा दी थीं जो बाग में इकट्ठे होकर सभा कर रहे थे। महिला–पुरुष,हिन्दू–मुसलमान एवं सिख कितने सारे लोग थे, जो अंग्रेजों की पक्षपातपूर्ण नीति का विरोध करने के लिए जमा हुए थे। उसमें से बहुत लोगों की जानें गईं और उससे भी ज्यादा घायल हुए। यह गीत उन्हीं शहीदों की याद में गाया गया था।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान उभरे गीत और चिन्ह विविधता के प्रति हमारा विश्वास बनाए रखते हैं। क्या

दिन खून के हमारे, प्यारे न भूल जाना
खुशियों में अपनी हम पर, आंसू बहा के जाना
सैयाद ने हमारे, चुन–चुन के फूल तोड़े
वीरान इस चमन में, कोई गुल खिला के जाना
दिन खून के हमारे...
गोली खा के सोये, जलियां बाग में हम
सूनी पड़ी कब्र पर, दिया जला के जाना
दिन खून के हमारे...

हिन्दओं मुस्लिमों की, होती है आज होली
बहते हैं एक रंग में, दामन भीगो के जाना
दिन खून के हमारे...
कुछ जेल में पड़े हैं, कुछ कब्र में गड़े हैं
दो बूंद आंसू उनपर, प्यारे बहा के जाना
दिन खून के हमारे...

– भारतीय जन नाट्य संघ (इप्टा)

आप भारतीय झण्डे की कहानी जानती हैं? स्वतंत्रता संग्राम के दौरान ही भारत के झण्डे की परिकल्पना की गई थी। इस झण्डे को सारे भारत में लोगों ने अंग्रेजों के खिलाफ इस्तेमाल किया था।

जवाहर लाल नेहरू ने अपनी किताब 'भारत की खोज' में लिखा कि भारतीय एकता कोई बाहर से थोपी हुई चीज नहीं है, बल्कि ''यह बहुत ही गहरी है जिसके अंदर अलग–अलग तरह के विश्वास और प्रथाओं को स्वीकार करने की भावना है। इसमें विविधता को पहचाना और प्रोत्साहित किया जाता है।'' यह नेहरू ही थे जिन्होंने भारत की विविधता का वर्णन करते हुए 'अनेकता में एकता' का विचार हमें दिया।

आइए, समानता पर भी चर्चा करें

छात्राध्यापकों के साथ प्रत्येक बिन्दू पर विस्तार से चर्चा कर समानता को समझाएं। आइए कक्षागत विविधताओं के बावजूद समानता को चिन्हित करें –

- पाठ्यक्रम की समानता
- गणवेश की समानता
- नियमों की समानता/समय सारिणी
- सहभागिता के अवसरों की समानता
- अभिव्यक्ति की समानता
- मूल्यांकन की समानता
- अध्ययन–अध्यापन की व्यवस्था की समानता
- वातावरण की समानता (शैक्षिक–भौतिक)

रविन्द्रनाथ टैगोर द्वारा रचित हमारा राष्ट्रगान भी भारतीय एकता की ही एक अभिव्यक्ति है। राष्ट्रगान किस तरह से एकता का वर्णन करता है, इसे अपने शब्दों में लिखिए।

• पाठ का सारांश

- विद्यालयों में विविधता के उचित प्रबंधन के द्वारा समावेशन को प्रोत्साहित करने तथा गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने आदि के अवसरों में बढ़ोतरी हुई है।
- विविधता या अनेकता हमारे जीवन को कई तरह से रोचक और बेहतर बनाती है।
- खान–पान, पहनावा, धर्म, भाषा आदि की भिन्नताएँ विविधता के ही पहलू हैं।
- गैर–बराबरी का मतलब है कि कुछ लोगों के पास अवसरों और संसाधनों आदि की कमी।
- असमानता एक दृष्टिकोण है जिसके कारण समाज में समूहीकरण एवं विभेदीकरण दिखायी देता है, जो अनुचित है।
- अपने विशिष्ट सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक कारणों से भी कई क्षेत्र विविधता संपन्न हो जाते हैं।
- भारतीय एकता बाहर से धोपी गयी कोई वस्तु नहीं वरन् अनेकता में एकता ही है।
- महिला पुरुष, लड़का–लड़की, के रुप में लैंगिक विविधता, रीति–रिवाजों में भिन्नता, शारीरिक क्षमताओं में भिन्नता आदि विविधता के अनेक रुप हैं।
- उपरोक्त में से अनेक विविधता हमारे आसपास विद्यमान होना स्वाभाविक है।
- इन विविधताओं को हमें स्वाभाविक रुप में देखना होगा।
- विविधता, असमानता एवं भेदभाव तीनों अलग–अलग हैं।

• अभ्यास कार्य –

1. अपने इलाके में मनाए जाने वाले विभिन्न त्यौहारों की सूची बनाइए। इनमें से कौन–से त्यौहार सभी समुदायों द्वारा मनाए जाते हैं?
2. आपके विचार में भारत की समृद्ध एवं विविध विरासत आपके जीवन को कैसे बेहतर बनाती है।
3. आपके अनुसार 'अनेकता में एकता' का विचार भारत के लिए कैसे उपयुक्त है? 'भारत की खोज' किताब से लिए गए इस वाक्यांश में नेहरू भारत की एकता के बारे में क्या कहना चाह रहे हैं?
4. जलियावाला बाग हत्याकांड के ऊपर लिखे गए गाने की उस पंक्ति को चुनिए जो आपके अनुसार भारत की एकता को निश्चित रूप से झलकाती है।
5. लद्दाख एवं केरल की तरह भारत का कोई एक क्षेत्र चुनिए और अध्ययन कीजिए कि कैसे उस क्षेत्र की विविधता के ऐतिहासिक एवं भौगोलिक कारक आपस में जुड़े हुए हैं?

• संदर्भ ग्रंथ

- सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन–1 कक्षा 6 सामाजिक विज्ञान की पुस्तक, एन.सी.ई.आर.टी प्रकाशन, 2007.
- भारतीय समाज, श्यामाचरण दुबे, अनुवाद–अंदना मिश्र, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली।

♦♦♦♦♦♦♦

इकाई – 2
विविधता और भेदभाव
(Diversity and Discrimination)

सामान्य परिचय (General Introduction)

भारतीय सभ्यता ने हमेशा विविधता का सम्मान किया है। फिर चाहे वो मन की हो, मस्तिष्क की या बौद्धिकता की हो। भारतीय संस्कृति ने अलग–अलग विचार और धर्मों को पनपने की पूरी स्वतंत्रता दी है।

– श्री अरविन्द

लोग अलग–अलग रुचि, क्षमता विचार आदि के होते हैं। ऐसी विभिन्नता के कारण कुछ लोगों को अलग–थलग किया जाता है, सामान्य सुविधा व अवसरों से वंचित रखा जाता है। अर्थात् भेदभाव किया जाता है, या उनसे असमान व्यवहार किया जाता है। इस पठन सामग्री में इसी विषय पर शुरुआती चर्चा है। कई बार जो लोग दूसरों से अलग होते हैं उन्हें चिढ़ाया जाता है, उनका मज़ाक उड़ाया जाता है या फिर उन्हें कई गतिविधियों या समूहों में शामिल नहीं किया जाता। अगर हमारे दोस्त या दूसरे लोग हमारे साथ ऐसा व्यवहार करें तो हमें दुख होता है, गुस्सा आता है और हम असहाय महसूस करते हैं। क्या आपने कभी सोचा है कि ऐसा क्यों होता है?

इस पाठ में हम यह समझने की कोशिश करेंगे कि ऐसे अनुभव हमारे समाज और हमारे आस–पास मौजूद असमानताओं से कैसे जुड़े हुए हैं।

इकाई के उद्देश्य (Objectives of the Unit)

1. हमारे आस–पास की विविधताओं को समझना।
2. पूर्वाग्रह को समझना।
3. रूढ़ीबद्ध धारणाएँ को समझकर, पूर्वाग्रह व रूढ़ीबद्ध धारणा के मध्य संबंध की समझ विकसित करा।
4. क्या लैंगिक भेदभाव के पीछे भी किसी प्रकार के पूर्वाग्रह हैं यह समझना एवं विविधता, पूर्वाग्रह तथा भेदभाव के मध्य संबंधों को समझना।

हम क्या हैं और हम कैसे हैं, यह कई चीज़ों पर निर्भर करता है। हम कैसे रहते हैं, कौन–सी भाषाएँ बोलते हैं, क्या खाते हैं, क्या पहनते हैं, कौन–से खेल खेलते हैं, कौन–से उत्सव मनाते हैं– इन सब पर हमारे रहने की जगह के भूगोल और उसके इतिहास का असर पड़ता है।

यह पठन सामग्री राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, द्वारा प्रकाशित कक्षा 6 की पाठ्यपुस्तक सामाजिक विज्ञान, सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन – 1, अध्याय 2 पृष्ठ क्र. 15 – 28 से ली गई है।

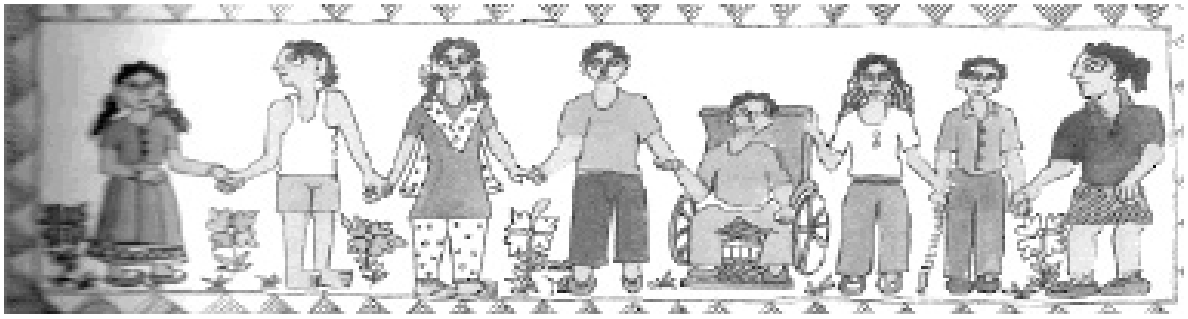

चित्र 2.1

अगर आप निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान दें तो भी यह अन्दाज़ा लग जाएगा कि भारत कितनी विविधताओं वाला देश है।

संसार में 8 मुख्य धर्म हैं। भारत में उन आठों धर्मों के अनुयायी यानी मानने वाले रहते हैं। यहाँ 1600 से ज़्यादा भाषाएँ बोली जाती हैं जो लोगों की मातृभाषाएँ हैं। यहाँ 100 से भी ज्यादा तरह के नृत्य किए जाते हैं।

यह विविधता हमेशा खुश होने का कारण नहीं बनती। हम उन लोगों के साथ सुरक्षित एवं आश्वस्त महसूस करते हैं जो हमारी तरह दिखते हैं, बात करते हैं, कपड़े पहनते हैं और हमारी तरह सोचते हैं। कभी–कभी जब हम ऐसे लोगों से मिलते हैं जो हमसे बहुत भिन्न होते हैं, तो हमें वे बहुत अजीब और अपरिचित लग सकते हैं। कई बार हम समझ ही नहीं पाते या जान ही नहीं पाते कि वे हमसे अलग क्यों हैं। लोग अपने से अलग दिखने वालों के बारे में खास तरह की राय बना लेते हैं।

• पूर्वाग्रह (Prejudice)

शहरी एवं ग्रामीण इलाकों में रहने वाले लोगों के बारे में नीचे कुछ कथन दिए गए हैं। ग्रामीण–शहरी लोगों के जिन कथनों से आप सहमत हैं, उन पर सही का निशान लगाइए :

ग्रामीण लोग

आधे से ज्यादा भारतीय गाँवों में रहते हैं।

ग्रामीण लोग अपने स्वास्थ्य को लेकर सतर्क नहीं होते। वे बहुत अंधविश्वासी होते हैं।

गांव के लोग बहुत पिछड़े हुए होते हैं और वे कृषि की आधुनिक प्रोद्योगिकी का इस्तेमाल करना पसंद नहीं करते हैं।

शहरी लोग

शहरी जीवन बड़ा आसान होता है। यहाँ के लोग बिगड़े हुए और आलसी होते हैं।

शहरों में लोग अपने परिवार के सदस्यों के साथ बहुत कम समय बिताते हैं।

शहरी लोग केवल पैसे की चिन्ता करते है, लोगों की नहीं।

शहरी लोगों पर भरोसा नहीं किया जा सकता, वे चालाक और भ्रष्ट होते हैं।

शहरों में रहना बहुत महंगा पड़ता है। लोगों की कमाई का एक बहुत बड़ा हिस्सा किराए और आने–जाने में खर्च हो जाता है।

ऊपर लिखे कुछ कथन ग्रामीण लोगों को गन्दे, अन्धविश्वासी एवं अज्ञानी की तरह देखते हैं, जबकि शहर में रहने वाले लोगों को आलसी, चालाक एवं सिर्फ पैसे से सरोकार रखने वालों की तरह देखते हैं।

जब हम किसी के बारे में पहले से कोई राय बना लेते हैं और उसे हम अपने दिमाग में बिठा लेते हैं तो वह पूर्वाग्रह का रूप ले लेती हैं। ज़्यादातर यह राय नकारात्मक होती है। जैसा कि ऊपर के कथनों में दिया गया है – लोगों को आलसी, चालाक या कंजूस मानना भी पूर्वाग्रह है।

जब हम यह सोचने लगते हैं कि किसी काम को करने का कोई एक तरीका ही सबसे अच्छा और सही है, तो हम अक्सर दूसरों की इज्ज़त नहीं कर पाते जो उसी काम को दूसरी तरह से करना पसन्द करते हैं। उदाहरण के लिए अगर हम सोचें कि अँग्रेज़ी सबसे अच्छी भाषा है और दूसरी भाषाएँ महत्वपूर्ण नहीं हैं, तो हम अन्य भाषाओं को बहुत नकारात्मक रूप से देखेंगे। परिणामस्वरूप हम उन लोगों की शायद इज्ज़त नहीं कर पाएँगे जो अँग्रेज़ी के अलावा अन्य भाषाएँ बोलते हैं।

हम कई चीज़ों के बारे में पूर्वाग्रही हो सकते हैं – लोगों के धार्मिक विश्वास, उनकी चमड़ी का रंग, जिस क्षेत्र से वे आते हैं, जिस तरह से वे बोलते हैं, जैसे कपड़े वे पहनते हैं इत्यादि।

उन कथनों को फिर से देखिए, जो आपको ग्रामीण एवं शहरी लोगों के बारे में सही लगे। क्या आपके दिमाग में ग्रामीण या शहरी लोगों को लेकर किसी भी प्रकार के पूर्वाग्रह हैं? क्या दूसरे लोगों के दिमाग में भी ये पूर्वाग्रह हैं? लोगों के दिमाग में ये पूर्वाग्रह क्यों होते हैं? जिन पूर्वाग्रहों को आपने अपने आस–पास महसूस किया है उनकी एक सूची बनाइए। ये पूर्वाग्रह लोगों के व्यवहार को कैसे प्रभावित करते हैं?

पूर्वाग्रह	व्यवहार को कैसे प्रभावित करते हैं?

अक्सर दूसरों के बारे में बनाए गए हमारे पूर्वाग्रह इतने पक्के होते हैं कि हम उनसे दोस्ती नहीं करना चाहते। इस वजह से कई बार हमारा व्यवहार ऐसा होता है कि हम उन्हें दुख पहुँचा देते हैं।

- **लड़के और लड़की में भेदभाव (Discrimination between boy and girl)**

समाज में लड़के और लड़कियों में कई तरह से भेदभाव किया जाता है। हम सभी इस भेदभाव से परिचित हैं। एक लड़का या लड़की होने का अर्थ क्या होता है? आपमें से कई लोग कहेंगे ''हम लड़के या लड़की की तरह जन्म लेते हैं। यह तो ऐसे ही होता है। इसमें सोचने वाली क्या बात है?'' आइए, देखें कि क्या सच्चाई यही है?

नीचे दिए गए कथनों की सूची में से तालिका को भरिए। अपने उत्तर के कारणों पर विचार कर लिखिए।

1. वे बहुत ही सुशील हैं।

   वे रोते नहीं।

2. उनका बात करने का तरीका बड़ा सौम्य और मधुर है।

   वे ऊधमी हैं। वे खेल में निपुण हैं।

3. वे शारीरिक रूप से बलिष्ठ हैं।

   वे शरारती हैं। वे भावुक हैं।

4. वे नृत्य करने और चित्रकारी में निपुण हैं।

   वे खाना पकाने में निपुण हैं।

चित्र 2.2

तालिका

लड़का	लड़की	ऐसा सोचने के कारण

अगर हम इस कथन को लें कि 'वे रोते नहीं' तो आप देखेंगे कि यह गुण आम तौर पर लड़कों या पुरुषों के साथ जोड़ा जाता है। बचपन में जब लड़कों को गिर जाने पर चोट लग जाती है तो माता–पिता एवं परिवार के अन्य सदस्य अक्सर यह कहकर चुप कराते हैं कि 'रोओ मत। तुम तो लड़के हो। लड़के बहादुर होते हैं, रोते नहीं हैं'। जैसे–जैसे बच्चे बड़े होते जाते हैं, वे यह विश्वास करने लगते हैं कि लड़के रोते नहीं हैं।

यहाँ तक कि अगर किसी लड़के को रोना आए भी तो वह अपने आप को रोक लेता है। लड़का यह मानता है कि रोना कमज़ोरी की निशानी है। हालाँकि लड़कों और लड़कियों दोनों का कभी–कभी रोने का मन करता है, खासकर जब उन्हें गुस्सा आए या दर्द हो। लेकिन बड़े होने तक लड़के सीख जाते हैं या अपने को सिखा लेते हैं कि रोना नहीं है। अगर एक बड़ा लड़का रोए तो उसे लगता है कि दूसरे उसे चिढ़ाएँगें या उसका मज़ाक बनाएँगे। इसलिए वह दूसरों के सामने रोने से अपने आप को रोक लेता है।

'वे कोमल एवं मृदु स्वभाव की हैं' 'वे बहुत ही सुशील हैं ऐसे कथनों पर विचार कीजिए कि ये कैसे केवल लड़कियों पर लागू किए जाते हैं। क्या लड़कियों में ये गुण जन्म से ही होते हैं या वे ऐसा व्यवहार समाज से सीखतीं हैं? आपकी उन लड़कियों के बारे में क्या राय है जो कोमल एवं मृदु स्वभाव की नहीं होतीं और शरारती होती हैं?

हम लगातार यह सुनते रहते हैं कि ''लड़के ऐसे होते हैं'' और ''लड़कियाँ ऐसी होती हैं।'' समाज की इन मान्यताओं को हम बिना सोचे–समझे मान लेते हैं। हम विश्वास कर लेते हैं कि हमारा व्यवहार इनके अनुसार ही होना चाहिए। हम सभी लड़कों और लड़कियों को उसी छवि के अनुरूप देखना चाहते हैं।

• **रूढ़िबद्ध धारणाओं की समझ**

जब हम सभी लोगों को एक ही छवि में बाँध देते हैं या उनके बारे में पक्की धारणा बना लेते हैं, तो उसे रूढ़िबद्ध धारणा (Stereotype) कहते हैं। कई बार हम किसी खास देश, धर्म, लिंग के होने के कारण किसी को 'कंजूस' 'अपराधी' या 'बेवकूफ' ठहराते हैं। ऐसा दरअसल उनके बारे में मन में एक पक्की धारणा बना लेने के कारण होता है। हर देश, धर्म आदि में हमें कंजूस, अपराधी, बेवकूफ लोग मिल ही जाते हैं। सिर्फ इसीलिए कि कुछ लोग उस समूह में वैसे हैं, पूरे समूह के बारे में ऐसी राय बनाना वाज़िब नहीं है। इस प्रकार की धारणाएँ हमें प्रत्येक इन्सान को एक अनोखे और अलग व्यक्ति की तरह देखने से रोक देती हैं। हम नहीं देख पाते कि उस व्यक्ति के अपने कुछ खास गुण और क्षमताएँ हैं जो दूसरों से अलग हैं।

रूढ़िबद्ध धारणाएँ बड़ी संख्या में लोगों को एक ही प्रकार के खाँचे में जड़ देती हैं। जैसे माना जाता था कि हवाई जहाज उड़ाने का काम लड़कियाँ नहीं कर सकतीं। इन धारणाओं का असर हम सब पर पड़ता है। कई बार ये धारणाएँ हमें ऐसे काम करने से रोकती हैं जिनको करने की काबिलियत शायद हममें हो।

मुसलमानों के बारे में यह आम रूढ़िबद्ध धारणा है कि वे लड़कियों को पढ़ाने में रुचि नहीं लेते, इसलिए उन्हें स्कूल नहीं भेजते। जबकि अध्ययन यह दिखा रहे हैं कि मुसलमानों की गरीबी इसका एक महत्त्वपूर्ण कारण है। गरीबी की वजह से ही वे लड़कियों को स्कूल नहीं भेज पाते या स्कूल से जल्दी निकाल लेते हैं। जहाँ

पर भी गरीबों तक शिक्षा पहुँचाने के प्रयास किए गए हैं, वहाँ मुस्लिम समुदाय के लोगों ने अपनी लड़कियों को स्कूल भेजने में रुचि दिखाई है। उदाहरण के तौर पर केरल में स्कूल प्रायः घर के पास हैं। सरकारी बस की सुविधा बहुत अच्छी है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षकों को स्कूल पहुँचने में मदद मिलती है। उनमें 60 प्रतिशत से ज्यादा महिला शिक्षक हैं। इन सभी कारकों ने बहुत सारे गरीब परिवार के बच्चों को स्कूल जाने में मदद की है जिनमें मुसलमान लड़कियाँ भी शामिल हैं।

दूसरे राज्यों में जहाँ ऐसे प्रयास नहीं किए गए, वहाँ गरीब परिवारों के बच्चों को स्कूल जाने में मुश्किल आती है चाहे वे मुसलमान हों, जनजाति के हों या अनुसूचित जनजाति के हों। जाहिर है कि मुसलमान लड़कियों की गैर–हाज़िरी का कारण धर्म नहीं गरीबी है।

प्रश्न

1. किसी विशेष जाति या समूह के लोगों को कंजूस या चालाक मान लेना कहां तक उचित है? अपने विचार लिखिए।

क्रियाकलाप 1 – तालिका में दिए शब्दों के अनुसार एक–एक उदाहरण दिए हैं आप भी एक–एक उदाहरण दीजिए–

पूर्वाग्रह	रूढ़िबद्ध धारणाएँ	विविधता	भेदभाव
उदा. – लड़कियाँ केवल घर का ही काम कर सकती हैं। उदाहरण–		मेरी कक्षा में लड़के–लड़कियाँ सभी साथ–साथ पढ़ते हैं।	

• असमानता एवं भेदभाव (Inequality and discrimination)

भेदभाव तब होता है जब लोग पूर्वाग्रहों या रूढ़िबद्ध धारणाओं के आधार पर व्यवहार करते हैं। अगर आप लोगों को नीचा दिखाने के लिए कुछ करते हैं, अगर आप उन्हें कुछ गतिविधियों में भाग लेने से रोकते हैं, किसी खास नौकरी को करने से रोकते हैं या किसी मोहल्ले में रहने नहीं देते, एक ही कुएँ या हैण्डपम्प से पानी नहीं लेने देते और दूसरों द्वारा इस्तेमाल किए जा रहे कप या गिलास में चाय नहीं पीने देते तो इसका मतलब है कि आप उनके साथ भेदभाव कर रहे हैं।

भेदभाव कई कारणों से हो सकता है। आप याद करें, पहले आपने पढ़ा है कि समीर एक और समीर दो एक–दूसरे से बहुत भिन्न थे। उदाहरण के लिए उनका धर्म अलग था। यह विविधता का एक पहलू है। पर यह भेदभाव का कारण भी बन सकता है। ऐसा तब होता है जब लोग अपने से भिन्न प्रथाओं और रिवाज़ों को निम्न कोटि का मानते हैं।

दोनों समीरों में एक और अन्तर उनकी आर्थिक पृष्ठभूमि का था। समीर दो गरीब था। जैसा कि आपने पहले पढ़ा है, यह अन्तर विविधता का पहलू नहीं है। यह तो असमानता है। बहुत लोगों के पास अपने खाने, कपड़े और घर की मूल ज़रूरतों को पूरा करने के लिए साधन और पैसे नहीं होते हैं। इस कारण दफ्तरों, अस्पतालों, स्कूलों, आदि में उनके साथ भेदभाव किया जाता है।

कुछ लोगों को विविधता और असमानता पर आधारित दोनों ही तरह के भेदभाव का सामना करना पड़ता है। एक तो इस कारण कि वे उस समुदाय के सदस्य हैं जिनकी संस्कृति को मूल्यवान नहीं माना जाता। ऊपर से यदि वे गरीब हैं और उनके पास अपनी ज़रूरतों को पूरा करने के साधन नहीं हैं, तो इस आधार पर भी भेदभाव का सामना कई जनजातीय लोगों, धार्मिक समूहों और खास क्षेत्र के लोगों को करना पड़ता है।

प्रश्न

आप विविधता–असमानता–भेदभाव के मध्य किस प्रकार का सम्बंध पाते हैं? लिखिए।

•समाज में भेदभाव का सामना (Facing discrimination in society)

अपनी आजीविका चलाने के लिए लोग अलग–अलग तरह के काम करते हैं – जैसे पढ़ाना, बर्तन बनाना, मछली पकड़ना, बढ़ई गिरी, खेती एवं बुनाई इत्यादि। लेकिन कुछ कामों को दूसरों के मुकाबले अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। सफाई करना, कपड़े धोना, बाल काटना, कचरा उठाना जैसे कामों को समाज में कम महत्व का माना जाता है। इसलिए जो लोग इन कामों को करते हैं उनको गन्दा और अपवित्र माना जाता है। यह जाति व्यवस्था का एक बड़ा ही महत्त्वपूर्ण पहलू है।

जाति के आधार पर कक्षा में किसी बच्चे को दूसरे बच्चों से अलग बैठाना भेदभाव का एक रूप है।

जाति व्यवस्था में लोगों के समूहों को एक तरह की सीढ़ी के रूप में रखा गया जिसमें एक जाति, दूसरी जाति के ऊपर या नीचे थी। जिन्होंने अपने आपको इस सीढ़ी में सबसे ऊपर रखा उन्होंने अपने को ऊँची जाति का और उत्कृष्ट कहा। जिन समूहों को इस सीढ़ी के नीचे रखा गया उनको अछूत और अयोग्य कहा गया। जाति प्रथा के नियम एकदम निश्चित थे। इन 'अछूतों' को दिए गए काम के अलावा और कोई काम करने की इजाजत नहीं थी।

इस तरह के भेदभाव के खिलाफ लगातार संघर्ष चलता रहा और पिछली शताब्दी में पेरियार व भीमराव अम्बेडकर जैसे नेताओं ने ऐसी व्यवस्थाओं के खात्मे के लिए तथा सभी लोगों को सम्मान से जीने के अधिकार के लिए महत्त्वपूर्ण आन्दोलन चलाए।

कुछ प्रश्न

1. दलित के अलावा कई अन्य समुदाय हैं, जिनके साथ भेदभाव किया जाता है। क्या आप भेदभाव के कुछ अन्य उदाहरण सोच सकते हैं? सूची बनाइये।
2. उन तरीकों पर चर्चा कीजिए जिनके द्वारा 'विशेष ज़रूरतों वाले लोगों' के साथ भेदभाव किया जा सकता है।

• समानता के लिए संघर्ष (Struggle for equality)

ब्रिटिश शासन से आज़ादी पाने के लिए जो संघर्ष किया गया था उसमें समानता के व्यवहार के लिए किया गया संघर्ष भी शामिल था! दलितों, औरतों, जनजातीय लोगों और किसानों ने अपने जीवन में जिस

गैर–बराबरी का अनुभव किया, उसके खिलाफ उन्होंने लड़ाई लड़ी।

जैसे कि पहले भी बात हुई, बहुत सारे दलितों ने संगठित होकर मन्दिर में प्रवेश पाने के लिए संघर्ष किया। महिलाओं ने माँग की कि जैसे पुरुषों के पास शिक्षा का अधिकार है वैसे ही उन्हें भी अधिकार मिले। किसानों और दलितों ने अपने आपको साहूकारों और उनकी ऊँची ब्याज की दरों से छुटकारा दिलाने के लिए संघर्ष किया।

1947 में भारत जब आज़ाद हुआ और एक राष्ट्र बना तो हमारे नेताओं ने समाज में व्याप्त कई तरह की असमानताओं पर विचार किया। संविधान को लिखने वाले लोग भी इस बात से अवगत थे कि हमारे समाज में कैसे भेदभाव किया जाता है और लोगों ने उसके खिलाफ किस तरह संघर्ष किया है। कई नेता इन लड़ाइयों का हिस्सा थे जैसे डॉ. अम्बेडकर। इसलिए नेताओं ने ''संविधान में ऐसी दृष्टि और लक्ष्य रखा जिससे भारत में सभी लोगों को बराबर माना जाए। समानता को एक अहम मूल्य की तरह माना गया है जो हम सभी को एक भारतीय के रूप में जोड़ती है। प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार और समान अवसर प्राप्त हैं। अस्पृश्यता यानी छूआछूत को अपराध की तरह देखा जाता है। इसे कानूनी रूप से खत्म कर दिया गया है। लोग अपनी पसन्द का काम चुनने के लिए बिलकुल आज़ाद हैं। नौकरियाँ सभी लोगों के लिए खुली हुई हैं। इन सबके अलावा संविधान ने सरकार पर यह विशेष ज़िम्मेदारी डाली थी कि वह गरीबों और मुख्यधारा से अलग–थलग पड़ गए समुदायों को समानता के इस अधिकार के फायदे दिलवाने के लिए विशेष कदम उठाए।''

''संविधान के लेखकों का मानना था कि विविधता की इज्ज़त करना, उसे मूल्यवान मानना समानता सुनिश्चित करने में बहुत ही महत्वपूर्ण कारक है।'' उन्होंने यह महसूस किया कि लोगों को अपने धर्म का पालन करने, अपनी भाषा बोलने, अपने त्यौहार मनाने और अपने आपको खुले रूप से अभिव्यक्त करने की आज़ादी होनी चाहिए। उन्होंने कहा कि कोई एक भाषा, धर्म या त्यौहार सबके लिए अनिवार्य नहीं बनना चाहिए। उन्होंने ज़ोर दिया कि ''सरकार सभी धर्मों को बराबर मानेगी। इसीलिए भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है जहाँ लोग बिना भेदभाव के अपने धर्म का पालन करते हैं। इसे हमारी एकता के महत्त्वपूर्ण कारक के रूप में देखा जाता है कि हम इकट्ठे रहते हैं और एक–दूसरे की इज्ज़त करते हैं।''

हालाँकि हमारे संविधान में इन विचारों पर ज़ोर दिया गया है, पर यह पाठ इसी बात को उठाता है कि असमानता आज भी मौजूद है। समानता वह मूल्य है जिसके लिए हमें निरन्तर संघर्ष करते रहना होगा। भारतीयों के लिए समानता का मूल्य वास्तविक जीवन का हिस्सा बने, सच्चाई बने, इसके लिए लोगों के संघर्ष, उनके आन्दोलन और सरकार द्वारा उठाए जाने वाले कदम बहुत ज़रूरी हैं।

• सारांश (Summary)-

- बच्चों की रूचि, क्षमता, योग्यता, सीखने की गति, लिंग, जाति, स्वभाव आदि में विविधता होती है। शिक्षकों को इन विविधताओं के महत्व को समझना आवश्यक है।
- कुछ लोगों को विविधता और असमानता के आधार पर भेदभाव का सामना करना पड़ता है। अतः समानता के लिए सभी को मिलकर निरंतर संघर्ष करना होगा।
- समानता का मूल्य वास्तविक जीवन का मूल्य बने, इसके लिए विविधता को मूल्यावान मानना महत्वपूर्ण है।

• अभ्यास कार्य–

1. भारत का संविधान समानता के बारे में क्या कहता है? क्या आपको लगता है कि सभी लोगों में समानता होना ज़रूरी है?

परियोजना कार्य

कई बार लोग हमारी उपस्थिति में ही पूर्वाग्रह से भरा आचरण करते हैं। ऐसे में अक्सर हम कोई विरोध करने की स्थिति में नहीं रहते, क्योंकि मुँह पर तुरन्त कुछ कहना मुश्किल जान पड़ता है। जिस कक्षा में आप अध्यापन करते हैं उसे दो समूहों में बाँटिए और प्रत्येक समूह इस पर चर्चा करें कि दी गई परिस्थिति में वे क्या करेंगेः–

(क) गरीब होने के कारण एक सहपाठी को आपका दोस्त चिढ़ा रहा है।

(ख)आप अपने परिवार के साथ टी. वी. देख रहे हैं और उनमें से कोई सदस्य किसी खास धार्मिक समुदाय पर पूर्वाग्रहग्रस्त टिप्पणी करता है।

(ग)आपकी कक्षा के बच्चे एक लड़की के साथ मिलकर खाना खाने से इन्कार कर देते हैं क्योंकि वे सोचते हैं कि वह गन्दी है।

(घ) किसी समुदाय के खास उच्चारण का मज़ाक उड़ाते हुए कोई आपको चुटकुला सुनाता है।

(ड) लड़के, लड़कियों पर टिप्पणी कर रहे हैं कि लड़कियाँ उनकी तरह नहीं खेल सकतीं।

उपर्युक्त परिस्थितियों में विभिन्न समूहों ने कैसा बर्ताव करने की बात की है, इस पर विचार कर 100 शब्दों में एक लेख लिखें। साथ ही इन मुद्दों को उठाते समय कक्षा में कौन–सी समस्याएँ आ सकती हैं, इस पर भी विचार करें।

संदर्भ ग्रंथ

सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन–1 कक्षा 6 सामाजिक विज्ञान की पुस्तक, एन.सी.ई.आर.टी प्रकाशन,2007.

♦♦♦♦♦♦♦

इकाई – 3

विविधता : समाज और विद्यालय में एक महत्वपूर्ण स्रोत

(Diversity: An important resource in society and school)

सामान्य परिचय (General Introduction)

''आप जब भी किसी से मिलते हैं तो वह कुछ ऐसा जानता होता है जो आप नहीं जानते।''

– Bill Nye

शैक्षणिक व्यवस्था में भेदभाव की कोई जगह न रहे, विविधता को स्वीकार करें, समझे और संरक्षण प्रदान करें तथा विभिन्नताओं का उत्सव मनाएं, उनका आनंद लें।

– वंदना महाजन

भारतीय समाज में बहुत अधिक विविधता है जिसे वंश, वर्ण, लिंग, भाषा, धर्म, जाति, संप्रदाय, आर्थिक स्थिति, योग्यता, स्वास्थ्य व्यवस्था, भौगोलिक क्षेत्र, जलवायु आदि के माध्यम से प्रकट किया जाता है। पारंपरिक रूप से विविधता को संसाधन न मानकर कभी–कभी अंतर के रूप में जाना जाता है तथा बाधा के रूप मे महसूस किया जाता है।

विविधता को सकारात्मक रूप में लेना विद्यालय की शैक्षिक प्रगति के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। विद्यालय प्रमुख एवं शिक्षकों के द्वारा विविधता का उचित प्रबंधन विद्यालय के हर छात्र को गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा तथा पर्याप्त अवसर प्रदान करता है।

इकाई के उद्देश्य (Objectives of the Unit) :–

- विविधता को स्रोत के रूप में सम्मान देना।
- मौखिक ज्ञान और कौशल का संवर्धन करना।
- समाज एवं विद्यालय की विविधताओं को हस्तांतरित करना।
- विभिन्न लोकविधाओं, परंपराओं व संस्कृति को संरक्षित करना।
- समाज/कक्षा की विविधता को समृद्ध कर एक सूत्र में बांधना।
- विविधता का प्रबंधन करना।

भिन्नता को पाटने में बच्चों की भागीदारी (Children's role in shading differences)

यह पठन सामग्री 'शिक्षा विमर्श' में श्री रोहित धनकर के लेख ''सांस्कृतिक विविधता और शिक्षणशास्त्र पर आधारित है –

भाग I

छोटे विद्यालय में आरंभ (Initiative in a small school)

किसी भी संवेदनशील अध्यापक को अपनी कक्षा में दो प्रकार के मूल्यों में होने वाले तनाव का अनुभव होता है। भिन्न–भिन्न पृष्ठभूमि के छात्रों के प्रति ''समानता' का व्यवहार करना तथा उनके सांस्कृतिक अन्तर को पहचानना, ये दो मूल्य हैं।'' 'समानता' के आदर्श के तहत प्रत्येक शिक्षार्थी को भेदभाव रहित समान दृष्टि से देखना है तो दूसरी ओर उनके बीच के सांस्कृतिक अन्तर पहचानते हुए किसी शिक्षार्थी की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के अनुरूप व्यवहार में उपयुक्त परिवर्तन आवश्यक है। प्रथम दृष्टि में ऐसा प्रतीत होता है मानो कि इन दोनों मूल्यों में कोई द्वंद हो तथा एक आदर्श के पालन के लिए आपको दूसरे का बलिदान करना पड़ेगा। थोड़ा गहन विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि ऐसा नहीं है।

& यह दरअसल एक हास्यास्पद विचार है कि बच्चे स्वयं ही अपने शिक्षाक्रम का निर्धारण कर सकते हैं। सीखने के तरीकों तथा सीखने योग्य विषयवस्तु के निर्धारण हेतु सीखने के क्षेत्र की पहले से समझ होना आवश्यक होता है। शिक्षाक्रम – निर्धारण बच्चों की निर्णयन क्षमता से परे सिर्फ इसलिए है क्योंकि, यदि उन्हें पहले से ही यह समझ होती तो स्कूल की आखिर जरूरत ही क्या थी ? &

भारत में हमने धर्म तथा भाषा पर आधारित सांस्कृतिक विविधता को स्वाधीनता के समय से ही मान्यता प्रदान की तथा भाषा के आधार पर राज्यों का गठन किया गया। भाषा के आधार पर गठित राज्य विशाल थे और कुछ राज्य तो पूरे राष्ट्रों जितने बड़े हैं। किसी एक महत्वपूर्ण मापदण्ड को मान्यता प्रदान करने तथा 'विविधता में एकता' को प्रतिष्ठित करने की जल्दबाजी के कारण एक विशाल देश में सांस्कृतिक भिन्नता के अन्य महत्वपूर्ण कारक भुला दिए गए। उदाहरण के लिए, 'जाति' एक ऐसा कारक है जिसे हम (लम्बे समय से और आज भी) 'सांस्कृतिक भिन्नता' का कारण नहीं समझते, जिसे शिक्षण विधि के लिहाज से जायज ध्यानाकर्षण की जरूरत हो सकती है, चूंकि स्वतंत्रता के समय धर्म आधारित विभाजन हुआ अतः धर्म को भी शिक्षण विधि की दृष्टि से कक्षा–कक्ष में 'भिन्नता' के स्रोत के रूप में कमतर आंका गया।

परिणामस्वरूप, हमारे शिक्षाक्रम तथा शिक्षण विधि से संबंधित व्यवहारों में अभिजात्य शहरी मध्यवर्ग के नैतिक विचारों का ही प्रभुत्व बना रहा तथा उच्च जातियों के सामाजिक व्यवहार तथा आदर्श प्रधान रूप से मौजूद रहे। यह स्थिति ग्रामीण क्षेत्रों के कुछ बालकों के लिए अनुपयुक्त है। कक्षा में जो पाठ्यपुस्तकें तथा पाठ्य सामग्री काम में लाई जाती है वह कक्षा में 'विविधता' को मान्यता नहीं देती तथा बच्चों की पृष्ठभूमि में विद्यमान भिन्नता को या तो नजर अंदाज किया जाता है अथवा हेय दृष्टि से देखा जाता है।

उन्नीसवीं सदी में सर्वत्र अथवा कम से कम हिन्दी भाषी उत्तरी भारत में तो शैक्षिक वातावरण की यही दशा थी। हमारे विद्यालय में 25 बच्चे तथा दो अध्यापक थे। आज जब मैं पीछे मुड़कर देखता हूँ तो याद आता है कि छोटा विद्यालय होते हुए भी बच्चों की पारिवारिक पृष्ठभूमि में पर्याप्त भिन्नता मौजूद थी। विद्यालय में विभिन्न प्रकार की जातियों यथा–ब्राह्मण, राजपूत, यादव, माली, धोबी तथा अनुसूचित जाति के बच्चों का प्रतिनिधित्व था। धार्मिक दृष्टि से हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख एवं राधास्वामी परिवारों के बच्चे विद्यालय में थे (राध ाास्वामी संप्रदाय–हिन्दू तथा सिक्ख धर्म का मिश्रण है किन्तु इसके अनुयायी सभी धर्मो में पाए जाते हैं)। दूसरी ओर इण्डो–यूरोपियन तथा भारतीय और नेपाली बच्चे भिन्न सांस्कृतियों का प्रतिनिधित्व करते थे। संवेदनशील भारतीय दृष्टि के लिए तो किसी हद तक जातीय भिन्नता में सांस्कृतिक भिन्नता भी निहित होती है। हिन्दी, अंग्रेजी, नेपाली एवं राजस्थानी बोलियाँ एवं बच्चों के परिवारों की आर्थिक पृष्ठभूमि (अति गरीब, घरेलू नौकर, मजदूर एवं अति धनी) भी बहु–आयामी भिन्नता को दर्शाती थी।

स्कूल एक उद्योगपति परिवार द्वारा प्रदत्त वित्तीय सहायता से संचालित हो रहा था एवं उनके घर के पृष्ठभाग में स्थित बाग में स्कूल चलता था। अधिकांश बच्चों के अभिभावक इस परिवार के घरेलू नौकर, माली अथवा कारखाने में काम करने वाले श्रमिक के रूप में संबंधित थे। चूंकि दानदाता परिवार के बच्चे भी इस परिवार पर व्यावसायिक रूप से आश्रित थे। अतः बाहरी जीवन के सत्ता संबंध स्कूल में भी झलकते थे।

विद्यालय 'सीखने की स्वतन्त्र गति' के सिद्धान्त पर आधारित था न कि वार्षिक कक्षा विभाजन पर। किसी प्रकार की परीक्षा नहीं होती थी वरन् समझ कर सीखने एवं स्वयं सीखने की प्रवृत्ति पर जोर दिया जाता था। कक्षा में उपस्थित होने या न होने, पुस्तकालय में किताबें पढ़ने, बगीचे में झूला झूलने या मिट्टी में काम करने जैसे निर्णय स्वयं लेने के लिए बच्चे स्वतंत्र थे। हालांकि विद्यालय की अपनी एक समय सारणी थी किन्तु उदाहरणार्थ, अंग्रेजी के कालांश में कोई बच्ची यदि गणित पढ़ना चाहे तो उसे सहायता नहीं मिल सकती थी क्योंकि अध्यापक उस समय अंग्रेजी में व्यस्त होते थे।

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि बच्चों को स्वयं निर्णय लेने की काफी हद तक स्वतंत्रता थी। इस विद्यालय में लगभग सभी निर्णय यथा समय–सारणी, स्कूल का समय, भ्रमण, लकड़ी एवं मिट्टी से संबंधित कार्य, स्कूल की बैठक व्यवस्था, कक्षा का फर्नीचर आदि बच्चों की भागीदारी में ही लिए जाते थे।

विद्यालय के छात्रों का आयु–वितरण 4 वर्ष से 17 वर्ष के बीच था। स्कूल की बाहरी भ्रमण की योजनाओं का लगभग पूर्णतः प्रबंध बड़े बच्चे ही करते थे। कभी–कभार विद्यालय में शिक्षकों के न होने पर भी बच्चे अकेले एवं रूचि के साथ काम करते थे तथा स्कूल सामान्य रूप से चलता था। शिक्षाक्रम से संबंधित निर्णय बच्चे ले सकें – इस हेतु संरचनात्मक व्यवस्था थी। विषयवस्तु एवं क्षमताओं की दृष्टि से राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय शिक्षाक्रम के अनुसार विद्यालय का शिक्षाक्रम शिक्षकों द्वारा निर्धारित किया जाता था, तथापि पर्याप्त रूप से स्वतंत्रता बरतते हुए। किन्तु सीखने की गति, पाठ्यपुस्तकों में से पुस्तकों के चयन में बच्चे स्वतंत्र थे। ये निर्णय बच्चों के अपने सीखने से संबंधित थे न कि अन्य बच्चों के सीखने से।

इन सब तथ्यों के बावजूद यह बच्चों के 'स्वतंत्र निर्णयकर्ता' होने का परिचायक नहीं था बल्कि मैं इस अनुभव को निर्णय की प्रक्रिया में बच्चों की भागीदारी की बानगी के रूप में देखता हूँ क्योंकिः

1. सभी निर्णय शिक्षकों के साथ विचार–विमर्श करके लिए जाते थे। 'ब' के बजाय 'अ' एक अच्छा विकल्प क्यों है – इस पर संवाद एवं समझ कायम करना जरूरी होता था। इससे बच्चे अपने चयनित विकल्पों के संबंध में अधिक स्पष्ट और मुखर तथा चयन के कारण स्पष्ट करने में अधिक सक्षम बने। किसी विकल्प के संबंध में मतैक्य न होने पर बच्चे अपना रास्ता चुनने के लिए स्वतंत्र थे, पर यदि वे अपना निर्णय कभी भी बदलना चाहें तो शिक्षकों से बात करने की छूट थी।

2. शिक्षाक्रम निर्धारण में बच्चों की कोई भूमिका नहीं थी। जैसा ऊपर बताया गया है, शिक्षाक्रम–राष्ट्रीय एवं राज्य शिक्षाक्रम नीति से निर्देशित थे किन्तु पाठ्यपुस्तकों, सीखने की सामग्री, सीखने का क्रम या किसी निर्धारित समय में सीखने की मात्राः ऐसे मसले थे जिनमें लचीलेपन तथा चयन की पर्याप्त गुंजाइश थी। किन्तु बच्चों द्वारा अपने शिक्षाक्रम के स्वयं निर्धारण का विचार, जिसकी कई बार वकालत की जाती है, कभी स्वीकार नहीं किया गया। यह दरअसल एक हास्यास्पद विचार है कि बच्चे स्वयं ही अपने शिक्षाक्रम का निर्धारण कर सकते हैं। सीखने के तरीकों तथा सीखने योग्य विषयवस्तु के निर्धारण हेतु सीखने के क्षेत्र की पहले से समझ होना आवश्यक होता है। शिक्षाक्रम–निर्धारण बच्चों की निर्णयन क्षमता से परे सिर्फ इसलिए है क्योंकि, यदि उन्हें पहले से ही यह समझ होती तो स्कूल की आखिर जरूरत ही क्या थी ? ''जॉन व्हाइट का कथन है कि बच्चों को एक दिया हुआ शिक्षाक्रम पढ़ाना इसलिए जरूरी है ताकि वे स्वयं चयन करने के योग्य बन सकें।''

3. शिक्षक बच्चों के निर्णयों को निरस्त कर सकते थे यदि उन्हें ये निर्णय बिल्कुल अनुपयुक्त लगते, परन्तु ऐसे अधिक वाकयात आए हों, मुझे याद नहीं आता। विद्यालय में 'स्वतंत्रता' पर्याप्त रूप से विद्यमान थी किन्तु यह कहना गलता होगा कि 'अध्यापक–छात्र' संबंधों में बिल्कुल विषमता नहीं थी। अध्यापक मानते थे कि वे बच्चों को सिखाने के लिए उत्तरदायी हैं और बेहतर चुनाव करने में बच्चों की मदद करना उनका कर्त्तव्य है, इसलिए वे उन्हें मनचाहा करने की छूट नहीं दे सकते थे। इसके बावजूद कोई निर्णय उन पर बाहरी रूप से थोपा नहीं जाता था। बातचीत, शांत एवं कोमल समझाइश तथा प्रतीक्षा यही वास्तविक कुंजियाँ थीं।

इन सबका मतलब यह है कि बच्चे एक खास किस्म के सीखने के ढांचे के अन्तर्गत निर्णय लेते थे जिसे वयस्क सहायता या निगरानी कह सकते हैं, जाहिर है कि उम्र में बड़े बच्चे (10 वर्ष या अधिक) छोटे बच्चों की तुलना में अधिक स्वतंत्र थे तथा विद्यालय से संबंधित मामलों में निर्णय लेने में अधिक सक्रिय थे।

'खुलेपन' एवं 'स्वतंत्रता' के इस वातावरण ने सांस्कृतिक विविधता को पहचानने व संभालने में स्कूल की मदद कैसे की ?

यद्यपि मैंने सांस्कृतिक विविधता के बहुआयामी पक्ष की बात प्रारम्भ में की गयी है – किन्तु शिक्षक इस विविधता को उस समय अव्यक्त रूप से ही समझते थे। बच्चों की आर्थिक पृष्ठभूमि की भिन्नता ही एक ऐसा मुद्दा था जिसे वे स्पष्ट एवं व्यक्त रूप से पहचानते थे। उस समय शिक्षकों ने केवल जिस बात का ध्यान रखा वह थी कि सभी बच्चों को शैक्षिक अवसरों की समानता, स्कूल संबंधी निर्णयों में भागीदारी मिले, न्याय व निष्पक्षता उनके संजोए मूल्य व दृढ़ सिद्धांत थे।

स्कूल काफी आराम से चला, सभी बच्चों ने अच्छी तरह सीखा एवं दृढ़ लोकतांत्रिक मूल्यों का विकास संभव हुआ। यह हैरानी कि बात है कि बच्चों की पारिवारिक पृष्ठभूमि की भारी भिन्नता तथा इस कारण विचार एवं व्यवहार में अन्तर स्कूल के लिए बाधक क्यों नहीं बने ? बच्चों के अभिभावकों के बीच विद्यमान सत्ता संबंधों के दोहराव से स्कूल को कैसे बचाया गया?

इस छोटी सफलता के मेरी समझ में निम्न कारण थे :

सभी बच्चों के बीच समानता के सिद्धान्त को स्कूल से जुड़े सभी वयस्कों ने स्वीकार किया और उसका आदर किया, विशेष रूप से शिक्षकों तथा स्कूल के वित्तीय संरक्षकों ने। समानता का विचार सभी मनुष्यों की समानता में विश्वास से उपजा तथा इस विचार से कि सभी बच्चे उतनी ही अच्छी तरह सीख सकते हैं। इससे ऐसा माहौल बन कि प्रत्येक बच्चा समान रूप से अपने लिए चाहत, देखभाल तथा संरक्षण को महसूस कर पाया। बर्ताव में निष्पक्षता तथा विवादों को खुले विनियम द्वारा हल करने की प्रवृत्ति से सभी आश्वस्त बन पाए कि किसी के हितों को अनदेखा नहीं किया जाएगा।

बच्चों से जुड़े सभी मसलों पर निर्णय लेने में बच्चों को भागीदार बनाना तथा उनमें अपने चारों ओर फैले संसार को सक्रिय तथा रचनात्मक तरीके से समझने की क्षमता का विकास करना – ये दोनों बातें स्कूल का ध्येय थी। बच्चों की भागीदारी पूर्णतः स्वतः स्फूर्त व स्वैच्छिक हो – इस बात का विशेष ध्यान रखा गया। यह स्वैच्छिक भागीदारी – पढ़ाई लिखाई के अलावा पाठ्येत्तर प्रवृत्तियों में भी सुनिश्चित की गई। शिक्षकों एवं बच्चों को पता था कि किसी बच्चे कि स्कूल की गतिविधियों में भागीदारी लेने का इकलौता तरीका परस्पर स्वीकृति था। इस प्रक्रिया में समय लगता था किन्तु हर कोई उस छोटे समूह के योग्य एवं जिम्मेदार सदस्य के रूप में अपनी भूमिका महसूस करता था जो उनके व्यक्तिगत जीवन में भी महत्वपूर्ण थी।

प्रत्येक बच्चे की शैक्षिक जरूरतों के प्रति संवेदनशीलता तथा बच्चों पर वैयक्तिक रूप से ध्यान देने हेतु शिक्षकों को प्रशिक्षित करना – स्कूल के दो महत्वपूर्ण कार्य थे। इस बात को पहचाना जाता था कि सीखने का मतलब है – नए अनुभवों व सूचनाओं को पहले से विद्यमान समझ एवं व्याख्या के आधार पर अर्थ देना। अतः बच्चे की पहले से जो समझ है उसकी उपेक्षा करने की गुंजाइश ही न थी क्योंकि यही इकलौता प्रस्थान बिन्दु था। शिक्षण कार्य का सामान्यीकरण करके उन्हें ज्यों का त्यों सभी बच्चों पर लागू नहीं किया गया बल्कि – प्रत्येक बच्चे के स्तर, अनुभव एवं भाषा के अनुरूप विशिष्ट शिक्षण पर जोर दिया गया।

& भारत में जाति–वर्ण व्यवस्था को 'सांस्कृतिक भिन्नता' से जोड़कर प्रायः नहीं देखा जाता। आज भी देश के ग्रामीण इलाकों में जाति, वर्ण–व्यवस्था मजबूती से कायम है। इस सामाजिक भिन्नता अलग–अलग जाति के बच्चों में उभर कर आती है उसे अब तक हमारें यहां जानबूझ कर कम करके आंका जाता रहा है। &

शिक्षकों को स्कूल अपने तरीके से संचालित करने की पर्याप्त स्वायत्तता दी गई। इस हेतु शिक्षक स्कूल में होने वाली बैठकों मे सहमति बनाने एवं अभिभावकों से वैयक्तिक विचार–विमर्श द्वारा बच्चों के संबंध में निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र थे। परीक्षा अथवा मूल्यांकन के दबाव के बिना शिक्षक स्वयं शिक्षाक्रम निर्धारित कर सकते थे। स्कूल शिक्षा के दस वर्षों के उपरान्त कक्षा दस की परीक्षा हेतु बच्चों को तैयार करने की बाध्यता तो थी किन्तु इन दस वर्षों को शिक्षक एवं बच्चे अपनी इच्छानुसार लचीलेपन के साथ सीखने में लगा सकते थे।

छात्रों की सीमित संख्या एवं भारतीय मानदण्डों के अनुसार एक अत्यन्त उच्च अध्यापक–छात्र अनुपात भी स्कूल की सफलता का एक महत्वपूर्ण कारक था। 25 बच्चों पर दो अध्यापक थे अतः अतः शिक्षक प्रत्येक छात्र को गहनता से समझ सके। इस निकटता ने आपसी विश्वास पर आधारित मजबूत संबंधों को जन्म दिया। ऐसा लगता है कि स्नेह पर आधारित ऐसे संबंध बच्चों की पृष्ठभूमि की भिन्नता के अहसास को क्षीण करने में सक्षम होते हैं, चाहे इन्हें औपचारिक रूप से भले ही समझा अथवा सुलझाया न जाए – आपसी विश्वास एवं स्नेह पर आधारित व्यक्तिगत संबंध इन भिन्नताओं को पाटने की क्षमता रखते हैं।

प्रश्न –

''शाला में लोकतांत्रिक मूल्यों के विकास के लिए बच्चों की भागीदारी और स्वतंत्रता आवश्यक है'' – समूह चर्चा कर प्राप्त विचारों को सूचीबद्ध करें।

भाग II

वृहत या अपेक्षाकृत बड़े विन्यास में भिन्नताओं को मान्यता
(Approval of inequality in big network)

बच्चों की पारिवारिक पृष्ठभूमि में पाई जाने वाली विविधता किस प्रकार शिक्षण विधि के लिहाज से महत्वपूर्ण है यह तब अधिक स्पष्ट हुआ जब हमारे एकल स्कूल ने विस्तार करके पिछड़े बच्चों के लिए एक कार्यक्रम का रूप लिया। तीन स्कूलों के पांच सौ बच्चों के लिए बनाई गई इस परियोजना में विभिन्न वर्णों की जातीय पृष्ठभूमि वाले बच्चे थे। बच्चे रैगर (जातीय श्रृंखला में काफी नीचे), मीणा, गुर्जर, माली, ब्राह्मण (जातीय श्रृंखला में सर्वोपरि), राजपूत तथा मुस्लिम परिवारों से थे। भाषा, वृत्ति एवं व्यवहार की प्रवृत्तियों के अध्ययन के लिए यह संख्या काफी थी।

जब हम एकल स्कूल रूपी इकाई से वंचित बच्चों के लिए परियोजना में तब्दील हो रहे थे, तभी हमें राज्य द्वारा पोषित कुछ विशाल परियोजनाओं को अकादमिक सहयोग मुहैया करवाने का अवसर मिला। इस प्रकार हम विशाल भारतीय शिक्षा व्यवस्था से रूबरू हुए। साथ ही सेवारत शिक्षकों के प्रशिक्षण तथा राज्य एवं राष्ट्रीय स्तरीय शिक्षाक्रम विकास में शरीक होने पर विविधता के मुद्दे की हमने शिद्दत से महसूस किया।

एक ऐसे शिक्षक के नजरिए से भारतीय परिदृश्य को समझते हुए जिसने एक छोटे विद्यालय के अपने कार्य अनुभव (और बच्चों की विशिष्ट व्यक्तिगत आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशीलता से काम करते हुए) के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि विविधता के मुद्दे को विभिन्न स्तरों पर पहचाना जाना आवश्यक है।

सर्वप्रथम, भिन्नता व उसके कारकों – जैसे वर्ण–जाति, धर्म एवं संस्कृति के अन्तर्संबंध को पहचाना जरूरी है। भारत में जाति–वर्ण व्यवस्था को 'सांस्कृतिक भिन्नता' से जोड़कर प्रायः नहीं देखा जाता। आज भी देश के ग्रामीण इलाकों में जाति, वर्ण–व्यवस्था मजबूती से कायम है। इस सामाजिक व्यवस्था के कारण जो सांस्कृतिक भिन्नता अलग–अलग जाति के बच्चों में उभर कर आती है उसे अब तक हमारे यहाँ जानबूझ कर कम करके आंका जाता रहा है। अब यह बात पहचान में आने लगी है कि जातिगत भिन्नता तथा सांस्कृतिक भिन्नता में कई समान तत्व पाए जाते हैं। वे सामान्य रूप जिनके द्वारा जाति संस्कृति एवं धर्म जनित विविधता स्कूलों में दिखती है, जो निम्न है :–

भाषा का प्रयोग (Using language) : सामान्यतः यह माना जाता है कि सभी हिन्दी भाषी लोग (या हिन्दी की कोई विशेष बोली बोलने वाले लोग भी) समान तरह से हिन्दी बोलते हैं। यह समरूप भाषा स्थान विशेष के निवासियों तथा स्कूल द्वारा बोली जाती है अर्थात् एक छोटे गांव के लोग भाषा का प्रयोग समान तरीके से करते हैं, अतः भाषागत क्षमताओं के संदर्भ में बच्चों की योग्यता समान होती है। इस समरूपता के विचार का दूसरा विपरीत ध्रुव है – एक ही गांव में भाषा बोलने के विविध रूप प्रचलित हैं हालांकि उस पूरे क्षेत्र में एक ही भाषा प्रचलित है। सच्चाई हमेशा की तरह इन दोनों के बीच कहीं है। भाषा के प्रयोगों में पाई जाने वाली भिन्नता से यह आशय नहीं है कि हम हर रूप को एक पृथक भाषा मान लें – दरअसल ये भाषा के वृहत रूप है। उदाहरणार्थ–बड़ों के प्रति भाषा में आदरसूचक शब्दों के प्रयोग के मामले में बच्चों की जातीय पृष्ठभूमि के कारण विविधता होती है। छत्तीसगढ़ के ग्रामीण विद्यालयों में बच्चे वयस्कों को संबोधित करने के लिए 'आप' (आदरयुक्त संबोधन) शब्द का प्रयोग करते हैं किन्तु कुछ क्षेत्रों में 'तुम' शब्द भी प्रचलित है। 'तुम' शब्द किसी भिन्न पृष्ठभूमि के शिक्षक को अनादरपूर्वक संबोधन लग सकता है – यहाँ तक कि अपमानजनक भी प्रतीत हो सकता है। चाहे बच्ची की ऐसी कोई मंशा न हो और वह शिक्षक को उतना ही आदर देना चाहती हो जितना अपने पिता या दादा को। इस प्रकार 'तुम' शब्द का प्रयोग करने वाले बच्चे एवं उसके शिक्षक के बीच बनने वाले संबंध उनके बीच होने वाला सम्प्रेषण जरूर प्रभावित होंगे, चूंकि कक्षा में प्रयोग की जाने वाली पाठ्य–सामग्री में भी आदरयुक्त संबोधन के लिए 'आप' शब्द प्रयुक्त होता है, अतः कक्षा के वे बच्चे जो 'तुम' शब्द का प्रयोग करते हैं अन्य बच्चों की नजर में अपरिष्कृत बच्चों की श्रेणी में आ जाएंगे। ठीक यही बात शब्दावली, शब्दों के उच्चारण एवं बोलने के उतार–चढ़ाव पर भी लागू होती है। उत्तर भारत के स्कूलों के संदर्भ में जहाँ तथा कथित परिष्कृत तथा मानक हिन्दी पर बल दिया जाता है वहाँ यह अंतर महत्वपूर्ण हो जाता है। ऐसे में हिन्दी न बोल पाने वाले बच्चे कक्षा में अभिव्यक्ति तथा प्रश्न पूछने में संकोच महसूस करते हैं। अतः भारतीय विद्यालयों में जो 'चुप्पी की संस्कृति' दृष्टिगोचर होती है – हो सकता है उसके मूल में मानक भाषा का यह प्रभुत्व एक प्रमुख कारण हो।

सामाजिक व्यवहार तथा आचरण : जातीय तथा सांस्कृतिक अन्तर पृथक–पृथक सामाजिक आचरण से भी उजागर होते हैं हालांकि ये भाषा में भी अक्सर दिखते हैं। मिसाल के तौर पर, वयस्कों से एवं खासकर शिक्षकों से अभिवादन के तौर–तरीके। कुछ परिवारों के बच्चे (जहाँ अभिवादन के विशिष्ट औपचारिक तौर–तरीकों में स्वयं को असहज पाते हैं। ये तौर–तरीके सामान्य मध्यमवर्गीय व्यवहार से जितने अलग होंगे, बच्चे उतने ही उन्हें अपनाने में झिझकेंगे। यह मानना कि सभी भारतीय बच्चे दोनों हाथ जोड़कर नमस्ते कर सकते हैं या बड़ों

के (खासकर अध्यापकों के) पैर छू सकते हैं, त्रुटिपूर्ण है और कई अवसरों पर बच्चे इस विषय में अस्पष्ट होते हैं कि वे शिक्षकों या आगंतुकों का अभिवादन कैसे करें। यह अस्पष्टता उन्हें शर्मीला और संकोची बना देती है। अपनी कक्षा के साथियों के साथ बरताव में भी ऐसे अन्तर हो सकते हैं। जातिगत पूर्वाग्रह के कारण छोटे बच्चे भी अपने कुछ साथियों के साथ मिल–बैठकर भोजन करने या उनके द्वारा छुआ पानी पीने में अनिच्छुक रहते हैं। ये छोटी–छोटी बातें प्रायः कक्षा में सीखने के लिए समूह के निर्माण पर काफी असर डालती हैं।

काम, विशेषकर शारीरिक श्रम के प्रति रवैया : पारिवारिक तथा जातीय पृष्ठभूमि का बच्चों के काम के प्रति व्यवहार पर प्रभाव पड़ता है कि किन कार्यों को सम्मानजनक या निम्न श्रेणी का माना जाए और कौन से सामाजिक रूप से निम्न समझी जानी वाली जातियों द्वारा ही किए जाएं। उदाहरण के लिए, कतिपय जाति से संबंध रखने वाले बच्चे स्कूल में सफाई जैसे कार्यों को निम्न श्रेणी का कार्य मानेंगे। यह भारत के ग्रामीण स्कूलों के लिए महत्वपूर्ण मसला है जहाँ इन कार्यों के लिए नियमित स्टाफ की व्यवस्था नहीं होती। परिणामस्वरूप, ऐसे स्कूल या तो बिना साफ–सफाई के रहते हैं या फिर वहाँ कतिपय जाति के बच्चों या लड़कियों से ऐसे कार्य करवाए जाते हैं। दूसरी ओर काम को समय पर करने या आराम से करने आदि की आदत या इनके प्रति वृत्ति में भी अन्तर हो सकता है। किसी कार्य को निश्चित समय सीमा में करने का विचार कृषक समुदाय के बच्चों के लिए अपरिचित होता है। कृषि में बेहद व्यस्त एवं आपाधापी भरे कार्य हो सकते हैं किन्तु 'नियमितता' को संभवतः महत्ता न दी जाए। ऐसी मनोवृत्ति से परीक्षा–समय बच्चों के लिए बहुत तनावमय हो सकता है जबकि वर्ष का बाकी समय आराम से दैनिक कार्य के प्रति ढीले रवैये के साथ बिताया जा सकता है।

आत्मछवि व पहचान : आत्मछवि या पहचान का निर्माण एक अत्यन्त जटिल सामाजिक व मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। मैं गहनता से इसकी पड़ताल नहीं करूँगा। शिक्षक बच्चों से तथा बच्चे आपस मे जो परस्पर अपेक्षा रखते हैं उसमें जातिगत पहचान अहम भूमिका निभाती है। अपनी जातिगत पृष्ठभूमि तथा सामाजिक–क्रम में अपनी जाति की सापेक्ष स्थिति को लेकर बच्चों से या शिक्षक बच्चों से जो अकादमिक अपेक्षा रखते हैं – उसमें भी यह तथ्य उभर कर आता है। वे कतिपय जाति के बच्चों से ऊँची अकादमिक उम्मीदें रखते हैं तथा कुछ जाति के बच्चों को वे इस योग्य नहीं मानते अथवा सोचते हैं कि वे शिक्षा प्राप्त करने में विशेष रूचि नहीं रखते।

विविधता के मुद्दे को सुलझाने तथा बच्चों की इस प्रक्रिया में भागीदारी पर चर्चा करने से पहले मैं यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि बच्चों की पृष्ठभूमि में भिन्नता एवं अन्तर को पहचानना महत्वपूर्ण क्यों है?

लोकतंत्र में स्कूलों का कार्य सभी को सीखने के समान अवसर उपलब्ध करवाना है। जिस वास्तविक यथार्थ को बच्चे भोगते हैं, यदि वह शिक्षाक्रम, पाठ्य सामग्री तथा पाठ्यपुस्तकों से नदारद हो तो वे शैक्षिक प्रक्रिया से अलगाव महसूस करते हैं। ग्रामीण क्षेत्र के वंचित जाति के बच्चे शिक्षाक्रम में ऐसा कुछ नहीं पाते जो उनके दैनिक जीवन से कहीं मेल खाए। जबकि उच्च जाति के शहरी बच्चे संवाद में, शैक्षिक सामग्री में तथा शिक्षकों के सामाजिक व्यवहार में अपने जीवन की छवि देखकर–स्कूल से जुड़ाव महसूस करते हैं। इस प्रकार दो भिन्न प्रकार की पृष्ठभूमि से आए बच्चे वास्तव में सीखने के बहुत अलग अवसर पाते हैं जबकि तकनीकी रूप से कहा जा सकता है कि एक ही शिक्षा पा रहे हैं। ऐसी स्थिति में यदि हम ग्रामीण क्षेत्र के दलित बच्चों की मदद करना चाहते हैं तो बच्चों की पृष्ठभूमि की विविधता को पहचानना इस दिशा में पहला कदम हो सकता है। इसे हम भिन्नता को पहचानने का शिक्षण शास्त्रीय आधार भी कह सकते हैं।

दूसरे, सभी की समान अस्मिता का सिद्धान्त माँग करता है कि हम सामूहिक तथा वैयक्तिक दोनों स्तरों पर भिन्नता की पहचान करें। कक्षा में बच्चे की पहचान को सकारात्मक मान्यता देना अत्यावश्यक है। हर बच्चा स्कूल में सुरक्षित तथा स्वतंत्र महसूस करे, यह एक आवश्यक मूल्य है। अतः पूर्व वर्णित भिन्नताओं का हल निकालना जरूरी है यदि हम स्कूल में सभी बच्चों के लिए ऐसा सकारात्मक वातावरण बनाना चाहते हैं।

तीसरे, लोकतांत्रिक नागरिकता में 'संवाद के लिए खुलापन' एवं दूसरों के प्रति आदर निहित है। अतः स्कूल के सभी बच्चों के लिए दूसरों के मूल्यों, परम्पराओं, भाषा तथा विश्व–दृष्टि जानना समझ के विकास के लिए जरूरी है। इसके अभाव में बच्चों में नागरिकता के मूल्यों का विकास बाधित हो सकता है।

कक्षा में सांस्कृतिक विविधता को पहचानना क्यों जरूरी है इसके कई कारण हैं, मैं तीन कारणों को रखूंगा जो यहाँ ज्यादा प्रासंगिक हैं।

प्रश्न – शाला/कक्ष में भिन्नता की पहचान से शिक्षक को किन–किन कार्यों में सुगमनता होगी चर्चा करें।

भाग III

शिक्षण विधि द्वारा भिन्नता को संभालना तथा बच्चों की भागीदारी
(Handling inequality by teaching methods and roles of children)

सरकारी स्कूलों के विशाल नेटवर्क के बीच कार्य करते हुए, सेवारत शिक्षकों के प्रशिक्षण तथा शिक्षकों को अकादमिक सहयोग देते समय उपरोक्त समस्याओं का प्रायः ही सामना करना पड़ता है। कई बार संवेदनशील व विवेकवान शिक्षाविद् इन भिन्नताओं पर बल देते दिखते हैं तथा भिन्न सामाजिक–सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले बच्चों के साथ भिन्न व्यवहार की वकालत करते हैं। इस प्रकार भिन्नता को गौण बनाकर पुल बांधने और समाज की एक साझा समझ पैदा करने का अवसर खो दिया जाता है। दूसरा पहलू राजनैतिक 'चतुराई' का है जिसके तहत सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति संवेदनशीलता एवं सापेक्षता की दुहाई देकर विभिन्न सामाजिक–सांस्कृतिक व्यवहारों पर ईमानदारी से बात करने तथा इसके परिणाम समझने से लोग कतराते हैं। सिक्के का दूसरा पहलू ऊपर बताया गया है कि कुछ विशिष्ट सांस्कृतिक या जातीय समुदायों में प्रचलित व्यवहारों, भाषा आचरण व मूल्यों को ही मानक मानकर अन्य को सामाजिक–सांस्कृतिक विकास क्रम में पिछड़ा मान लिया जाता है, साथ ही उन पर तरस खाकर उनकी मदद की जाती है कि वे प्रभुत्व रखने वालों के आचार–व्यवहार तथा वृत्तियों को अपनाएं। भारतीय स्कूलों में प्रायः यह मनोवृत्ति पाई जाती है।

दोनों तरीके अपर्याप्त हैं तथा इनका औचित्य सिद्ध करना कठिन है। चीजों एवं स्थितियों को ज्यों का त्यों स्वीकार करने का तरीका किसी को भी कायल नहीं कर सकता। ऐसे में समाज को समझने तथा सामाजिक व्यवहार पर कक्षा में चिंतन करने का मौका खो दिया जाता है और इस प्रकार अपने समाज को समझने व आलोचना कर पाने का महत्वपूर्ण शैक्षिक उद्देश्य छूट जाता है। दूसरी ओर, पक्षपात तथा प्रभुत्ववादी सामाजिक आचरण के प्रति निर्विवाद स्वीकृति शक्तिविहीन समुदायों को और भी हाशिए पर ला खड़ा करती है, इसमें पहली नीति की अन्य सभी खामियाँ तो हैं ही।

इस समस्या के समाधान हेतु दो मानवतावादी सिद्धान्त कारगर हो सकते हैं। पहला, स्कूलों में 'समानता' के आदर्श को केवल समान व्यवहार की बजाय समान अवसरों व प्रोत्साहन की सच्ची सुलभता के रूप में देखा जाए। दूसरे सिद्धान्त के तहत बच्चे को 'इंसान' के रूप में प्राथमिकता दी जाए, जो अपनी शिक्षा में सक्रिय रूप से भागीदार हो। इसका अर्थ होगा कि एक वंचित बच्ची समुदाय के तौर–तरीकों के प्रति सामाजिक रवैया तथा बच्ची के सामाजीकरण द्वारा अपनाई गई रूकावटें इस हद तक हटाई जा सकें कि उसके लिए सीखने के अवसर दूसरे बच्चों जितने ही अच्छे बन पाएँ। अपनी एवं दूसरों के सांस्कृतिक कार्य–कलापों को उखाड़कर देख सके और भिन्नताओं के बावजूद लोगों का सम्मान करना सीख सके।

अतः एक बच्ची अपने समुदाय की सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना के लघु मूर्त स्वरूप से कहीं ज्यादा बढ़कर है। यह चेतना निश्चित रूप से उसके अस्तित्व में समाहित है, किन्तु वह बच्ची अपनी सामुदायिक चेतना से परे, वैकल्पिक व्यवहारों को तथा उसके अस्तित्व के अधिकार को भी समझ सकती है।

अपने आगे के वर्णन में मैं यह चित्रण करने की कोशिश करूंगा कि कैसे इन दोनों सिद्धान्तों को स्कूल में बच्चों की सक्रिय सहभागिता के साथ लागू किया जा सकता है। यहाँ मैं एक बात अवश्य स्पष्ट करना चाहूंगा कि कमजोर वर्ग के बच्चे ऊपर वर्णित समस्याओं के अतिरिक्त अन्य कई ठोस समस्याओं का सामना करते हैं : बदतर स्कूल, असंगत एवं उच्च छात्र–अध्यापक अनुपात, ग्रामीण जनता के लिए निर्मित स्कूलों में बुनियादी सुविधाओं की बदतर स्थिति आदि। इन्हें पहले सुधारना होगा इससे पहले कि शिक्षण विधियों द्वारा विभिन्नता की समस्या को सुलझाया जाए।

जैसा कि मैंने पूर्व में स्पष्ट किया है कि तीन स्तरों पर 'भिन्नता' की समस्या को सुलझाया जा सकता है। इसमें सर्वप्रथम शिक्षाक्रम पर बात करें कोई भी लोकतांत्रिक देश क्षमताओं, समझ की गहराई तथा ज्ञान की व्यापकता के संबंध में बच्चों के लिए अलग–अलग शैक्षिक मानदण्ड नहीं बना सकता। ये देश के सभी बच्चों के लिए समतुल्य होने चाहिए। लेकिन उसी समझ तथा ज्ञान को बच्चों की उनकी अलग–अलग सामाजिक पृष्ठभूमि के अनुरूप प्रासंगिक बनाया जा सकता है, बच्चों के यथार्थ से जोड़ा जा सकता है। उदाहरण के लिए, गणित जैसे – शाश्वत नियमों वाले विषय में भी अलग–अलग समुदायों में मानसिक गणित के विभिन्न तरीकों को लेकर उन्हें औपचारिक गणितीय अवधारणाओं से जोड़ा जा सकता है। इनके संकल्पनात्मक संबंधों, सरलता या चित्रात्मक सौंदर्य के लिए तुलना तथा विश्लेषण किया जा सकता है। यदि एक शिक्षक, शिक्षाक्रम को बच्चों की समझ तथा वांछनीय क्षमता दोनों ही दृष्टि से सभी बच्चों पर लागू करना चाहे तो उसे कल्पनाशीलता एवं लचीलेपन से काम लेना होगा तथा उसे खुद काफी स्वतंत्रता मिलना जरूरी होगा। चूंकि एक शिक्षिका सभी बच्चों की पृष्ठभूमि के बारे में सूक्ष्म जानकारी तथा उनके मनस के बारे में पूर्ण निर्णय लेने हेतु तैयार करना एक मात्र समझदारी भरा विकल्प है। जैसे कि यह तय करने के पश्चात् कि क्या और कितना सिखाया जाना है – अन्य मसलों पर बच्चे स्वयं शिक्षक की मदद से निर्णय कर सकते हैं, जैसे सीखने की गति, सीखने का क्रम, शिक्षण कार्यक्रम की योजना आदि। बच्चे उदाहरण इकट्ठे कर सकते हैं, छोटे समूह बनाकर तय कर सकते हैं कि प्रत्येक विषय के लिए वे कितना समय देना चाहेंगे। इस प्रकार साझा लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए वे अपने लिए सबसे कारगर तरीके ढूंढ सकते हैं।

'पाठ्यपुस्तक' दूसरा स्तर है जहाँ 'भिन्नता' से दो–चार होना है। किताबें इस तरह तैयार की जा सकती हैं कि वे बच्चों को सोचने और स्वयं खोजने के लिए प्रेरित करें न कि पूर्वनियोजित ज्ञान के छोटे भण्डार बनाएं। बच्चों में 'मानक सोच' रोपने की बजाय उन्हें शिक्षक के कक्षा में सक्रिय हस्तक्षेप के जरिए, अनेक परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत कर आगे खोजा–परखा जाना चाहिए। पाठ्य सामग्री के स्रोत के विषय में बच्चों को बताना एवं उन्हें स्रोत की प्रामणिकता की जाँच के लिए प्रेरित करना एक तरीका हो सकता है। सबसे महत्वपूर्ण, बच्चे पाठ्यपुस्तकों को ऊपरी तौर पर समझने की बजाय उन पर कक्षा में चर्चा कर सकते हैं, चुनौती दे सकते हैं। बच्चे निश्चय ही चर्चा में हिस्सा ले सकते हैं जब वे अपने सांस्कृतिक माहौल, अपनी भाषा या बोली के माध्यम से एवं अपने नजरिए से पाठ्यपुस्तक को जाँचे–परखें। कई उपलब्ध पुस्तकें होने पर पुस्तक चुनने के निर्णय में बच्चों को शामिल किया जा सकता है। अपने साथियों एवं शिक्षक के सहयोग से बच्चे बहुत अच्छे निर्णय करने के काबिल होते हैं।

तीसरा एवं सबसे महत्वपूर्ण स्तर जिसके द्वारा इन भिन्नताओं को सीखने के अवसरों तथा लोकतांत्रिक विमर्श में रूपान्तरित किया जा सकता है वह है, कक्षा–कक्ष। यदि सबके लिए देखभाल, आदर, स्वतंत्रता, समता तथा न्याय जैसे मूल्य कक्षा के वातावरण में दृढ़ता से स्थापित हो तो बच्चे सक्रियता से कक्षा की कार्य संस्कृति के नियम बना सकते हैं। कक्षा–कक्ष की सजावट, छोटे समूह कैसे बनते हैं, कौन–सी गतिविधियाँ चुनना चाहते हैं आदि सभी बच्चों द्वारा निर्धारित की जा सकती हैं। यदि भाषा एवं व्यवहार के सभी तौर तरीके स्वीकार्य हो, साथ ही कक्षा में उनके योगदान को मूल्यवान समझा जाए तो सभी बच्चे आराम से एवं

समानतापूर्वक भागीदारी निभाते हैं। कोई बच्ची जितनी ज्यादा भागीदारी करेगी, उतना ही ज्यादा उसे अपने सोचने के तरीकों व विचारों को साझा करने का मौका मिलेगा और उतना ही ज्यादा वह दूसरों के सोचने के तरीकों से वाकिफ होगी। इससे एक साझी कक्षाई भाषा विकसित होगी, जो सभी सामाजिक रूझानों से बनी होगी और जिसे सब समझते होंगे। लेकिन यह बहुत स्पष्ट हो कि कक्षा में किसी भी मुद्दे पर वाद–विवाद या विमर्श हो सकता है लेकिन किसी की भी हंसी नहीं उड़ाई जा सकती। प्रश्नों का स्वागत है, उपहास का नहीं। यह समझना भी जरूरी है कि किसी का अपमान अथवा मान मर्यादा का हनन अस्वीकार्य है तथा सभी कक्षा नाम के इस छोटे शिक्षण समूह के समान रूप से मूल्यवान सदस्य हैं। दूसरा सिद्धान्त है कि कोई भी चीज़ पूरी तरह समझने एवं राजी होने पर ही स्वीकार की जानी चाहिए। इससे यह जरूरी होगा कि हर बच्चा वहां से सीखना प्रारम्भ करे जहां पर वह अभी है। यदि अभी वे समझ के अलग–अलग स्तर पर हैं, तो वे वहां से शुरू करें जहाँ उन्हें परेशानी न लगती हो, परन्तु सभी को उस मुद्दे की तहत समझ के लिए चुनौती का सामना करना पड़ेगा।

हमारा कार्य अनुभव यह है कि यदि शिक्षक कक्षा विमर्श में ऐसे साझा नियमों/मूल्यों का सृजन करने में सक्षम हो, सभी बच्चों की सक्रिय भागीदारी की कोशिश हो तो भिन्नताओं के प्रश्नों को सुलझाया जा सकता है। मैं यह दावा नहीं कर रहा कि सभी प्रकार की सांस्कृतिक भिन्नताओं का समाधान इस मार्ग में निहित है, किन्तु प्रारम्भिक शिक्षा के स्तर पर, विशेषतः भारतीय परिदृश्य में बच्चों की जानते–समझते हुए सहभागिता समाज में हो रहे नुकसान की भरपाई करने में सहायक हो सकती है।

मैं यहाँ पुनः स्मरण करवाना चाहता हूँ कि इस मार्ग द्वारा निर्णय प्रक्रिया में बच्चों की सहभागिता की सिफारिश की जाती रही है किन्तु यह दावा नहीं किया जा रहा कि बच्चे अपने स्तर पर, बिना शिक्षक की मदद के, स्कूल संबंधी सारे निर्णय ले सकते हैं।

सारांश (Summary)

- भारतीय समाज में विविधता विभिन्न क्षेत्रों में देखी जा सकती है जैसे – वंश, वर्ण, लिंग, भाषा, ध र्म, जाति, सम्प्रदाय, आर्थिक स्थिति, योग्यता आदि।
- भिन्न–भिन्न पृष्ठभूमि के विद्यार्थियों के प्रति समानता का व्यवहार तथा सांस्कृतिक अंतर पहचानते हुए पृष्ठभूमि के अनुरूप व्यववहार ही विविधता की समझ है।
- कक्षा में बच्चे की पहचान को सकारात्मक मान्यता देना व सभी बच्चों के लिए सकारात्मक वातावरण तैयार करना आवश्यक है।
- सीखने–सिखान में विविधता की भिन्नता को ध्यान रखा जाना चाहिए।
- लोकतांत्रिक मूल्यों का समावेश करना ताकि बच्चे सक्रियता से कक्षा की कार्य संस्कृति में सहभागी रहें।

अभ्यास कार्य

इकाई–3 में दिए गए लेख के अध्ययन के निम्न बिन्दुओं/कथनों पर छोटे समूहों में चर्चा करें एवं चर्चा के निष्कर्षों को बिन्दुवार लिखें तथा अगले शाला अनुभव कार्यक्रम में उपयोग करें।

- कक्षा में सभी विद्यार्थियों में चिंतन करने की संस्कृति विकसित करने के तरीके कौन–कौन से हो सकते हैं?

- कक्षा में बच्चों को स्वयं निर्णय लेने के लिए तैयार करना ही एक मात्र समझदारी भरा विकल्प है, स्पष्ट करें।
- आपके प्रथम वर्ष के शाला अनुभव कार्यक्रम के अंतर्गत बच्चों की भागीदारी के आपके अनुभव उदाहरण सहित लिखें।
- इस वर्ष के अपने शाला अनुभव कार्यक्रम में आप अपनी कक्षा की सांस्कृतिक–विविधता का स्रोत के रूप में कैसे उपयोग करेंगे ? लिखें।

परियोजना कार्य

- आप अपनी कक्षा के विद्यार्थियों की विविधताओं की सूची बनाकर योजना बनाएं और लिखें कि उनकी विविधता का उपयोग किस कार्य हेतु और किस प्रकार करेंगे तालिका में लिखें। ध्यान रखें कि स्रोत के रूप में चयनित विद्यार्थियों की संख्या के अनुसार उनकी विशेषता का लाभ कक्षा के अन्य विद्यार्थियों को उपलब्ध कराने के लिए कक्षा को विशेषज्ञ विद्यार्थियों की संख्या के अनुसार उतने ही समूहों में विभाजित करें तथा क्रमानुसार प्रत्येक समूह को उनकी विशेषज्ञता का लाभ लेने के लिए योजना बनाएँ।

तालिका

क्र.	छात्रध्यापक का नाम	विविधता का क्षेत्र	स्रोत के रूप में उपयोग की योजना	विद्यार्थियों की संख्या के अनुसार उनकी प्रतिभागिता की क्रमानुसार सूची
1	नरेन्द्र	कम्प्यूटर	• अन्य छात्राध्यापकों का चयन जो कम्प्यूटर की जानकारी रखते हैं।	
2			• शेष छात्राध्यापकों को चयनित छात्राध्यापकों की संख्या के आधार पर उतने ही समूहों में विभाजन	
3			• प्रशिक्षण हेतु अवधि का निर्धारण एवं समूहों का प्रशिक्षण	
4				
5				

♦♦♦♦♦♦

इकाई – 4

शैक्षिक व्यवस्था में समावेशन : विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के संदर्भ में
(Inclusion in education system : with reference to children with special need (CWSN))

सामान्य परिचय (General Introduction)

'' शिक्षा के भीतर सर्वाधिक ढंग से निष्पक्षता'' के होने का अर्थ है कि हर एक विद्यार्थी का अलग से ध्यान रखा जाए और उसे शिक्षण के ऐसे तरीके, विषय वस्तु और पद्धतियाँ मुहैया कराई जाएँ जो उसकी विशेष जरूरतों, सशक्त पहलुओं और रूचियों के अनुकूल हों।''

– पॉवेल

इस खण्ड में शीर्षक आपको थोड़ा आश्चर्य चकित कर सकता है ''विशेष बच्चे?'' आप सोच रहे होंगे कि सभी बच्चे विशेष होते हैं। और यह सत्य भी है कि प्रत्येक बच्चा अनूठा होता है। प्रत्येक बच्चे का व्यवहार करने का व लोगों से अंतःक्रिया करने का अपना तरीका होता है, उसकी अपनी विशिष्ट रूचियाँ, पसंद व नापसंद होती है। फिर भी कुछ बच्चे दूसरों की तुलना में ज्यादा विशेष होते हैं।

इस खण्ड में हम देखेंगे कि ''विशेष आवश्यकता वाले बच्चों का एक खास अर्थ होता है। हम यह भी पढ़ेंगे कि विशेष बच्चों से हमारा क्या तात्पर्य है? उनकी विशेष आवश्यकताएँ क्या हैं? इनका उनके व्यक्तित्व पर क्या प्रभाव पड़ता है? हमारी इन बच्चों के प्रति क्या भूमिका, जिम्मेदारियाँ, व्यवहार एवं कर्तव्य होने चाहिए। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के माता–पिता की क्या भावनाएं होती होंगी? क्या उन्हें बच्चे के पालन–पोषण में, शिक्षा व्यवस्था में मदद की आवश्यकता है? विशेष बच्चों के लिए हमारे देश में क्या सेवाएँ उपलब्ध हैं?

इकाई के उद्देश्य (Objectives of Unit)

1. विद्यार्थियों को शिक्षा के मौलिक अधिकार प्रदान करना।
2. सभी प्रकार के विभेदीकरण को समाप्त कर सामाजिक संगठन का पोषण करना।
3. विद्यालय के बालकों की शारीरिक, संवेगात्मक तथा सीखने की आवश्यकता को पूरा करने के लिए अपने संसाधनों का विस्तार करना।
4. शिक्षा प्रकृति के साथ–साथ जीवन की तैयारी है अतः इस तैयारी में सहायता प्रदान करना।

समावेशन की अवधारणा (Concept of inclusion) –

समावेशन की नीति को हर स्कूल और सारी शिक्षा व्यवस्था में व्यापक रूप से लागू किये जाने की जरूरत है। बच्चे के जीवन के हर क्षेत्र में वह चाहे स्कूल में हो या परिवार में या बाहर, सभी जगह बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित किये जाने की जरूरत है। स्कूलों को ऐसे केन्द्र के रूप में विकसित किये जाने की आवश्यकता है जहाँ बच्चों को जीवन की तैयारी कराई जाए और यह सुनिश्चित किया जाए कि सभी बच्चों, खासकर शारीरिक या मानसिक रूप से असमर्थ बच्चों, समाज में हाशिये पर जीने वाले बच्चों और कठिन

परिस्थितियों में जीवनयापन करने वाले बच्चों को सबसे ज्यादा फायदा मिले। उन्हें अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करने के मौके और प्रोत्साहन–सहपाठियों के साथ बांटने के अवसर देना बच्चों में प्रोत्साहन और जुड़ाव को पोषण देने का शक्तिशाली तरीका हो सकता है।

स्कूलों में अक्सर कुछ गिने–चुने बच्चों को ही मौका देना उनके आत्मविश्वास को और स्कूल को लोकप्रिय बनाता होगा पर दूसरे बच्चे उपेक्षित महसूस करते हैं और स्कूल में पहचाने जाने की इच्छा उनके मन में भी रहती है। तारीफ करने के लिये हम श्रेष्ठता और योग्यता को आधार बना सकते हैं लेकिन अवसर तो सभी को दिया जाना चाहिए।

इसमें विशेष आवश्यकता वाले बच्चे भी शामिल हैं जिन्हें दिये गये काम को पूरा करने के लिए ज्यादा समय या मदद की जरूरत होती है । ज्यादा अच्छा होगा अगर शिक्षक ऐसी गतिविधियों की योजना बनाते समय कक्षा में बच्चों से चर्चा कर लें एवं बच्चों की सुविधा के अनुसार समूह में कार्यों के विभाजन को प्राथमिकता देवें।

NCF-2005 –

- समावेशी शिक्षा का मतलब सबको समाविष्ट करने से है।
- दिव्यांगता एक सामाजिक जिम्मेदारी है इसे स्वीकार करना है।
- सभी विशेष शैक्षिक आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के विद्यालय में प्रवेश को रोकने की कोई प्रक्रिया नहीं होनी चाहिए।
- बच्चे फेल नहीं होते हैं, वे केवल स्कूल की असफलता दर्शाते हैं।
- समावेशन केवल दिव्यांग लोगों तक ही सीमित नहीं है बल्कि इसका अर्थ किसी भी बच्चे का बहिष्कार न होना भी है।
- मानवीय अधिकार सीखें और मानवीय त्रुटियों पर विजय पाएँ।
- दिव्यांगता समाज द्वारा निर्मित है इसे तोड़ें, तोड़ने का प्रावधान करें, बाधाएं न गढ़ें, बच्चों की जरूरत के साथ सामंजस्य बिठाएँ।
- बाधाएं सामाजिक, भौतिक तथा व्यवहार संबंधी हो सकती हैं, इसे दूर करने का प्रयास करें।
- सहभागिता हमारी शक्ति है, जैसे स्कूल–समुदाय की, स्कूल शिक्षण की, शिक्षक–शिक्षक की, शिक्षक–बच्चों की, बच्चों–बच्चों की, शिक्षक अभिभावक की, स्कूली तंत्र एवं तंत्रों की।
- साथ मिलकर पढ़ना प्रत्येक बच्चे के लिए लाभदायक है इसमें अच्छा व्यवहार भी समावेशित है।
- अच्छा पढ़ाना चाहते हैं तो बच्चों से सीखें, उनकी कमियों को नहीं बल्कि शक्तियों को पहचाने उनमें आपस में आदर और परस्पर निर्भरता को बढ़ाएं।

प्रश्न –

NCF-2005 की तरह NCFTE-2009 में शिक्षा में समावेशन एवं विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के संदर्भ में निहित प्रमुख बिन्दुओं पर एक नोट तैयार कर प्रस्तुत करें।

शैक्षिक व्यवस्था में समावेशन (Inclusion in education system) –

स्कूली शिक्षा से जुड़े कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जिनमें सीखने–सिखाने के क्रियाकलापों और अधिगम अनुभवों को सुदृढ़ करने के लिए सुधार की आवश्यकता है, ताकि सभी बच्चों के लिए सीखने के समान अवसर सुलभ कराए जा सकें। अतः इन क्षेत्रों में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की आवश्यकताओं को जानना और उनको पूरा किया जाना अत्यन्त आवश्यक है।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा का प्रयास भारत में बहुत पुराना है। प्रारंभ में इन बच्चों की शिक्षा के लिए विशिष्ट शालाएँ स्थापित की गयी जिनमें विशेष प्रशिक्षित शिक्षकों द्वारा शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था है।

विशेष शालाएँ या संस्थाएँ ऐसी शालाएँ होती हैं जहाँ विभिन्न दिव्यांगता से ग्रसित विशेष बच्चों को विशेष प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों के माध्यम से विशेष व्यवस्था के साथ शिक्षा प्रदान की जाती है। ये संस्थाएँ प्रायः आवासीय होती हैं, जहाँ दिव्यांगबच्चे अपने परिवार से अलग छात्रावासों में रहते हैं। सोचिए कि क्या ये विशेष शालाएँ इन बच्चों की शिक्षा के लिए उपयुक्त हैं।

श्री एम.एन.जी मणि ने अपनी पुस्तक "Inclusive Education in India Context" में विशेष शाला व्यवस्था, समेकित शिक्षा एवं समावेशी शिक्षा के अंतर को चित्रांकित किया है, जो निम्नानुसार है –

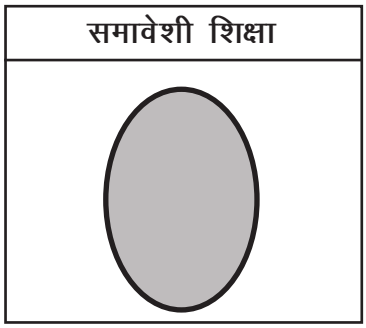

आइए, तीनों व्यवस्थाओं के अंतर को सारणीबद्ध करें –

क्र.	समेकित शिक्षा योजना	विशेष शाला व्यवस्था	समावेशी शिक्षा
1	सामान्य बच्चों की सामान्य कक्षा में सामान्य शिक्षा प्रणाली के एक भाग के रूप में निःशक्त बच्चे शिक्षा ग्रहण करते हैं।	विशेष रूप से निःशक्त बच्चों की शिक्षा के लिए स्थापित शालाओं में निःशक्त बच्चे पृथक शिक्षा ग्रहण करते हैं और उनकी संख्या बहुत कम होती है।	सामान्य बच्चों की सामान्य कक्षा में समाविष्ट होकर सभी प्रकार के निःशक्त बच्चे अपने सामान्य साथियों के साथ शिक्षा ग्रहण करते हैं और वे इस प्रकार सामान्य शिक्षा व्यवस्था की मुख्यधारा में संविलयित हो जाते हैं। इनकी दर्ज संख्या सर्वाधिक होती है।
2	अपेक्षाकृत कम खर्चीली है।	मुख्यतः आवासीय संस्थाएं होने के कारण बहुत अधिक खर्चीली हैं।	सबसे कम खर्चीली है।
3	सामान्य कक्षा के एक भाग मात्र होने का भाव पूर्णतः नहीं मिल पाता शिक्षकों की अभिवृत्ति भी भेदभाव से पूर्णतः मुक्त नहीं होती।	विद्यार्थी शिक्षक एवं व्यवस्था सभी में पृथकता एवं भेदभाव का विचार होता है और विद्यार्थी हीनभाव से ग्रसित रहता है।	सामान्य कक्षा में समावेशित होने से निःशक्त बच्चे स्वयं को सामान्य सहपाठियों के समान समझते हैं और सामान्य कक्षाध्यापक की अभिवृत्ति भी अधिक सकारात्मक बन जाती है।
4	निःशक्त बच्चों को मुख्यधारा में लाकर शिक्षित करने एवं उन्हें समता मूलक शिक्षा देने का लक्ष्य पूर्ण होता है परंतु गुणवत्तापूर्ण एवं न्याय आधारित शिक्षा का लक्ष्य कम सीमा तक पूर्ण होता है।	संविधान सम्मत सभी को समता, समान गुणवत्ता एवं न्यायपूर्ण शिक्षा प्रदान करने का लक्ष्य इससे पूर्ण नहीं होता।	निःशक्त बच्चों को मुख्यधारा में लाकर उन्हें समता, गुणवत्ता व न्याय मूलक शिक्षा देना संभव होता है।

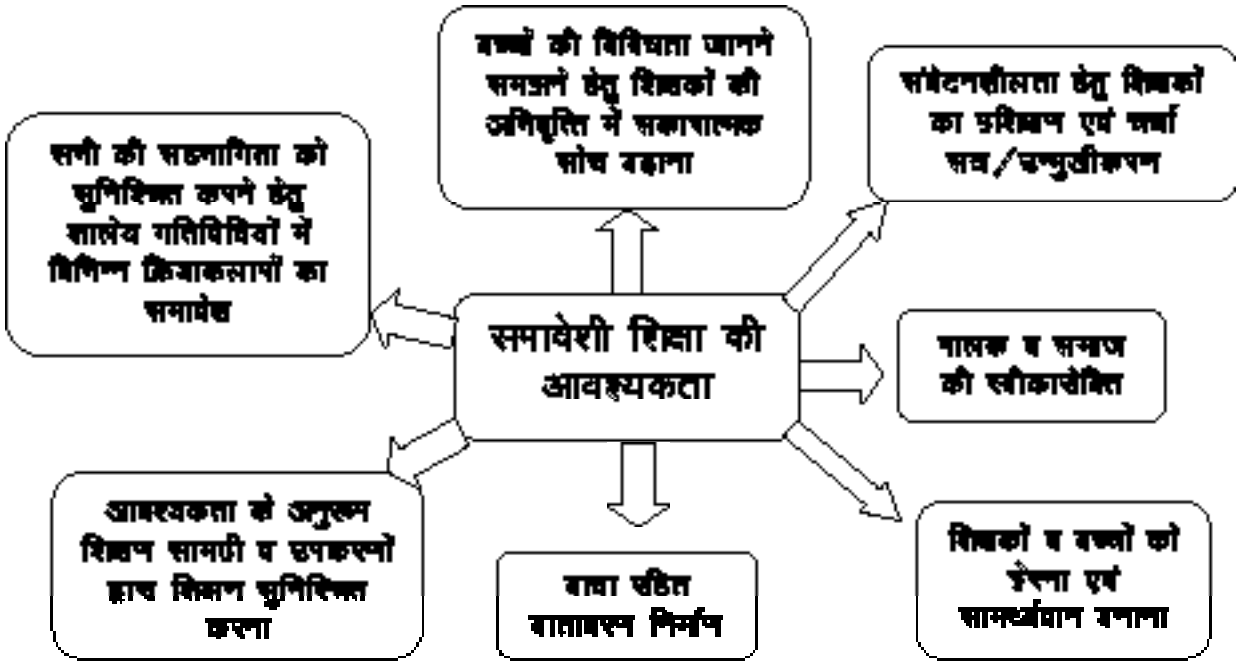

समूह चर्चा –

- समेकित शिक्षा की आवश्यकता पर समूह चर्चा कर प्राप्त बिन्दुओं को सूचीबद्ध कीजिए।
- अपूर्व कक्षा 11वीं का छात्र है, पोलियों से ग्रस्त होने के कारण उसका बायाँ पैर और बायाँ हाथ ठीक से कार्य नहीं कर पाता। अपूर्व की शिक्षा के लिए उसके पालकों, शिक्षकों, साथियों की भूमिका पर चर्चा करें एवं रिपोर्ट बनाएँ।

समावेशन प्रोत्साहन के तरीके/माध्यम (Ways of encouraging inclusion) –

समावेशी शिक्षा हेतु कुछ रणनीतियाँ इस प्रकार हो सकती हैं :–

1. समावेशित विद्यालय वातावरण – बालकों की शिक्षा चाहे वह किसी भी स्तर की हो, उसमें विद्यालय के वातावरण का बहुत योगदान होता है। विद्यालय का वातावरण ही कुछ चीजों की शिक्षा बालकों को स्वयं भी दे देता है। समावेशित शिक्षा के लिए यह आवश्यक है कि विद्यालय का वातावरण सुखद और स्वीकार्य होना चाहिए। इसके अतिरिक्त विद्यालय में विशिष्ट बालकों की विशिष्ट शैक्षिक, सहिष्णुता, दैनिक आवश्यकताओं आदि की पूर्ति हेतु आवश्यक साज–समान शैक्षिक सहायताओं, उपकरणों संसाधनों, भवन आदि का समुचित प्रबंध आवश्यक है। बिना इनके विद्यालय में समावेशित माहौल बनाने में कठिनाई हो सकती है।

2. सबके लिए विद्यालय – समावेशी शिक्षा की मूल भावना है एक ऐसा विद्यालय जहाँ सभी बालक एक साथ शिक्षा प्राप्त करते हैं, परन्तु सामान्यतः इस तरह की बातें देखने और सुनने में आती रहती हैं कि किसी बालक को उसकी विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने में अपनी असमर्थता दर्शाते हुए विद्यालय में प्रवेश देने से मना कर दिया या किसी विशेष विद्यालय में उसके दाखिले के लिए कहा हो।

समावेशित शिक्षा के उद्देश्यों को सभी बालकों तक पहुचाने के लिए यह आवश्यक है कि विद्यालय में दाखिले की नीति में परिवर्तन किया जाना चाहिए। हालांकि शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 इस संदर्भ में एक प्रभावी कदम कहा जा सकता है परन्तु व्यवहारिकता के धरातल पर इसकी वास्तविकता में अभी भी संदेह है।

3. बालकों के अनुरूप पाठ्यक्रम – बालकों को शिक्षित करने का सबसे असरदार तरीका है कि उन्हें खेलने के तरीकों तथा गतिविधियों के माध्यम से सिखाने का प्रयास किया जाना चाहिए। समावेशी शिक्षा व्यवस्था के लिए आवश्यक है कि विद्यालय पाठ्यक्रम, बालकों की अभिवृत्तियों, मनोवृत्तियों, आकांक्षाओं तथा क्षमताओं को ध्यान में रखते हुए निर्धारित किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त पाठ्यक्रम में विविधता तथा पर्याप्त लचीलापन होना चाहिए ताकि उसे प्रत्येक बालक की क्षमताओं, आवश्यकताओं, तथा रूचि के अनुसार अनुकूल बनाया जा सकें, बालकों में विभिन्न योग्यताओं व क्षमताओं का विकास हो सकें, उसे विद्यालय से बाहर, बालक के सामाजिक जीवन से जोड़ा जा सकें, बालकों को सामाजिक रूप से एक उत्पादित नागरिक बनाने में योगदान दे सकें इसके अतिरिक्त बालक के समय का सदुपयोग करने की शिक्षा प्राप्त हो सके।

मार्गदर्शन व निर्देशन की व्यवस्था – विशेष आवश्यकताओं वाले बालकों की शिक्षा एक जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में नियमित शिक्षक, विशेष शिक्षक, अभिभावक और परिवार, सामुदायिक अभिकरणों के साथ विद्यालय कर्मचारियों के बीच सहयोग और सहकारिता शामिल हैं।

समावेशित शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत घर से विद्यालय जाते समय बालक को आरम्भ में नये परिवेश में अपने आपको समायोजित करने में कुछ असुविधा हो सकती है। जैसे आरम्भ में कक्षा के कार्यों में सामंजस्य स्थापित करने में कठिनाई होना, दोस्तों का अभाव, नामकरण आदि के कारण बालक के आत्मविश्वास में कमी होना। इसके अतिरिक्त किशोरावस्था के दौरान होने वाले शारीरिक, मानसिक, सामाजिक परिवर्तनों के कठिनाई के दौर में मार्गदर्शन एवं निर्देशन से बालक को इस संक्रमण काल में काफी सहायता मिलती है। उचित मार्गदर्शन व निर्देशन से बालक और उसके माता–पिता दोनों ही इन परिवर्तनों के लिए मानसिक, शारीरिक और सामाजिक रूप से तैयार किये जा सकते हैं।

4. सहायक तकनीकी उपकरणों का उपयोग – आज के युग में तकनीकी उपायों से मानव जीवन काफी हद तक सुगम हो गया है। मानव जीवन के प्रत्येक पहलू पर आज तकनीक का प्रभाव देखा जा सकता है। समावेशित शिक्षा की सफलता के लिए और उसके प्रचार–प्रसार के लिए शिक्षा व्यवस्था में तकनीक का उपयोग किये जाने की आवश्यकता है। टीवी कार्यक्रमों, कम्प्यूटर, मोबाइल फोन, सहायक शिक्षा व चलिष्णुता तकनीकी उपकरणों का उपयोग करके बालकों की शिक्षा, सामाजिक अंतःक्रिया, मनोरंजन आदि में प्रभावशाली भूमिका निभाई जा सकती है। इस लिए आज आवश्यकता इस बात की है कि समावेशित शिक्षा वातावरण हेतु बालकों, अभिभावकों, शिक्षकों को इसकी नवीन तकनीकी विधियों से परिचित कराया जाये तथा उनके प्रयोग पर बल दिया जाए।

5. समुदाय की सक्रिय भागीदारी– विशेष शैक्षिक आवश्यकता वाले बालकों की शिक्षा की पूरी बुनियाद दल के लिए प्रतिभागिता के अवसर निर्मित करने पर टिकी हुई है। एक अकेले व्यक्ति के प्रयासों से उन्हें शिक्षा की मुख्यधारा में सम्मिलित नहीं किया जा सकता है। समावेशित शिक्षा हेतु यह आवश्यक है कि विद्यालयों को सामुदायिक जीवन का केन्द्र बनाया जाना चाहिए जिससे की बालक की सामुदायिक जीवन की भावना को बल मिले क्योंकि उसे एक निश्चित समय के पश्चात उसी समुदाय का एक सक्रिय सदस्य के रूप में अपनी भूमिका का निर्वाह करना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए समय–समय पर विद्यालय में सांस्कृतिक कार्यक्रम, वाद–विवाद, खेलकूद, देशाटन जैसे मनोरंजक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए और उनमें बालकों के अभिभावकों और समाज के अन्य सम्मानित व्यक्तियों को आमंत्रित किया जाना चाहिए, जिससे इन बालकों के एक समावेशित शिक्षा के वातावरण में शिक्षा ग्रहण करने के संबंध में फैली भ्राँतियों को दूर कर उन्हें इन बालकों की योग्यता व प्रतिभा से परिचित करवाया जा सके।

6. शिक्षकों का पर्याप्त प्रशिक्षण – शिक्षक को ही शिक्षा पद्धति की वास्तविक गत्यात्मक शक्ति तथा शैक्षिक संस्थानों की आधारशिला माना गया है। यद्यपि यह बात सत्य भी है कि विद्यालय भवन, पाठ्यक्रम,

पाठ्य सहगामी क्रियाएँ, सहायक शिक्षण सामग्री, आदि सभी वस्तुएं व क्रियाकलापों का भी शैक्षिक प्रक्रिया में महत्वपूर्ण स्थान होता है, परन्तु शिक्षक ही वह शक्ति है जो प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को सबसे अधिक प्रभावित करता है।

समावेशी शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत शिक्षकों की जिम्मेदारी और भी बढ़ जाती है क्योंकि समावेशित शिक्षा व्यवस्था में अध्यापक उन्हें अपने आपको केवल शिक्षण कार्य तक ही सीमित नहीं रखता है, अपितु विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकताओं वाले बालकों का कक्षा में उचित ढंग से समायोजन करना, उनके लिए विशिष्ट प्रकार की शैक्षिक सामग्री का निर्माण करना, विद्यालय के अन्य कर्मचारियों, अध्यापकों तथा विशिष्ट अध्यापक से बालक की विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सहयोगपूर्ण व्यवहार करना, बालक को मिलने वाली आर्थिक सुविधाओं का वितरण करना आदि कार्य भी करने होते हैं। इसलिए अध्यापक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह पूर्णतः निपुण हो, उसे विशिष्ट सामग्री की जानकारी हो, बालकों के प्रति स्वस्थ व सकारात्मक अभिवृत्तियाँ रखता हो, उनके मनोविज्ञान को समझता हो।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति नजरिया (Opinions for children with special needs)–

दिव्यांगव्यक्तियों के प्रति हमारी प्रमुख धारणाओं में से एक सामान्य धारणा यह है कि उनके कार्य करने के स्तर को बढ़ाने में उनकी कोई सहायता नहीं की जा सकती। हम यह मान कर चलते हैं कि एक व्यक्ति जिसका दायाँ हाथ नहीं है, कभी भी लिखना नहीं सीख सकता, या एक नेत्रहीन साइकिल नहीं चला सकता। निम्नलिखित कथन आमतौर पर सुनने को मिलते है। इनका विश्लेषण करें –

- राजू तो बहरा है। उससे बात करने का कोई फायदा नहीं है।
- उसे यह पुस्तक न ही दो तो अच्छा है। उसे ज्यादा कुछ समझ नहीं आता और यह उसके किसी काम नहीं आएगी।
- क्या कमला तैरने के लिए जा सकती है ? लेकिन वह तो प्रमस्तिष्क सस्तंभ (Cerebral Palsy) से ग्रस्त बालिका है। तुम्हें मालूम है कि उसकी भुजाओं में समन्वय नहीं है।
- वह क्या काम करेगा ? कोई भी ऐसे व्यक्ति को नौकरी नहीं देगा जिसके दाहिने अंग को लकवा मार गया हो।
- राजू को स्कूल भेजना धन बर्बाद करना है। वह न तो सुन सकता है, न ही बोल सकता है।
- इसे संख्या संबंधी कोई समस्या है। मैंने इसे जोड़ करने के मूल सिद्धांत को सिखाने की कोशिश की है, लेकिन लगता है वह सब निरर्थक है। मैने अब इसलिए छोड़ दिया है। हिसाब इसकी समझ से बाहर है।
- लेकिन वह नेत्रहीन है। उसे ''फ्लावर शो'' ले जाने का क्या फायदा है ? वह केवल चीजों को ठोकर मारेगा।

इन कथनों से ऐसा आभास होता है कि दिव्यांग बच्चों की कठिनाइयों को दूर करने के लिए तथा उनके कार्य करने के स्तर को सुधारने के लिए कुछ भी नहीं किया जा सकता। पर क्या आपकी स्वयं के बारे में ऐसी धारणाएँ हैं ? यदि आप बुनना नहीं जानते तो क्या आप कहेंगे कि आप कभी भी सीख नही सकते ? शायद कोई वज़ह रही होगी कि आपने कभी बुनना सीखने का कभी प्रयास नही किया, किन्तु निश्चित तौर पर आप यह नहीं मानते होंगे कि आप में कुछ कमी है जो आपको बुनाई सीखने से रोकती है। उसी प्रकार किसी व्यक्ति ने यदि साइकिल चलाना नहीं सीखा, तो उससे हमें यह निष्कर्ष नहीं निकाल लेना चाहिए कि

वह प्रयास करने पर भी साइकिल चलाना सीख ही नहीं सकता। तब हम ये क्यों मानें कि कार्यशीलता का स्तर अपरिवर्तनीय ही रहेगा और उसे सुधारा नहीं जा सकता ? हर व्यक्ति पहले एक शिक्षार्थी होता है, बाद में वह कुछ और है। प्रत्येक व्यक्ति की अपनी–अपनी सीमा होती है कि वह कितना और कैसा (कितना अच्छा) सीख सकता है, लेकिन ऐसा कोई नहीं है जिसकी कार्य–क्षमता सुधारने में मदद नहीं की जा सकती।

सारांश (Summary)

- प्रत्येक बच्चा अनूठा होता है। उसका लोगों के साथ अंतःक्रियाएँ करने, व्यवहार करने का अपना तरीका होता है। उसकी अपनी विशिष्ट रूचियाँ, पसंद व नापसंद होती है। फिर भी कुछ बच्चे दूसरे बच्चों की तुलना में विशेष होते हैं।
- समावेशी शिक्षा का अर्थ सबको समाविष्ट करना है।
- विशेष आवश्यकता वाले बच्चों का शैक्षिक व्यवस्था में समावेशन उनकी आवश्यकताओं को जानने एवं पूरा करने, सीखने–सिखाने के क्रियाकलाप और अधिगम अनुभवों को सुदृढ़ करने तथा उन्हें पर्याप्त अवसर प्रदान करने से ही संभव है।
- दिव्यांग बच्चों की समावेशी शिक्षा के लिए विद्यालय, पाठ्यक्रम आदि का अनुकूलन, शिक्षकों का प्रशिक्षण आवश्यक है।
- जागरूकता एवं संवेदनशीलता से दिव्यांग लोगों के प्रति समुदाय के नजरिए में सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सकता है।

अभ्यास कार्य –

- समावेशन के द्वारा विभेदीकरण को कैसे समाप्त किया जा सकता है?
- समावेशी शिक्षा की आवश्यकता पर अपने विचार दीजिए।
- बच्चों में सामुदायिक भावना के विकास हेतु विद्यालय/शिक्षक की क्या भूमिका होगी?
- दिव्यांगों के प्रति संवेदनशीलता विकसित करने के क्या प्रयास किए जाने चाहिए?
- क्या आप महसूस करते है कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चों हेतु शिक्षण के अलग–अलग तरीके अपनना उपयोगी है। हाँ तो कैसे?

परियोजना कार्य –

अपने आस–पास के विशेष विद्यालय तथा समावेशी शिक्षा में अध्ययनरत बच्चों के अनुभव, आवश्यकता, अपेक्षा पर साक्षात्कार कर रिपोर्ट लिखिए।

♦♦♦♦♦♦

इकाई – 5

खण्ड–ब

विशेष आवश्यकता वाले बच्चे, वर्गीकरण, प्रकार, पहचान व शिक्षा

(Children with special needs (CWSN), classification, types, identification and education)

सामान्य परिचय (General Introduction)

''अक्षमता ग्रस्त बच्चों को शिक्षित करने का उद्देश्य उनको ऐसे सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश से तालमेल बिठाने के लिए तैयार करना होता है, जो वास्तव में सामान्य लोगों की जरूरतें पूरी करने के लिए निर्मित किया जाता है'' – एक शोध अध्ययन

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान के लिए आवश्यक साधनों, सार्थक प्रयासों तथा सकारात्मक अभिवृत्ति की आवश्यकता है।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान करने के पश्चात ही यह तय हो सकता है कि उन्हें कैसे व किस प्रकार के सहयोग की आवश्यकता है क्योंकि सीखने संबंधी कठिनाईयों की पहचान को अंकित करने से ही बच्चों की भागीदारी बढ़ाकर सीखने का वातावरण तैयार किया जा सकता है। यह वातावरण न सिर्फ शैक्षिक पक्ष को सक्षम बनाने में सहायक होगा वरन् सामाजिक एवं भावनात्मक पक्ष को भी मजबूत करेगा।

इकाई के उद्देश्य (Objectives of Unit)

1. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति संवेदनशीलता एवं सकारात्मक भावना का विकास करना।
2. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की प्रारंभिक स्तर पर पहचान एवं शीघ्र हस्तक्षेप करना।
3. निःशक्त जन अधिनियमों को समझना एवं समुदाय में जागरूकता लाना तथा शासकीय योजनाओं व प्रावधानों को जानना।
4. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के समावेशन के अवसर एवं संभावनाओं हेतु मार्ग प्रशस्त करने की सतत पहल करना।

शीघ्र हस्तक्षेप –

शारीरिक दिव्यांगता के अतिरिक्त कुछ छोटे बच्चे मानसिक रूप से भी दिव्यांग होते हैं उन्हें पहचानना अभिभावकों को भी मुश्किल होता है जैसे आवाज के अनुसार हरकत न करना, सही तरीके से नहीं हँसना, 3 माह का होने पर माता को न पहचानना, सही तरीके से दूध न पीना, चलने, बोलने में देरी होना, जन्म के समय या बाद में नीला पड़ना, दौरे आना, किसी शब्द को बार–बार दोहराना, पीलिया होना, संक्रमण होना, ऑक्सीजन की कमी होना आदि से बच्चे दिव्यांग हो सकते हैं जिनके लिए ''शीघ्र हस्तक्षेप''की आवश्यकता है। हमें स्वयं बच्चों को भावनात्मक रूप से मजबूत करने के लिए उनकी मदद करनी चाहिए।

शीघ्र हस्तक्षेप

योग्य बच्चों में वे बच्चे (जन्म से 36 माह) शामिल हैं।

- विकास के कम से कम एक क्षेत्र में देरी होना।
- देरी के कारण विकास की संभावना में जोखिम की स्थिति होना।

शीघ्र हस्तक्षेप सेवाएँ – 5 क्षेत्रों में प्रत्येक बच्चे के विकास का आकलन किया जाता है।

(1) स्थानांतरित करने, देखने, सुनने की क्षमता (शारीरिक)

(2) सोचने व सीखने की क्षमता (संज्ञानात्मक)

(3) समझने, बात करने, स्वयं को व्यक्त करने की क्षमता (भाषा व भाषण)

(4) दूसरों से संबंधित होने की क्षमता (सामाजिक व भावनात्मक)

(5) खाने, कपड़े पहनने व स्वयं की देखभाल की क्षमता (अनुकूली)

उपरोक्त क्षेत्रों में से जिस क्षेत्र में प्रशिक्षण की आवश्यकता हो, उसके लिए शीघ्र हस्तक्षेप सेवाएँ निजी एवं सार्वजनिक तौर पर प्रदान की जाती हैं।

यदि आप महसूस करते हैं कि आसपास का बच्चा शीघ्र हस्तक्षेप हेतु आकलन की आवश्यकता हो तो गूगल फॉर्म एक्सेस करने का स्थान है–

अली स्टार्ट रेफरल एंड इनटेक फॉर्म

विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों का सामान्य वर्गीकरण –

(General classification of children with special needs)

समाज की सोच में परिवर्तन लाने के लिए हमें चेतना निर्मित करने और अपने–अपने समुदायों में समावेश का प्रचार–प्रसार करने की आवश्यकता है – **रितिका चावल**

सामान्य बच्चों से भिन्नता रखने वाले विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे आपस में भी अनेक असमानताएँ रखते हैं। कुछ बच्चे सीखने की गति में असमानता के कारण, कुछ बौद्धिक क्षमताओं के कारण तथा कुछ असामान्य शैक्षिक उपलब्धि के कारण विशिष्ट आवश्यकता वाले होते हैं। सामान्यतः हम विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों को निम्नलिखित प्रकार से विभक्त कर सकते हैं –

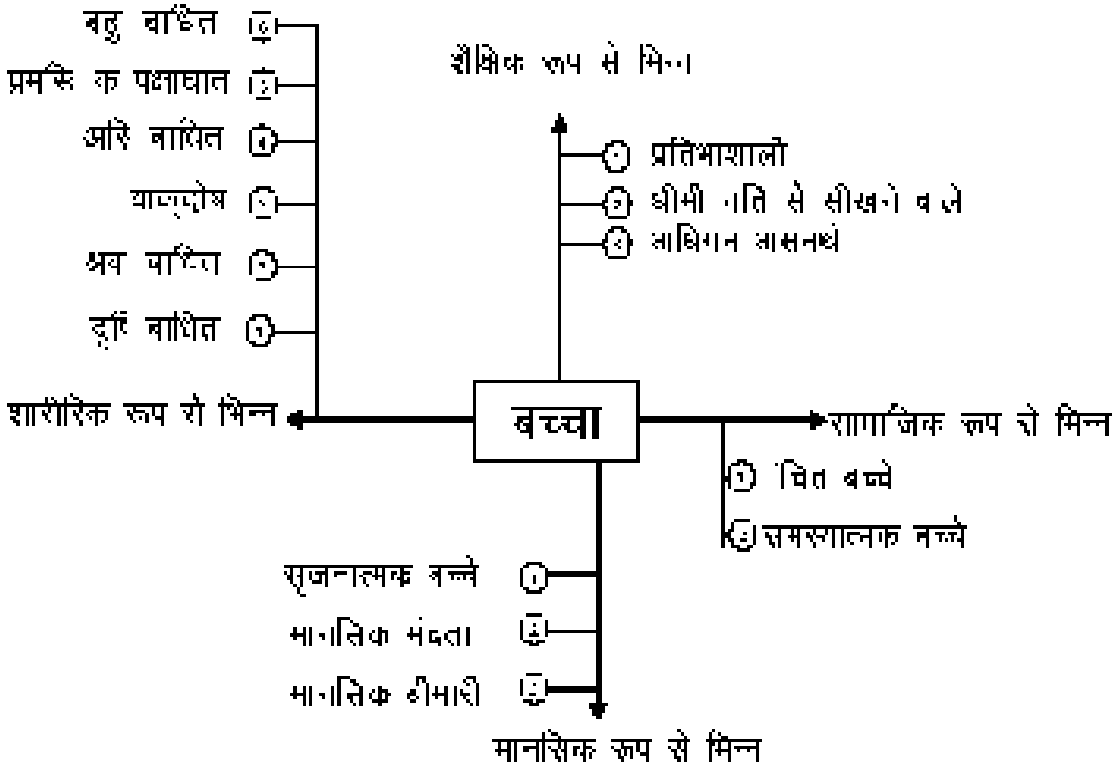

प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान (Identification of meritorious students)

प्रत्येक स्कूल में विभिन्न प्रकार के बच्चे होते हैं। उनमें व्यक्तिगत विभिन्नताएँ भी अधिक देखने को मिलती हैं। इन व्यक्तिगत विभिन्नताओं के आधार पर प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान करना एक अध्यापक के लिए कठिन कार्य है। प्रशिक्षु निम्नलिखित प्रविधियों का प्रयोग कर प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान कर सकते हैं –

(1) बुद्धि परीक्षाएँ (Intelligence Tests) – प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान के लिए कक्षा–कक्षा में बुद्धि–परीक्षणों का प्रयोग कर सकते हैं यह परीक्षण शाब्दिक एवं अशाब्दिक दोनों प्रकारों के हो सकते हैं।

(2) प्रवणता परीक्षा (Aptitude Tests) – प्रवणता परीक्षा के द्वारा बच्चों की क्षमताओं एवं व्यवहार के बारे में अनुमान लगा सकते हैं।

(3) संबंधित व्यक्तियों से एकत्र सूचना (Information from related persons) – जो व्यक्ति बच्चे से संबंधित हों (चाहे परिवार का हो या पड़ोस या विद्यालय का) वे बच्चों के संबंध में सूचनाएँ एकत्र कर प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान कर सकते हैं।

(4) उपलब्धि परीक्षण (Achievment Tests) – प्रतिभाशाली छात्रों की पहचान उपलब्धि परीक्षणों के प्रयोग द्वारा कर सकते हैं।

प्रतिभाशाली बच्चों की विशेषताएँ (Attributes of meritorious students)

(अ) ये बच्चे सामान्य बुद्धि का प्रयोग अधिक करते हैं।

(ब) ये बच्चे रटने की बजाय समझने में विश्वास करते हैं।

(स) इनका शब्द भण्डार विस्तृत होता है।

(द) ये बच्चे कठिन कार्यों को सुगमता पूर्वक कर लेते हैं।

(य) इनका चिन्तन मौलिक होता है।

(र) ये बच्चे स्पष्ट रूप से सोचने, अर्थों को पहचानने और संबंधों को पहचानने में दक्ष होते हैं।

(ल) इनकी ज्ञानेन्द्रियों का विकास तीव्र गति से होता है।

(व) ये अमूर्त चिन्तन एवं अमूर्त विषयों में अधिक रूचि लेते हैं।

(श) इनमें सृजनशीलता का गुण पाया जाता है।

इसके अतिरिक्ति प्रतिभाशाली बच्चों में शीघ्र समस्या समाधान, विद्यालयी कार्य एवं गृहकार्य को सुगमता से करना, अन्तर्दृष्टि, बौद्धिक नेतृत्व, अधिक अंक पाने की प्रवृत्ति एवं क्रियाकलापों में विभिन्नताओं के गुण पाये जाते हैं।

प्रतिभाशाली बच्चों की शिक्षा (Education of meritorious students) –

प्रतिभाशाली बच्चों को किस प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए ? इसका उत्तर देते हुए, 'हैंविग हर्स्ट' ने अपनी पुस्तक "A Survey of The Education of gifted children" में लिखा है कि, ''प्रतिभाशाली बच्चों के लिए शिक्षा का सफल कार्यक्रम वही हो सकता है, जिसका उद्देश्य उनकी विभिन्न योग्यताओं का विकास करना हो।'' इस कथन के अनुसार प्रतिभाशाली बच्चों की शिक्षा इस प्रकार हो सकती है –

- प्रतिभाशाली बच्चों के लिए अवसरों की समानता।
- विशेष एवं समृद्ध पाठ्यक्रम के अन्तर्गत शिक्षा।
- असामाजिक आदतों को रोकना।
- समग्र विकास पर बल।
- संस्कृति की शिक्षा।
- सामान्य बच्चों के साथ शिक्षा।
- पाठ्य–सहगामी क्रियाओं का आयोजन करना।
- सामाजिक अनुभवों के अवसर देना।
- नेतृत्व का प्रशिक्षण देना।
- शैक्षिक कार्यक्रमों का आयोजन करना
- प्रोत्साहन प्रदान करना।
- श्रेष्ठ एवं विशेष रूप से प्रशिक्षित अध्यापकों द्वारा शिक्षण।
- बच्चे की रूचि के अनुसार कार्य देना।
- पुस्तकालय सुविधाएँ उपलब्ध कराना।
- योजना विधि द्वारा शिक्षण।
- विशेष विद्यालयों में शिक्षा।

- विशेष कक्षाओं की व्यवस्था।
- शिक्षक द्वारा व्यक्तिगत ध्यान देना।
- शिक्षा का आधार बच्चे का अध्ययन।
- समय–समय पर विशेष निर्देशन/परामर्श प्रदान करना।

धीमी गति से सीखने वाले बच्चों की विशेषताएँ (Attributes of children who learn slow) –

1. शारीरिक विशेषताएँ –

(अ) मानसिक (ब) शारीरिक (स) मिश्रित (शारीरिक एवं मानसिक दोनों) इन तीनों प्रकार के विशेषताओं वाले बच्चों का शारीरिक तथा मानसिक विकास धीमी गति से होता है। इनमें परिपक्वता भी देर से आती है।

2. अवधारण शक्ति का अभाव – धीमी गति से सीखने वाले बच्चों में स्मरण शक्ति की कमी के कारण धारणशक्ति का अभाव होता है।

3. असुरक्षा का भाव – धीमी गति से सीखने वाले बच्चों में असुरक्षा का भाव अधिक होता है। जिससे उनमें आत्मविश्वास की भावना का अभाव रहता है।

4. अभिव्यक्ति या सम्प्रेषण का अभाव – ये अपने विचारों को अभिव्यक्ति नहीं कर पाते हैं। इनमें भविष्य बोध का गुण भी नहीं होता हैं।

5. समस्याग्रस्तता – धीमी गति से सीखने वाले बच्चे में सामाजिक, सांस्कृतिक तथा शैक्षिक समस्याएं हो सकती हैं।

धीमी गति से सीखने वाले बच्चों की पहचान –

1. निरीक्षण प्रविधि – विद्यालय में प्रवेश के उपरान्त शिक्षक साधारण ढंग या अनौपचारिक तरीके के उनके विभिन्न क्रियाकलापों का अवलोकन कर सकते हैं।

2. एकल अध्ययन विधि – इस ऐतिहासिक शोध प्रविधि के अन्तर्गत अध्यापक द्वारा बच्चे के जन्म से वर्तमान तक की विभिन्न सूचनाओं का उसके मित्रों, रिश्तेदारों, परिवार के सदस्यों के माध्यम से एकत्रित कर उनसे विद्यालयों के अभिलेखों का मिलान कर निदान किया जा सकता है।

3. चिकित्सा परीक्षण – बच्चों से संबंधित सूचना से उसकी शारीरिक बाधिता की जानकारी नहीं हो पाती है। अतएव चिकित्सकीय जाँच कराकर पता लगाया जा सकता है।

4. शैक्षिक परीक्षण – इस परीक्षण द्वारा भी धीमी गति से सीखने वाले बच्चों की पहचान की जा सकती है।

5. व्यक्तित्व परीक्षण – व्यक्तित्व परीक्षणों से बच्चे के सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा संवेगात्मक गुणों का बोध होता है। व्यवहारों एवं समायोजन क्षमता की कमी से इनका पता लगाया जा सकता है।

6. बुद्धि परीक्षण – बुद्धि परीक्षण के द्वारा बच्चों की बुद्धि के विभिन्न क्षेत्रों की जानकारी प्राप्त कर उनके अनुरूप शैक्षिक योजना बनाई जा सकती है।

अधिगम असमर्थता –

ऐसे बच्चों को सुनने, लिखने, समझने, पढ़ने, सोचने तथा अंकों की गणना संबंधी समस्याएं होती हैं जो विकास संबंधी अधिगम असमर्थता को प्रदर्शित करती हैं।

- अधिगम असमर्थता तथा मानसिक मंदता अलग–अलग है दोनो में अंतर है।
- अधिगम असमर्थता तथा शैक्षिक पिछड़ेपन की प्रकृति में भी अंतर होता है।

अधिगम असमर्थता के प्रकार (Types of learning disability) –

- डिस्लैक्सिया
- डिस्ग्राफिया
- डिसकैल्कुलिया
- ADHD ध्यान–अभाव अतिक्रियाशीलता विकृति

डिस्लैक्सिया (Dyslexia) –

ये बच्चे लिखित विषयवस्तु को समझने में असमर्थ होते हैं जो उन्हें अस्पष्ट व धुंधली दिखाई देती है।

डिस्ग्राफिया (Dysgraphia) –

इन बच्चों को तंत्रिका तंत्र की असमर्थता के कारण अपने विचारों को लेखनीबद्ध करने में कठिनाई होती है।

डिसकैल्कुलिया (Dyscalculia) –

इन बच्चों में गणित संबंधी प्रश्नों को हल करने की असमर्थता होती है।

ADHD (ध्यान अभाव –अतिक्रियाशीलता विकृति) (Attention deficit - hyperactivity disorder) -

यह स्नायुतंत्र संबंधी विकृति होती है जिससे ध्यान बंट जाता है। इसमें अतिक्रियाशीलता होती है।

अधिगम असमर्थ बच्चों की शिक्षा –

- पठन कौशल के विकास हेतु गतिविधि कराना।
- सहयोगी अधिगम के अवसर प्रदान करना।
- नियमित रूप से अभ्यास कार्य करवाना।
- खेल विधि का अधिक से अधिक प्रयोग करवाना।
- उपचारात्मक शिक्षण करवाना।
- वास्तविक जीवन के अनुभवों को शिक्षण में शामिल करना।
- कार्य के लिए अतिरिक्ति समय देना।
- स्पष्ट एवं संक्षिप्त निर्देश देना।
- ध्यान केन्द्रित करने वाली गतिविधियों का आयोजन करना।

धीमीगति से सीखने वाले बच्चों की शिक्षा

- शिक्षक द्वारा बच्चे का अवलोकन
- प्रगति आलेख तैयार करना
- अभिक्रमित अनुदेशन करना
- अभिप्रेरणा प्रदान करना
- व्यवहारिक आयाम द्वारा शिक्षा
- सम्प्रत्यय की सरंचना का निर्माण करना
- कार्यों का स्तरीकरण करना
- क्रियात्मक विधियों का प्रयोग

निःशक्तजन अधिनियम के अनुसार दिव्यांगता के प्रकार

(Types of disability according to disability law)

''निःशक्त जन अधिनियम, 1995'' में सात प्रकार की विकलांगता को परिभाषित किया गया है जो निम्नानुसार हैं –

1. दृष्टिहीनता
2. अल्प दृष्टि
3. कुष्ठरोग मुक्त
4. श्रवण क्षति ग्रस्तता
5. गामक अक्षमता
6. मानसिक मंदता
7. मानसिक रूग्णता

इनके अतिरिक्त ''राष्ट्रीय न्यास अधिनियम, 1999'' में चार प्रकार की विकलांगता का वर्णन किया गया है –

1. ऑटिज्म
2. सेरेब्रल पाल्सी
3. मानसिक मंदता
4. बहुनिःशक्तता

हमारी शालाओं में निम्नलिखित प्रकार के विशेष आवश्यकता वाले बच्चे होते हैं जो हमारे लक्षित समूह में हैं – 21 प्रकार की दिव्यंगता अधिकार विधेयक 14.12.2016 जो लोकसभा में पारित हुआ, के अनुसार इसमें PWD Act 1995 की 7 प्रकार की बाधाओं को 21 प्रकारों में विस्तारित किया गया है। केन्द्र शासन के अधिकार क्षेत्र में प्रकारों को बढ़ाया जा सकता है।

1.	दृष्टिबाधित	Total Blindness
2.	अल्प दृष्टिबाधित	Low Vision
3.	कुष्ठ रोग मुक्त	Leprosy Cured Persons
4.	श्रवणबाधित	Hearing Impairment (deaf and hard of hearing)
5.	अस्थिबाधित	Locomotor Disability
6.	बौनापन	Dwarfism

7.	बौद्धिक अक्षमता	Intellactual disability
8.	मानसिक रूग्णता	Mentally Illness
9.	स्वलीनता	Autism Spectrum Disorder
10.	प्रमस्तिष्कीय पक्षाघात	Cerebral Palsy
11.	पेशीय दुर्बलता	Muscular Dystrophy
12.	दीर्घकालिक तंत्रिका तंत्र की स्थिति	Cronic neurological Conditions
13.	विशिष्ट अधिगम अक्षमता	Specific Learning Disabilities
14.	बहुविध ऊतकदृढ़न	Multiple Sclerosis
15.	मूकबाधित (वाणी)	Speech and language disability
16.	थैलेसीमिया	Thalassemia
17.	हीमोफीलिया	Hemophilia
18.	सिकल सेल रोग	Sickle Cell Disease
19.	बहु विकलांगता (श्रवण दृष्टिबाधिता सहित)	Multipal Disability (Including Deaf blindness)
20.	अम्ल आक्रमित व्यक्ति	Acid attack victim
21.	पारकिन्सन्स रोग	Parkinsons disease

शारीरिक रूप से भिन्न बच्चे

(दृष्टिबाधित, श्रवणबाधित, वाक्‌दोष, अस्थिबाधित एवं प्रमस्तिष्क पक्षाघात)

ऐसे बच्चे जिनका कोई न कोई अंग दुर्बल होता है, जिससे वे अपनी सामान्य क्रियाएँ नहीं कर पाते अतः उन्हें शारीरिक अक्षम कहा जाता है।

उपर्युक्त परिभाषा से स्पष्ट होता है कि शारीरिक रूप से अक्षम बच्चों या व्यक्तियों में समायोजन से संबंधित अनेक समस्याएँ होती हैं। इन्हें पाँच वर्गों में विभाजित किया जा सकता है –

(1) दृष्टिबाधित ┌ दृष्टिहीन
└ अल्पदृष्टि

(2) श्रवणबाधित

(3) वाणीबाधित

(4) अस्थिबाधित

(5) प्रमस्तिष्क पक्षाघात

1. दृष्टिबाधित (Vision impaired)

दृष्टिबाधित बच्चे वे बच्चे होते हैं जो मोटे छापे अथवा बड़े छापे की पठन सामग्री अथवा पुस्तकों को पढ़ने योग्य होते हैं। ऐसे बच्चों के नेत्रों में बनने वाले प्रतिविम्ब की तीव्रता बहुत कम होती है। सामान्य बच्चे यदि 70 फीट से किसी वस्तु को देख सकते हैं तो दृष्टि अक्षम बच्चे उसे 20 फीट से देख सकते हैं।

भारत सरकार के समाज कल्याण मंत्रालय के (1987) के अनुसार, ये बच्चे चश्मे की सहायता से मुद्रित पाठ्यवस्तु तथा दृश्य शैक्षिक सामग्री का उपयोग कर लेते हैं।

दृष्टिबाधित बच्चों की पहचान एवं विशेषताएँ –

- ये बच्चे अक्सर सिरदर्द की शिकायत करते हैं और आँखे बन्द कर लेते हैं।
- ये बच्चे बार–बार पलकें झपकाते हैं।
- ये श्यामपट पर लिखी चीजों को लिखते समय बगल में बैठे छात्र से जोर से पढ़ने को कहते हैं।
- पुस्तक तथा अन्य वस्तुओं को आँख के पास ले आते हैं।
- एक आँख को बन्द करके सिर को ऊपर उठाते हैं।
- अक्सर आँखों को मलते रहते हैं।
- इनकी आँखों का आकार भिन्न प्रकार का होता है।
- इनकी आँखों की पलक छोटी एवं आँखें लाल रहती हैं।
- प्रकाश के प्रति संवेदनशील रहते हैं।
- जब ये दूर की वस्तुएँ देखते हैं तब शरीर में तनाव होता है।
- पढ़ने के समय अनुदेशन सामग्री नहीं रखते हैं।
- आँखों से पानी/आँसू बहता रहता है।
- चलते समय गलत तरीके से पैर रखते हैं।
- इनकी आँखों में टेढ़ापन या तिरछापन होता है, अथवा आँखें भारी होती हैं।

दृष्टिबाधित बच्चों के लिए शिक्षा व्यवस्था –

- पहली पंक्ति में बैठाना चाहिए।
- आवश्यकतानुसार ब्लैकबोर्ड के निकट आने देना चाहिए।
- सहायक शिक्षण सामग्री कन्ट्रास्ट रंगों वाली एवं बड़े आकार और उचित अंतराल में दीवारों पर बच्चों की ऊँचाई के अनुसार रखना चाहिए।
- सीढ़ियों पर रंगीन धारियों या विपरीत रंग का पेन्ट होना चाहिए ताकि बच्चों को सीढ़ियों की आसानी से पहचान हो सके।
- शिक्षकों को ब्लैकबोर्ड पर लिखते समय बोलकर लिखना चाहिए।
- स्पर्श द्वारा प्रत्यक्ष वस्तुओं का अनुभव कराना चाहिए।
- साथियों को सहयोग के लिए प्रेरित करना चाहिए।

2. श्रवणबाधित बच्चे (Hearing impaired children)

श्रवणबाधित बच्चों से अभिप्राय–ऐसे बच्चों से है जो सुनने की क्षमता पूर्ण रूप से खो देते हैं।

आंशिक रूप से कम सुनने वाले बच्चे वे हैं जो श्रवण क्षमता को कुछ सीमा तक खो देते हैं। ऐसे बच्चों के जोर से की गई ध्वनि अथवा बोली गई आवाज़ को सुनने के लिए श्रवण यंत्र की आवश्यकता नहीं होती है। यदि इनके लिए श्रवण यंत्र उपलब्ध हो तो आवाज़ को और अच्छी प्रकार से सुन सकेंगे। ऐसे बच्चों को सामान्य स्कूलों में तथा सामान्य बच्चों के साथ शिक्षा देने में कठिनाई नहीं आती है। जब किसी बच्चे के श्रवण अंगों में कोई दोष होता है तब इसे श्रवणबाधित कहा जाता है। यह दोष कान के बाहर अन्दर तथा मध्य में भी हो सकता है।

श्रवणबाधित बच्चों की पहचान एवं विशेषताएँ

श्रवणबाधित बच्चों के लक्षण निम्नलिखित हो सकते हैं –

- इनके व्यवहार में लगातार एकाग्रता नहीं होती है।
- ऐसे बच्चे गतिविधियों के विषय में और कार्यों के प्रति अधिक सजग होते हैं।
- अध्यापक के होठों की गतिविधि और उसके हाव–भाव पर ध्यान देते हैं।
- ये अपने सिर को एक ओर झुकाकर या घुमाकर सुनने का प्रयास करते हैं।
- प्रश्न पूछने पर अध्यापक से दुबारा पूछने को कहते हैं।
- एक जैसी ध्वनि के शब्दों से उन्हें प्रायः भ्रम हो जाता है।
- बिना जानकारी के भी वार्ता के बीच में बिना वजह बोलते हैं।
- शाब्दिक निर्देशनों को समझने में और अनुसरण करने में कठिनाइयाँ होती हैं।
- कक्षा में ध्वनि के श्रोत को नहीं जान पाते हैं।
- शब्दों के सही उच्चारण में उन्हें कठिनाई होती है।
- बिना जानकारी के बड़बड़ाते रहते हैं।
- अधिक धीरे या अधिक तेज बोलते हैं।
- इनकी भाषा का पूर्ण विकास नहीं हो पाता है।
- कभी–कभी कान दर्द की शिकायत करते हैं।

श्रवणबाधितों का वर्गीकरण

1. अल्प श्रवणबाधित
2. मन्द श्रवणबाधित
3. गंभीर श्रवणबाधित
4. पूर्ण/गहन श्रवणबाधित

श्रवणबाधित बच्चों के लिए शिक्षा व्यवस्था –

(1) इनकी शिक्षा के लिए विशेष सम्प्रेषण तकनीक अपनायी जानी चाहिए जिसमें कि ओष्ठ पठन विधि, संकेत भाषा का प्रयोग करके, स्पर्श विधि से, शरीर से विभिन्न गति करवाकर एवं ध्वनि प्रवर्धक यंत्रों का प्रयोग, जैसी उपयोगी सम्प्रेषण विधियों का प्रयोग प्रभावी रहेगा।

(2) शिक्षण तकनीकी का प्रयोग – श्रवण बाधित बच्चों के लिए सहायक सामग्री जैसे – आकृतियाँ, चित्र, संकेत शब्द, मॉडल, मानचित्रों का प्रयोग किया जा सकता है। इनके लिए कम्प्यूटर अनुदेशन विधि लाभदायी है।

(3) पृथक कक्षाओं की व्यवस्था लाभदायक है।

(4) शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन – श्रवण बाधित बच्चों की अभिरूचि, अभियोग्यता को ध्यान में रखकर उन्हें शैक्षिक निर्देशन दिया जाना चाहिए। उन्हें आवश्यकतानुसार व्यवसायिक प्रशिक्षण भी प्रदान किया जाना चाहिए ताकि वे अपनी दैनिक जरूरतों के अनुसार धनार्जन कर सकें।

3. वाक्‌दोष या वाणीबाधित (Speech impaired)

वाक्‌दोष का अर्थ

प्रायः हमने अपने सामाजिक जीवन में देखा है कि जिन लोगों में वाक्‌दोष पाया जाता है, उनमें ध्वनि स्थानान्तरण, विचलन, विकृति एवं योग देखने को मिलता है जैसे कि – आ रहा हूँ, को आरांऊ, 'पानी' को 'मानी' चाकू को 'कॉचू', 'अमरूद' को 'अरमूद', आदि प्रकार का दोष देखने को मिलता है। उच्चारण बाधा होना भी एक वाकदोष है।

वाक्‌दोष वाले बच्चों की पहचान एवं विशेषताएँ –

- जो बोलते हैं वह स्पष्ट नहीं होता, बोलने में संकोच करते हैं तथा धारा प्रवाह नहीं बोल पाते हैं।
- इनकी आवाज में मधुरता नहीं होती है। इनकी बोली में आयु अनुरूप अनुकूलता नहीं होती है।
- कुछ बच्चों में श्रवण प्रक्रिया में दोष होना अथवा नाक के स्वर में बोलना, क्योंकि उनमें नासिक दोष होता है।
- कुछ बच्चे बोलने में तुतलाते हैं। धारा प्रवाह बोलने में उन्हें कठिनाई होती है, रूक–रूक कर बोलते हैं परन्तु बलपूर्वक बोलते हैं।

वाक्‌दोष के प्रकार

1 प्रक्रियात्मक तथा उच्चारणात्मक दोष

2 हकलाना

3 आवाज की समस्या

4 अंगीय वाणी के दोष

5 कम सुनने वाले बच्चों के साथ वाणी की समस्या

वाक्‌दोष वाले बच्चों की शिक्षा व्यवस्था

वाक दोष वाले बच्चों की शिक्षा में मनोवैज्ञानिकों एवं नाक, कान, गला विशेषज्ञों की सलाह से कार्य किया जाए तथा निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रखकर शिक्षा प्रदान की जा सकती है –

• **पर्याप्त अभिप्रेरणा प्रदान करना** – अध्यापकों को सबसे पहले ऐसे बच्चों को चिन्हित कर उन्हें प्रोत्साहन एवं अभिप्रेरणा प्रदान करना चाहिए। इससे उनके आत्म विश्वास में वृद्धि होगी और वे उत्सुकता से सीखने के लिए प्रेरित होंगे।

• **दोष पर बल न देना** – शिक्षक को वाक्‌दोष वाले बच्चों के बाधित स्तर एवं मात्रा पर अधिक बल नहीं देना चाहिए अन्यथा वे हतोत्साहित हो जायेंगे तथा उनमें अपेक्षित सुधार नहीं हो पायेगा।

• **सही निदान करना** – किसी भी वाक्‌दोष वाले बच्चे को शिक्षा देने से पूर्व उसकी आवश्यकतानुसार (स्तर एवं मात्रा का पता लगा कर) ही निदान करना चाहिए क्योंकि जल्दबाजी में किया गया निदान गलत निष्कर्षों को जन्म देता है। परिणामस्वरूप अपेक्षित सुधार के स्थान पर अनापेक्षित क्षति की सम्भावना होती है।

• **उपयुक्त वाक अभ्यास** – वाक् दोष वाले बच्चों को समुचित एवं पर्याप्त वाक् अभ्यास देना चाहिए। बच्चे के लिए कैसा अभ्यास प्रभावी रहेगा इसका पता निदान करते समय ही चल जाता है। शिक्षक को बच्चों के सामने सही एवं गलत, दोनों स्वयं बोलकर तत्पश्चात बच्चों से अनुकरण अभ्यास कराया जाना चाहिए।

• **लज्जा एवं घबराहट से बचाव** – शिक्षक वाक् दोष से पीड़ित बच्चों की कक्षा में लज्जा एवं घबराहट उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों को दूर करें। प्रायः सामान्य कक्षाओं में इन बच्चों में कुंठा एवं अवसाद की स्थिति का जन्म होता है।

जहाँ तक संभव हो सके ऐसे बच्चों का पता उनके बाल्यकाल में ही लगाकर उपयुक्त उपचार कराना चाहिए ताकि सामान्य बच्चों के साथ उनका समायोजन स्थापित हो सके।

4. अस्थिबाधित बच्चे (Orthopedic impaired children)

अस्थि बाधित बच्चे ऐसे बच्चे होते हैं जिनकी अस्थियाँ, अस्थियों के जोड़, अथवा शरीर में विभिन्न मांसपेशियाँ सुचारू रूप से कार्य नहीं कर पाती हैं। उनकी कार्य करने की मात्रा इतनी कम होती है कि उन्हें कृत्रिम रूप से हाथ या पैर की आवश्यकता पड़ती है।

अस्थिबाधित बच्चों की पहचान एवं विशेषताएँ –

- शारीरिक अंगों पर समुचित नियन्त्रण न होना।
- बैसाखियों की सहायता से चलना।
- शारीरिक कार्यों तथा अभ्यास में दर्द एवं कठिनाई का अनुभव करना।
- वस्तुओं को उठाने एवं रखने में कठिनाई का अनुभव करना।
- लड़खड़ा कर चलना।
- चलते–चलते गिर जाना।
- शारीरिक अंगों की गतिविधि में नियन्त्रण का अभाव।
- अंगों का असामान्य होना।

- जोड़ों में दर्द रहना।
- चलने में कठिनाई का अनुभव होना ज्यादा न चल पाना।
- नकली अंगों की सहायता लेना/उपयोग करना।

अस्थिबाधित बच्चों के लिए शिक्षा व्यवस्था –

इन बच्चों की अभिवृत्तियों में परिवर्तन करके तथा विशिष्ट अधिगम अनुभव करवाकर इनकी समस्या के अनुसार सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में सहयोग कर इन्हें सामान्य बच्चों की तरह शिक्षा अध्ययन के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

प्रमस्तिष्कीय पक्षाघात (CP) वाले बच्चे (Children with cerebral palsy) –

- बच्चे का सिर–गर्दन अनियंत्रित रहता है तथा लार बहती रहती है।
- माँसपेशियों में कड़ापन या ढीलापन पाया जाता है जिसके कारण उठने–बैठने में कठिनाई होती है।
- बात करते समय मुखाकृति असामान्य हो सकती है।
- बच्चों में असहज चाल जैसे कैंचीनुमा चाल, झूलते हुए चलना, पैर फैलाकर चलना व अवांछित शारीरिक स्थिति/असंतुलन हो सकता है।
- सकल गामक कौशल जैसे बैठना, चलना, कूदना, चढ़ना, झुकना आदि में बच्चे को कठिनाई हो सकती है।
- सूक्ष्म गामक कौशल जैसे कंघी करना, ब्रश करना, बटन लगाना, हाथों से भोजन करने में समस्या तथा चिपकाना, लिखना आदि गतिविधियों में कठिनाई हो सकती है।
- बच्चे को झटका आ सकता है/सकती है।

प्रमस्तिस्कीय पक्षाघात (CP) वाले बच्चों के लिए व्यवस्था –

इन बच्चों की अभिवृत्तियों में परिवर्तन करके तथा अधिगम अनुभव करवाकर समस्या के अनुसार सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में सहयोग कर सामान्य बच्चों की तरह इन्हें भी प्रेरित किया जा सकता है।

बहुलबाधित बच्चे –

ऐसे बच्चे को जो 2 या 2 से अधिक निःशक्तता से ग्रसित होते हैं, बहुल बाधित कहा जाता है।

बहुलबाधित बच्चों की शिक्षा व्यवस्था –

इन बच्चों की समस्या और बाधिता के प्रकार के आधार पर इन्हें सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में शामिल किया जाना चाहिए। इन्हें विभिन्न कौशलों के विकास की शिक्षा भी दी जानी चाहिए।

मानसिक रूप से भिन्न बच्चे

1. सृजनात्मक 2. मानसिक मंदता 3. मानसिक बीमारी

1. **सृजनात्मक बच्चे (Creative children) –**

प्रत्येक बच्चा अपने आप में अनूठा होता है। सृजनात्मक बच्चों की पहचान भी शिक्षक के लिए

महत्वपूर्ण कार्य है ऐसे बच्चे कल्पनाशील, लीक से हटकर कार्य करने वाले होते हैं। नए विचारों का सृजन करना एवं तर्क करना इनकी पहचान हो सकती है।

कई बार यह भी देखा जाता है कि ये बच्चे अपना काम तो तुरंत कर लेते हैं और अन्य बच्चों को कार्य में बाधा पहुंचाते हैं। अतः शिक्षक इनकी पहचान कर इनका उपयोग अन्य बच्चों को मदद करने में कर सकते हैं।

सृजनात्मक बच्चों की शिक्षा –

1. अध्यापन में विषयवस्तु को अन्य संदर्भों में बदलकर प्रस्तुत करना चाहिए।

2. शैक्षिक गतिविधि के आयोजन में इनकी सहभागिता, सलाह लेना चाहिए।

3. इनके किए गए कार्यों/नवाचारों की पहचान, सराहना भी करना चाहिए।

4. इन्हें चुनौतीपूर्ण एवं परियोजना कार्य का दायित्व भी दिया जा सकता है।

2. मानसिक मंदता वाले बच्चे (Mentally retarded children) –

ऐसे बच्चे जिनकी दैनिक कार्यों को करने की क्षमता उनकी आयु अनुरूप नहीं होती, उन्हें मानसिक मंद बच्चे कहा जाता है।

मानसिक मंदता वाले बच्चों की पहचान एवं विशेषताएँ –

1. बच्चे का समान आयु समूह के बच्चों की तुलना में बौद्धिक स्तर का कम होना।

2. बच्चे की शैक्षणिक उपलब्धियाँ लगातार न्यून होना।

3. वास्तविक वस्तुओं के प्रस्तुतीकरण पर बहुत अधिक निर्भर रहना।

4. एकाग्रता का अभाव रहता है।

5. स्मरण शक्ति की अवधि भी कम होना।

6. सम्प्रेषण काफी सीमित दायरे में होता है।

7. बार–बार दुहराने और अभ्यास करने की आवश्यकता पड़ती है।

8. सामूहिक गतिविधियों में पहल नहीं करते हैं।

9. प्रायः ध्यान इधर–उधर और उखड़ा हुआ होता है।

10. सूक्ष्म गामक कौशल जैसे कंघी करना, ब्रश करना, बटन लगाना, हाथों से भोजन करने में समस्या, चिपकाना, लिखना आदि गतिविधियों में कठिनाई होती है।

11. अपनी दैनिक क्रियाओं जैसे–शौच की आदतें, नहाना, कपड़े पहनना, स्वयं को स्वच्छ रखने में एवं सामान्य घरेलू कार्य करने में असमर्थ या दूसरों पर निर्भर रहते हैं।

12. दिये गए निर्देश समझने में कठिनाई महसूस करते हैं।

13. बच्चे में असामान्य व्यवहार – जैसे स्वयं को काटना, उग्र होना, स्वयं को व दूसरों को चोट पहुँचाना।

14. डाउन सिंड्रोम वाले बच्चे की पहचान–मंगोल बच्चे जैसे, आँखें तिरछी, नाक चपटी, कान छोटे–छोटे, शरीर काफी भारी, कद छोटा, गर्दन छोटी एवं चौड़ी, हाथ छोटा, उँगलियाँ छोटी होती हैं।

मानसिक मंदता वाले बच्चों की शिक्षा –

1. ऐसे बच्चों को सभी कार्यों के लिए बार–बार अभ्यास की आवश्यकता होती है।

2. बच्चों की रूचि के अनुसार उन्हें प्रेरित कर दैनिक कार्यों में स्वावलंबी बनाने की आवश्यकता होती है।

3. छोटे निर्देशों द्वारा सिखाने की आवश्यकता होती है।

4. कौशल विकास कर इन्हें सीखने–सिखाने में मदद करना चाहिए।

5. सरल से कठिन, ज्ञात से अज्ञात और संपूर्ण से अंश विधियों को प्रयोग कर सिखाना चाहिए।

3. मानसिक बीमारी से ग्रस्त बच्चे (Children with mental disorder) –

ऐसे बच्चे जो शारीरिक, सामाजिक, भावनात्मक कारणों से मानसिक रूप से बीमार हो जाते हैं। इनकी मानसिक चिकित्सा उपरांत समाधान हो जाता है।

मानसिक बीमारी वाले बच्चों की विशेषताएँ –

1. सोचने में, समझने में, व्यवहार में अथवा तीनों में परिवर्तन दिखाई देता है।

2. बच्चे में अनावश्यक चिंता व घबराहट हो सकती है।

3. बच्चे में नींद एवं भूख की समस्या (कम या अधिक) हो सकती है।

4. बच्चे मरने या घर छोड़ने की बात दोहरा सकते हैं।

5. बच्चे में व्यक्तिगत स्वच्छता का अभाव हो सकता है।

7. बच्चे का अनपेक्षित व्यवहार जैसे – जोर से चिल्लाना, हंसना, रोना, किसी एक जगह को घूरते रहना, बिना कारण के डरना, संदेह करना आदि हो सकता है।

मानसिक बीमारी वाले बच्चों की शिक्षा –

इस प्रकार के बच्चों के लिए सकारात्मक सोच एवं वातावरण निर्माण द्वारा शिक्षा दी जा सकती है।

4 सामाजिक रूप से भिन्न बच्चे (Children who are socially deprived) –

वंचित बच्चे –

यहाँ वंचन का अर्थ है अपेक्षित शैक्षिक अवसरों की कमी, न कि किसी समूह की सदस्यता के अनुभवों में कमी। इसमें परिवेशीय अनुभव प्रमुख होने के कारण बच्चों के विकास पर सीधा किन्तु निषेधात्मक प्रभाव पड़ता है।

वंचित बच्चों की पहचान एवं विशेषताएँ –

(1) निम्न महत्वाकांक्षा

(2) निम्न शैक्षिक उपलब्धि

(3) भ्रमणकारी (घुमन्तु) जनजाति (Nounadic Tribe)

(4) सन्दर्भित जनजाति (Denotified Tribe)

(5) पिछड़ी जाति

(6) श्रमिक परिवारों के बच्चे

वंचित बच्चों की शिक्षा –

ऐसी शिक्षा जो जो समाज एवं संस्कृति के विशिष्ट सन्दर्भ में वंचन से प्रभावित बच्चों को उनकी क्षमता अनुसार के उपयुक्त अवसर दे सके। इस दिशा में पर्याप्त शोध तथा अध्ययन अपेक्षित है।

समस्यात्मक बच्चे (Problematic Children)

समस्यात्मक बच्चों से हमारा तात्पर्य उन बच्चों से है जो परिवार एवं कक्षा व विद्यालय में भाँति–भाँति की समस्याएं उत्पन्न करते हैं। ऐसे बच्चों का व्यवहार सामान्य प्रकार के बच्चों से भिन्न होता है। वे वातावरण के साथ अपने आप को समायोजित नहीं कर पाते हैं। ऐसे बच्चे अपने अध्यापकों के लिए समस्या बने रहते हैं। समस्यात्मक बच्चे कई प्रकार के हो सकते हैं जैसे–चोरी करने वाले बच्चे, झूठ बोलने वाले बच्चे, क्रोध करने वाले बच्चे, विद्यालय से भाग जाने वाले बच्चे, गृहकार्य न करने वाले बच्चे, कक्षा में देर से आने वाले बच्चे आदि। समस्यात्मक बच्चों के समस्यात्मक व्यवहार के कारणों को जानकर ऐसे बच्चों के व्यवहार में सुधार लाया जा सकता है। प्रायः बच्चे आवश्यकताएं पूरी न होने पर, अत्यधिक लाड–प्यार में, कठोर अनुशासन के कारण या असुरक्षा की भावना के कारण, विभिन्न प्रकार के समस्यात्मक व्यवहार करते हैं। समस्यात्मक बच्चों को उनके समस्यात्मक व्यवहार के लिए प्रताड़ित अथवा शारीरिक दण्ड न देकर मनोवैज्ञानिक ढंग से शिक्षा देनी चाहिए।

समस्यात्मक बच्चों की पहचान –

(1) निरीक्षण विधि का प्रयोग करके

(2) साक्षात्कार द्वारा

(3) अभिभावकों, शिक्षकों तथा मित्रों से वार्तालाप द्वारा

(4) कथात्मक अभिलेख द्वारा

(5) संचयी अभिलेख के द्वारा

(6) मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के द्वारा

समस्यात्मक बच्चों की शिक्षा –

(1) इन बच्चों के प्रति प्रेम, सहानुभूति तथा सहयोगात्मक व्यवहार करना चाहिए।

(2) ऐसे बच्चे की मूल प्रवृत्तियों का दमन न करके उनका शमन या परिशोधन किया जाना चाहिए।

(3) इन बच्चों को अच्छे कार्य के लिए प्रोत्साहन तथा पुरस्कार दिया जाना चाहिए।

(4) ऐसे बच्चे के सहयोगियों का गुप्त निरीक्षण रखना चाहिए।

(5) इन बच्चों को नैतिक शिक्षा प्रदान करनी चाहिए।

(6) ऐसे बच्चों को मनोरंजन के उचित अवसर दिये जाने चाहिए।

(7) ऐसे बच्चे की व्यक्तिगत आवश्यकता की पूर्ति की जानी चाहिए।

(8) अध्यापक का व्यवहार मधुर एवं सहयोगात्मक होना चाहिए।

(9) इन बच्चों की आवश्यकता, परिस्थिति तथा क्षमता के अनुरूप ही उन्हें गृहकार्य दिया जाना चाहिए।

सारांश (Summary)–

1. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान कर शीघ्र हस्तक्षेप करना आवश्यक होता है।
2. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान के अनुरूप शिक्षण व्यवस्था से उन्हें विकास के अवसर मिलते है।
3. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों हेतु प्रावधानों और योजनाओं का लाभ बच्चों को उपलब्ध कराना आवश्यक है।
4. विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों को समावेशन के अवसर मिलने से उनकी अपेक्षाओं को पूरा करने के अवसर मिलते हैं।

अभ्यास कार्य –

1 शैक्षिक रूप से भिन्न बच्चों की विशेषताओं को समझाइए व यह भी स्पष्ट कीजिए कि उनकी शिक्षा कैसी होनी चाहिए?

2 सृजनात्मक बच्चों की विशेषताओं को समझाइए।

3 मानसिक रूप से भिन्न बच्चों की पहचान व उनकी शिक्षा व्यवस्था में आपकी क्या भूमिका होगी?

4 दिव्यांगता के प्रकार के आधार पर शीघ्र हस्तक्षेप क्यों जरूरी है, समझाइए।

परियोजना कार्य –

- अपने आस–पास के विशेष विद्यालय तथा समावेशी शिक्षा में अध्ययनरत बच्चे के अनुभव, आवश्यकता, अपेक्षा पर साक्षात्कार कर एक रिपोर्ट लिखिए।
- विशेष विद्यालयों के शिक्षकों से मुलाकात कर शिक्षण तकनीकों की सूची बनाएं।

♦♦♦♦♦♦

इकाई – 6

समावेशन के अवसर व संभावनाएँ

(Opportunities and possibilities of Inclusion)

सामान्य परिचय (General Introduction)

''सक्रिय नागरिक समुदाय ही शिक्षा की संस्था को एक सक्रिय, समावेशी तथा भेदभाव मुक्त संस्था में रूपांतरित करेगा और सक्रिय, समावेशी तथा भेदभाव मुक्त स्कूलों की संस्था क्रमिक रूप से एक सक्रिय नागरिक समुदाय विकसित करेगी''

– नदीम अली हैदर खान

समावेशन के चारों ओर वैचारिक, दार्शनिक, सामाजिक व शैक्षिक ढांचा होता है वही समावेशन के अवसरों की प्रभावित करता है, समावेशन से बच्चे न केवल लोकतंत्र की भागीदारी के लिए सक्षम बनेंगे बल्कि सीखने व विश्वास करने के लिए भी तैयार हो सकेंगे। ये अवसर ही उनके विकास की संभावनाओं को सु. निश्चित करेंगे।

इकाई के उद्देश्य (Objectives of Unit)

1. समावेशन हेतु अभिभावक, शिक्षक, समाज में जागरूकता लाना।
2. समाज में समावेशन की भूमिका, चुनौतियों को समझना।
3. शिक्षा में समावेशन के वैचारिक एवं दार्शनिक आधार को समझना।
4. समाज में दिव्यांगों के समावेशन व उपलब्धियों को जानना व प्रेरित करना।

समावेशी शिक्षा के मायने

उर्दू के मशहूर शायर साहिर लुधियानवी ने अपनी किताब '' तलखियाँ'' की भूमिका में लिखा है....

''दुनिया के तजुर्बातों हवादिस की शक्ल में,
जो कुछ दिया है उसको ही लौटा रहा हूँ मैं।''

साहिर के इस शेरे जिक्र का मकसद यही कहने की कोशिश है कि मैं यह भरसक प्रयास करूँगा कि समावेशी शिक्षा से जुड़े तमाम खट्टे–मीठे अनुभव बेबाकी से बयान कर सकूँ। यह इसलिए जरूरी है ताकि समावेशी शिक्षा से जुड़े तरह–तरह के लोगों से इसके कुछ पहलुओं के सन्दर्भ में यथार्थपरक समझ बनने में कुछ मदद मिल सके।

समावेशी शिक्षा का आशय दिव्यांग विद्यार्थियों (जिन्हें आजकल विशिष्ट आवश्यकताओं वाले विद्यार्थी कहा जाता है) को सामान्य बच्चों के साथ बिठाकर सामान्य रूप से पढ़ाना है, ताकि सामान्य बच्चों और विशिष्ट आवश्यकताओं वाले बच्चों में कोई भेदभाव न रहे तथा दोनों तरह के विद्यार्थी एक–दूसरे को ठीक ढंग से समझते हुए आपसी सहयोग से पठन–पाठन के कार्य को कर सकें।

समावेशी शिक्षा का एक व्यापक लक्ष्य यह भी प्रतीत होता है कि एक साथ शिक्षित होने पर भविष्य में समाज के अन्दर विशिष्ट आवश्यकता वाले व्यक्तियों के सरोकारों को आम लोग बेहतर ढंग से समझ सकें तथा उनमें उनके प्रति अपेक्षित संवेदनशीलता का विकास हो सके।

एक अनुभव

एक विद्यार्थी के रूप में मुझे समावेशी शिक्षा को विद्यार्थी, शिक्षा कार्यकर्ता तथा शिक्षक तीनों स्तरों पर देखने का मौका मिला है। हर स्तर पर मैंने अलग–अलग तरह के अनुभव प्राप्त किए। विद्यार्थी के तौर पर मैंने कक्षा नौंवी से स्नातकोत्तर तक स्वयं समावेशी शिक्षा प्राप्त की। पीछे मुड़कर देखने पर मुझे याद आता है कि नौवीं कक्षा के प्रारंभिक दिनों में मुझे कक्षा की अन्तिम या कभी–कभी सबसे पहली बैंच पर बिठाया जाता था और ज्यादातर विद्यार्थी मुझ से बात नहीं करते थे। अधिकतर शिक्षक भी 'सकारात्मक भेदभाव' करते हुए बच्चों को मेरा ध्यान रखने तथा मुझसे शरारते न करने की हिदायतें देते रहते थे। प्रारंभिक दिनों में न तो वे मेरा गृहकार्य जाँचते थे और न ही मुझसे प्रश्नों के उत्तर सुनते थे जो कि मुझे आमतौर पर याद होते थे। मुझे बच्चों और शिक्षकों का यह व्यवहार अधिक पसन्द नहीं आया, इसलिए मैंने अपने आप में कुछ बदलाव किए। धीरे–धीरे मैंने अपनी छवि एक चुलबुले और शरारती विद्यार्थी की बनाई और साथियों से तरह–तरह की शरारतें करनी शुरू की। इन शरारतों के चलते कई बार मैंने गम्भीर डॉट खाई, जो मुझे काफी बुरी भी लगी।

बहरहाल, इन शरारतों का नतीजा यह निकला कि कक्षा के अधिकतर विद्यार्थी मेरे साथ काफी घुल–मिल गए और मुझे कक्षा का अभिन्न हिस्सा समझने लगे। शिक्षकों ने भी शायद मुझे शरारतों से रोकने के लिए गृहकार्य देना तथा प्रश्नों आदि के बारे में पूछना शुरू कर दिया। इस तरह नौवीं तथा दसवीं में समावेशी शिक्षा प्राप्त करते हुए मुझे यह स्पष्ट रूप से अनुभव हुआ कि मैं ही अपने आप को अन्य बच्चों के अनुसार ढाल लूँ तथा अपने में किसी भी तरह की हीन–भावना न आने दूँ। इसके लिए मैंने स्कूल से हिन्दी फिल्म 'गजल' के एक गीत 'किसे पेश करूँ' के ऊपर पैरोडी बनाई थी –

''मैंने जज्बात निभाए हैं, उसूलों की जगह, दिन सिनेमा में बिताए हैं, स्कूलों की जगह।''

कॉलेज की समावेशी शिक्षा का अनुभव स्कूली शिक्षण से कुछ अर्थों में थोड़ा भिन्न था। पूर्व अनुभव को ध्यान में रखते हुए कॉलेज के शुरूआती दिनों में मैंने कक्षा में अधिक से अधिक बोलना शुरू किया, शिक्षकों से बात–बात पर प्रश्न करना तथा उनके अध्यापन पर टिप्पणियाँ करना मुख्य गतिविधियाँ थी। शीघ्र ही कुछ साथियों को लगने लगा कि शायद मैं उनसे बेहतर विद्यार्थी हूँ। काम चलाऊ स्तर तक तीन भाषाएँ (हिन्दी, पंजाबी, अंग्रेजी) जानने की वजह से मेरी एक ऐसी मित्र–मण्डली जल्द ही बन गई, जिसके अधिकतर लोगों का अंग्रेजी में हाथ काफी तंग था। जरूरत पड़ने पर वे मुझसे पढ़ने–लिखने या दूसरे कार्यों में मेरी काफी मदद करते थे। मैंने स्वयं को और अधिक खोला। साथी या शिक्षक मेरे बारे में बहुत कम जानते थे मगर वे नेत्रहीनों के बारे में बने तरह–तरह के चुटकुले सुनाकर या कभी–कभी सुनियोजित ढंग से चिढ़ाने की कोशिश भी करते थे। मैं अक्सर उनके चुटकुलों में से कुछ न कुछ ढूँढकर गेंद को वापिस उन्हीं के पाले में डालने की कोशिश करता। मेरे लिए उन चुटकुलों में भी सीखने के लिए काफी दुनियाई ज्ञान होता। मसलन मुझे यह समझ में आता कि आम लोगों में दिव्यांगो तथा खासतौर पर दृष्टिबाधित लोगों के संदर्भ में किस–किस तरह के पूर्वाग्रह व्याप्त हैं। इन पूर्वाग्रहों के सामान्य विश्लेषण से ही यह स्पष्ट होता है कि बहुत सारी बातें लोगों के दिमाग पर इसलिए हावी हैं क्योंकि वे इनके बारें में बहुत कम जानते हैं। उदाहरण के लिए मेरे एक मित्र जो आजकल वकील हैं, किसी दृष्टिबाधित व्यक्ति द्वारा माचिस से बीड़ी जलाने को एक बड़ा चमत्कार मानते थे। वे यह घटना अक्सर, सुनाते थे कि उनके गाँव में एक नेत्रहीन व्यक्ति था, जो बिना किसी की सहायता से बीड़ी जलाकर पीता था। मैंने उन्हें कई उदाहरणों से समझाया कि ये केवल अभ्यास साध्य बाते हैं। जिस तरह अभ्यास से आप कोई भी काम कर लेते हैं, वैसे ही वे बीड़ी जला लेते होंगे।

मैं कॉलेज में पाठयेत्तर गतिविधियों में काफी सक्रिय रहता था, जिसकी वजह से बहुत से विद्यार्थी मेरे निकट सहयोगी बने। गतिविधियों के लिए इकट्ठे आना–जाना तथा एक साथ मिलकर कार्य करना मेरे लिए लोगों के साथ समाविष्ट होने में बहुत सहायक हुआ। कॉलेज के दौरान भी मैंने 'सकारात्मक भेदभाव' का कुछ हद तक सामना किया और उसका विरोध भी। एक बार कविता पढ़ने की एक प्रतियोगिता में मुझे प्रथम पुरस्कार दिया गया। मैंने सोचा कि शायद यह पुरस्कार मुझे इसीलिए दिया जा रहा है कि मैंने दृष्टिबाधित विद्यार्थी होते हुए भी प्रतियोगिता में भाग लिया। मैंने इसका पुरजोर विरोध किया। बाद में मुझे अध्यापकों ने डाँटते हुए समझाया कि हर कॉलेज की कोशिश रहती है कि ऐसी प्रतियोगिताओं में विद्यार्थियों को अधिक से अधिक पुरस्कार दिया जाएँ। लेकिन उस विरोध का सकारात्मक असर यहा पड़ा कि लोगों को यह समझ आया कि मुझे पात्रता के बिना कुछ नहीं चाहिए तथा मुझमें और अन्य विद्यार्थियों में कोई अन्तर न समझा जाए।

महत्वपूर्ण बातें

हमें दूसरों के साथ घुलने–मिलने के लिए अपने आप में आवश्यक बदलाव करके स्वयं को परिस्थितियों के अनुसार ढालना आना चाहिए। हमारा व्यवहार हर प्रकार की हीनता से ऊपर उठते हुए खुला और मिलनसार होना चाहिए। सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को द्वि–पक्षीय प्रक्रिया समझकर अपने अनुभवों को उस प्रक्रिया में शामिल करना चाहिए।

एक शिक्षक के रूप में

अपने सात वर्ष के शिक्षकीय कार्यकाल में मैंने माध्यमिक या उच्चतर माध्यमिक शालाओं में ही पढ़ाया है। मैंने पाया कि सामान्य शालाओं में विशिष्ट आवश्यकताओं वाले बच्चे अभी भी बहुत कम आते हैं। मेरे ख्याल से मैंने अभी तक ऐसे तीन या चार बच्चों को ही देखा होगा। ये सारे बच्चे अस्थि बाधित थे। पढ़ने में ये लगभग औसत दर्जे के ही थे, इसलिए ये किसी भी तौर पर अपनी योग्यता के आधार पर विशेष आकर्षण का केन्द्र नहीं बनते थे। कुछ शिक्षिकाओं की व्यक्तिगत संवेदनशीलता के अलावा अधिकांश शिक्षक तथा बच्चे इनके प्रति उदासीन ही रहते थे। बच्चे इन्हें तरह–तरह के विशेषणों से चिढ़ाते थे, जो किसी भी संवेदनशील व्यक्ति को सुनने में अच्छा नहीं लग सकता।

मुझे कई बार मौका मिला कि मैं बच्चों से संवाद कर सकूँ। मैंने अपनी तरफ से उन्हें आश्वस्त करने की कोशिश की, कि उनकी दिव्यांगता उनके मार्ग में तब तक तक ही बाधा बन सकती है, जब तक वे अपन इरादा मजबूत नहीं करते। एक बार वे तय करें कि उन्हें यह करना है, तब उन्हें जरूरी मदद भी मिल जाएगी। मैंने इन बच्चों के अभिभावकों को उन सरकारी योजनाओं के विषय में भी बताया जिनसे वे लाभ उठा सकते हैं।

उपरोक्त अनुभवों को साझा करने वाले राम : शासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, कारकौर, ब्लाक डेरा बस्सी–2, जिला–अजीतगढ़ (मोहाली) पंजाब में अध्यापक हैं। राम स्वयं दृष्टिबाधित हैं। उन्होंने मध्यप्रदेश में एकलव्य, शैक्षणिक शोध एवं नवाचार संस्थान में लगभग 8 वर्ष तक 'सामाजिक अध्ययन' विषय से जुड़े कई आयामों पर काम किया है। इस दौरान 2003 और 2005 तक छत्तीसगढ़ में बनने वाली नई पाठ्यपुस्तकों के विकास, पाठ्यचर्या के नवीन ढाँचे, 2005–2006 के तहत राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद द्व ारा बनने वाली सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन की कक्षा आठ की पुस्तक व लोकतांत्रिक राजनीति शीर्षक से विकसित होने वाली कक्षा नौ की पुस्तक के विकास में भी सहयोग दिया। पाठ्यपुस्तक विकास की प्रक्रियाओं में राम बिहार और पंजाब में भी सहयोग दे चुके हैं।

राम, राष्ट्रीय दृष्टिहीन संघ के पिछले 20 वर्षों से सक्रिय कार्यकर्ता हैं। आजकल वे इस संगठन के

राज्य स्तरीय महासचिव हैं। संघ दृष्टिबाधित लोगों के समग्र विकास के लिए प्रयासरत है। संगठन का मुख्य जोर शिक्षा, रोजगार व पुनर्वास पर है। पंजाब में इस संगठन के प्रयासों से पिछले 20 वर्षों में लगभग 800 दृष्टिबाधित लोगों को रोजगार प्राप्त हुआ है।

राम का मानना है कि हर एक दिव्यांग व्यक्ति को रोजमर्रा कई तरह के भेदभावों का सामना करना पड़ता है। ये भेदभाव घर से लेकर समाज की उच्चतम इकाई तक अलग–अलग ढंग से परिलक्षित होते हैं। इनसे मुक्त होने का मार्ग यही है कि हर एक दिव्यांग व्यक्ति को अपनी क्षमताओं व सम्भावनाओं को विकसित होने के पूर्ण अवसर देने चाहिए। ऐसे हर व्यक्ति को अपने विकास के लिए परिवार व मित्रों का भरपूर समर्थन व सहयोग अत्यन्त आवश्यक है। ऐसा समर्थन कुछ हद तक प्राकृतिक रूप से हासिल होता है, लेकिन बहुत कुछ अपने प्रयासों व स्वभाव से हासिल करना होता है।

बच्चों का सामाजीकरण एक समान प्रक्रियाओं से होकर नहीं गुजरता, अतः समावेशन की प्रक्रिया भी एक समान नहीं रहती है। जिससे बच्चे के लिए वर्ण, जाति, लिंग, न्याय एवं लोकतंत्र के नजरिए प्रभावित होते हैं। जब इस प्रकार के नजरिए को कई दृष्टियों से बल मिलता है तो ये मूल्यों में बदल जाते हैं। ये मूल्य संस्कृति में, तत्पश्चात विचारधाराओं में बदलने की प्रक्रिया इसी क्रम की अगली श्रृंखला होती है। यह दुश्चक्र बार–बार के अनुभवों के पुर्नबलन से मजबूत होता जाता है। अतः इस दुश्चक्र को तोड़ने के लिए बच्चों के अनुभवों में बदलाव लाना आवश्यक होता है। साथ ही यह भी जरूरी है कि बदलाव लाने वाला अनुभव बहुत सशक्त होना चाहिए जिससे पुराने अनुभवों को परिवर्तित करने/बदलने में मदद मिल सके। इस प्रकार बच्चे को परिवार, विद्यालय एवं समाज से ऐसे समावेशी अनुभव, समावेशी व्यवहार, समावेशी विश्वास एवं समावेशी संस्कृति उपलब्ध कराई जानी चाहिए जिससे वह एक ऐसे लोकतांत्रिक नागरिक के रूप में विकसित हो सके जो समावेशन के मूल्यों में दृढ़ आस्था रखता हो।

बच्चों को समाज में जो अनुभव, संस्कृति या मूल्य प्राप्त होते हैं, वह कहीं न कहीं विद्यालय में उनके व्यवहार में भी परिलक्षित होते हैं। हमारे समाज में विद्यमान असमानताएँ हमारी शिक्षण प्रक्रिया को भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में प्रभावित करती हैं।

इस प्रकार समावेशन की प्रक्रिया के पारिवारिक, शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक आयाम हो सकते हैं। यहाँ पर हमारा सरोकार बच्चे के समावेशन की दो महत्वपूर्ण एजेन्सियों परिवार एवं विद्यालय से है, अतः आलेख में इन्हीं दो पर ध्यान केन्द्रित करने का प्रयास किया गया है।

परिवार तंत्र

बच्चे के सामाजीकरण की प्रथम पाठशाला उसका परिवार होता है, इसे अस्वीकारने का कोई ठोस आधार भी नहीं है। इस सामाजीकरण के अनेक प्रारूप हो सकते हैं परन्तु इतना तय है कि बच्चे के सामाजीकरण में परिवार की अहम भूमिका होती है। परिवार में बच्चे के सामाजीकरण की उचित प्रक्रिया समावेशन हेतु आधार भूमि तैयार करती है। एक सामान्य बच्चे के सन्दर्भ में यह बहुत जरूरी है, लेकिन एक विशेष आवश्यकता वाले बच्चे के लिए इसके गहन निहितार्थ हैं। विशेष आवश्यकता वाले बच्चे के समावेशन का द्वार परिवार तंत्र में उसके समुचित समावेशन से होकर गुजरता है। परिवार लोकतांत्रिक मूल्यों को प्रश्रय देता है। अगर परिवार में निर्णयों में सहभागिता है, परिवार में सभी को अपनी सहमति या असहमति व्यक्त करने के समान अवसर हैं तब इतना निश्चित है कि समावेशन के बारे में बच्चे के मजबूत सकारात्मक अनुभव होंगे। इसके उलट होने की स्थिति में बच्चा समावेशन के बारे में नकारात्मक अनुभव ग्रहण करेगा। यह बात बहुत अधिक सतही लग सकती है, परन्तु इसके गम्भीर निहितार्थ हैं।

उदाहरण के लिए –

1. परिवार में खान–पान, शिक्षा, व्यवसाय, सम्पत्ति आदि के बारे में निर्णय एवं सहभागिता में लैंगिक आधार पर विभेद किया जाता है या नहीं किया जाता है।
2. परिवार में या आसपास मौजूद शारीरिक एवं मानसिक रूप से विशेष चुनौती वाले बच्चों/व्यक्तियों के प्रति परिवार का नजरिया किस प्रकार का है?
3. समाज के सामाजिक एवं आर्थिक रूप से अपवंचित वर्गों के बच्चों/व्यक्तियों के प्रति परिवार का नजरिया किस प्रकार का है?
4. परिवार में लोकतांत्रिक मूल्यों (समानता, विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, न्याय एवं व्यक्ति की गरिमा आदि) मूल्यों के लिए पोषक वातावरण है या नहीं।

परिवार एवं परिवेश से प्राप्त समावेशी अनुभव, व्यवहार, विश्वास एवं संस्कृति के आधार पर बच्चे में समावेशी मूल्यों का विकास होता है।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चे के समावेशन का द्वार परिवार तंत्र में उसके समुचित समावेशन से गुजरता है। प्रायः परिवार इस प्रकार के बच्चों के लिए निम्नांकित दो परम दृष्टिकोण अपनाते हैं –

अति संरक्षण (Over protection)

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति यह दृष्टिकोण बच्चे की स्वनिर्भरता की प्रक्रिया में बाधक बनता है, जिसका समग्र परिणाम उसके समावेशन की प्रक्रिया में अवरोध के रूप में सामने आता है। बच्चे में उसकी सामर्थ्य/क्षमता के द्वारा अनुभूति, विश्वास एवं मूल्य इस इकाई के द्वारा प्रतिस्थापित करें कि बच्चे को समाज में अपने समावेशन के बारे में विश्वास हो सके।

अस्वीकरण (Rejection)

इन बच्चों के प्रति परिवार के दृष्टिकोण का यह दूसरा चरम छोर है। परिवार का यह दृष्टिकोण इस तथ्य का प्रतिरूपण करता है कि बच्चे की सामर्थ्य/क्षमता पर परिवार का विश्वास नहीं है। अतः परिवार की पहली भूमिका है कि वह सामर्थ्य एवं क्षमता पर विश्वास करे तब परिवार की दूसरी भूमिका यह होगी कि वह बच्चे में यह अनुभूति, विश्वास एवं मूल्य इस प्रकार प्रतिस्थापित करे कि बच्चे को समाज में अपने समावेशन के बारे में भी विश्वास हो सके।

समग्र रूप से परिवार विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के संदर्भ में दो मुख्य भूमिकाओं का निर्वहन करता है –

- इस प्रकार के बच्चे के समावेशन हेतु सामाजीकरण के विभिन्न उपादानों को उपलब्ध कराना तथा इसके लिए समुचित वातावरण निर्मित करना।
- यह भूमिका पहली भूमिका से ही निरूपित होती है। इसमें बच्चे को इस प्रकार के अनुभव, विश्वास, संस्कार उपलब्ध कराएँ जाते हैं जिससे समावेशन के बारे में सकारात्मक मूल्य निर्मित हो सकें।

शिक्षा तंत्र

बच्चा परिवार के बाद जिस लघु समाज से परिचित होता है, वह उसका विद्यालय समाज होता है। बच्चा अपने परिवार से कुछ न कुछ सकारात्मक या नकारात्मक मूल्य लेकर विद्यालय में आता है। यहाँ पर विद्यालय/शिक्षा तंत्र की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती हैं कि –

- बच्चा समावेशन के बारे में जो भी नकारात्मक अनुभव, विश्वास, संस्कार एवं मूल्य लेकर विद्यालय आता है, उनका परिमार्जन करने हेतु उपयुक्त वातावरण निर्मित करें।
- विद्यालय में निश्चित रूप से कुछ बच्चे समावेशन के बारे में सकारात्मक अनुभव, विश्वास, संस्कार एवं मूल्य लेकर भी आते हैं, इनको फलने–फूलने एवं अन्य बच्चों के साथ साझा करने के लिए वातावरण उपलब्ध कराएँ।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य सभी विद्यालयों को एक ऐसे रूप में परिवर्तित करने का प्रयास कर रहे हैं जहाँ पर बच्चे की विभिन्नताओं (शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक, लैंगिक आदि) के होते हुए भी उन्हें सभी के साथ मिलकर ज्ञान सृजन करने के समान अवसर मिल सकें। उनकी, वैयक्तिक आवश्यकताओं के अनुरूप उन्हें कक्षा–कक्ष में उचित वातावरण मिल सके, ताकि वे आत्म विश्वास, आत्मसम्मान, सकारात्मक सोच, प्रभावी सम्प्रेषण आदि गुणों को स्वयं में विकसित करते हुए सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास की ओर अग्रसर हो सकें।

शिक्षा में समावेशन का वैचारिक एवं दार्शनिक आधार यह है कि –

1. प्रत्येक बच्चा स्वाभाविक रूप से सीखने के लिए अभिप्रेरित होता है।
2. बच्चों के सीखने के तौर तरीकों में विविधता होती है, जैसे–अनुभवों के माध्यम से, चीजों को करने से, प्रयोग करके, पढ़ने, चर्चा करने, प्रश्न पूछने, सुनने, सोचने, चिन्तन करने, अभिव्यक्त करने, छोटे एवं बड़े समूह में गतिविधियाँ करने आदि तरीकों से बच्चा सीखता है।
3. बच्चों को सीखने–सिखाने के क्रम में समुचित अवसर देने की आवश्यकता होती है।
4. बच्चों को सिखाने से पूर्व सीखने–सिखाने के लिए तैयार करने हेतु समुचित वातावरण निर्मित करने की आवश्यकता होती है।
5. बच्चा अनेक तथ्य याद तो कर सकता है परन्तु उन्हीं तथ्यों, अवधारणा एवं विचारों की अपने परिवेश से सम्बद्धता बिठा पाता है, जिनके बारे में उसकी भली–भाँति समझ बन चुकी है।
6. सीखने की प्रक्रिया न केवल विद्यालय में वरन् विद्यालय के बाहर भी निरन्तर चलती रहती है। अतः सीखने–सिखाने की प्रक्रिया इस प्रकार संचालित की जानी चाहिए कि बच्चा सीखने की प्रक्रिया में संलग्न हो जाए तथा समझ विकसित करे बजाय इसके कि वह परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए मात्र तथ्यों को रटता रहे।
7. सीखना किसी माध्यम या इसके बगैर भी सम्भव हो सकता है। अतः इसके लिए सीखने–सिखाने की प्रक्रिया आरम्भ करने से पूर्व बच्चे के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक परिप्रेक्ष्य को जानना/समझना महत्वपूर्ण है।
8. शिक्षार्थियों की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, भाषायी, पृष्ठभूमि के प्रति आदर रखना।

समावेशन की नीति को हर स्कूल एवं सारी शिक्षा व्यवस्था में व्यापक रूप से लागू किए जाने की जरूरत है। बच्चे के जीवन के हर क्षेत्र में चाहे वह स्कूल में हो या बाहर, सभी बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित किए जाने की जरूरत है। स्कूलों को ऐसे केन्द्र बनाए जाने की आवश्यकता है, जहाँ बच्चों को जीवन की तैयारी कराई जाए और यह सुनिश्चित किया जाए कि सभी बच्चे खासकर शारीरिक एवं मानसिक रूप से असमर्थ बच्चों और कठिन परिस्थितियों में जीने वाले बच्चों को इस क्षेत्र के सबसे ज्यादा फायदें मिल सकें। (NCF-2005)

अतः विद्यालयों में बच्चे के समावेशन के दो आयाम स्पष्टतः नजर आते हैं –

1. बच्चे को समझना : विद्यालयी प्रणाली में शामिल प्रत्येक बच्चे को उसके सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, भाषायी, शारीरिक क्षमता, मानसिक सामर्थ्य एवं उसके अधिगम के तौर तरीकों के सन्दर्भ में समझना आवश्यक है। इसी समझ के आधार पर बच्चे की सीखने–सिखाने की आवश्यकता के उपादानों को पहचानने में मदद मिल सकेगी।

2. बच्चे की आवश्यकता के अनुसार विद्यालयी पाठ्यचर्या का अनुकूलन करना : यह आयाम प्रथम आयाम का व्यवहारिक निरूपण करता है। इसके दायरे में बच्चे की आवश्यकतानुसार पाठ्यवस्तु/विषय सामग्री, शिक्षण विधियों/शिक्षण तकनीकों, कक्षा–कक्ष की गतिविधियों एवं मूल्यांकन के तौर तरीकों में अनुकूलन करने में सहायता मिल सकेगी। हमें कक्षा को समग्रता में समझने की आवश्यकता है तथा प्रत्येक बच्चे को सीखने–सिखाने की एक स्वतंत्र इकाई के रूप में स्वीकारने की जरूरत है।

सामान्यतः विद्यालय कुछ गिने–चुने बच्चों को विभिन्न गतिविधियों में प्रदर्शन के अवसर देते रहते हैं। यद्यपि इन बच्चों को तो इससे फायदा होता है परन्तु अन्य बच्चे बार–बार उपेक्षित महसूस करते हैं। प्रशंसा हेतु श्रेष्ठता एवं योग्यता को आधार बनाने में प्रत्यक्षतः कोई बुराई भी नहीं दिखाई देती है परन्तु अवसर तो सभी बच्चों को मिलने चाहिए। इन बच्चों की विशिष्ट क्षमताओं को पहचाना जाना चाहिए और इन विशिष्ट क्षमताओं की भी तारीफ होनी चाहिए। यह सम्भव है कि इन बच्चों को अपना काम पूरा करने/प्रदर्शन करने के लिए अतिरिक्त समय या मदद की जरूरत होगी।

बहुत कुछ कर सकते हैं

प्रत्येक मानव का जीवन, चुनौतीपूर्ण होता है परंतु दिव्यांग बच्चों, व्यक्तियों को जीवन में, दोहरी चुनौतियों का सामना करना होता है। फिर भी तमाम कठिनाईयों को झेलने के बाद अनेक दिव्यांग व्यक्तियों ने अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व और अनुपम कृतित्व से समाज पर ऐसी छाप छोड़ी कि समाज को मानना पड़ा कि वे बहुत कुछ कर सकते हैं।

जिस प्रकार दिव्यांगता एक विश्वव्यापी समस्या है और हर काल की गंभीर समस्याओं में से एक रही है, उसी प्रकार दिव्यांग विभूतियों ने भी हर काल में विश्व के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी असाधारण प्रतिभा का परिचय दिया।

हेलन केलर, लुईस ब्रेल, राणासांगा, अष्टावक्र, जायसी, सूरदास, स्टीफन हॉकिंस, बाबाआमटे, सर मॅकेन्जी की चुनौतियों और उपलब्धियों से हम सभी परिचित हैं और हम लाभान्वित भी हुए हैं। उनके किए गए प्रयासों को विस्तार से जाने तथा उन लोगों को भी प्रेरित करें जो दिव्यांग हैं।

(समाज में प्रेरक के रूप में चिन्हित व्यक्तित्व और उपलब्धियाँ) समाज में प्रेरक के रूप में पहचान

परिचय	**कार्य क्षेत्र**	**उपलब्धियाँ**	**दिव्यांगता एवं चुनौतियाँ**	**विभिन्न स्रोतों से इनके विषय में जानकारी एकत्रित करें।**
1. सुधा चंद्रन	नृत्यकार	विभिन्न फिल्मों में अभिनय तथा टी.वी. सीरियल में कार्य का अनुभव • नृत्य मयूरी की नृत्यांगना • भरतनाट्यम नव ज्योति पुरस्कार से नवाजा गया।	17 वर्ष की उम्र में दुर्घटना में पैर क्षतिग्रस्त हुआ किन्तु दुर्घटनाग्रस्त होने के बावजूद भी हारी नहीं वरन् सबके लिए मिसाल है।	
2. गिरीश शर्मा	बैडमिंटन खिलाड़ी		ट्रेन एक्सीडेंट में एक पैर खो दिया।	
3. अरूणिमा सिन्हा	प्रथम दिव्यांग महिला एवरेस्ट पर फतह करने वाली	•व्हालीबॉल खिलाड़ी के रूप में कैरियर की शुरूआत • माउंट एवरेस्ट पर चढ़ना	ट्रेन में डकौतों ने हमलाकर चलती ट्रेन से फेंक दिया।	
4. जायसी	कवि महाकवि	पद्मावत, अखरावट आखरी कलाम	12वर्ष की उम्र से निःशक्तता	
5. साधना ढांढ	कला चित्र	पेंटिंग, फोटोग्राफी शिल्पकला। स्त्री शक्ति सृजन, मातृ शक्ति सम्मान।	श्रवण व पैरों में निःशक्तता	

नाम	कार्य क्षेत्र	उपलब्धियाँ	दिव्यांग / चुनौतियाँ
6			
7			
8			
9			
10			

दिव्यांगों को सामर्थ्यवान बनाने में आप का क्या प्रयास रहेगा – यदि आपके आस–पास या कक्षा में दिव्यांग या कमजोर सदस्य हैं तो उसे आप किस प्रकार प्रेरक बनने हेतु प्रोत्साहित या मार्गदर्शन देंगे।

उदाहरण –

प्रश्न

- ♦ समावेशन में चुनौती कहाँ रही?
- ♦ संभावनाएँ कहाँ–कहाँ तलाश की गई?
- ♦ समावेशित विद्यार्थी द्वारा स्वयं के समावेशन के कौन–कौन सी उपाय किए?
- ♦ समावेशित व्यक्ति के प्रति शिक्षक/विद्यालय का नजरिया कैसा था?
- ♦ आलेख में सकारात्मक भेदभाव से क्या आशय है?

सारांश (Summary)

- समावेशन की प्रक्रिया के पारिवारिक, शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक आयाम हो सकते हैं।
- बच्चे को परिवार, विद्यालय एवं समाज से ऐसे समावेशी अनुभव, समावेशी व्यवहार, समावेशी विश्वास एवं समावेशी संस्कृति उपलब्ध कराई जानी चाहिए जिससे वे एक संस्कृति उपलब्ध कराई जानी चाहिए जिससे वे एक ऐसे लोकतांत्रिक नागरिक के रूप में विकसित हो जो समावेशन के मूल्यों में दृढ़ आस्था रखते हों।
- परिवार एवं विद्यालय के सदस्यों को विद्यार्थियों के समावेशन के अनुभव के प्रति सजग रहना होगा।
- दिव्यांग की उपलब्धियों से प्रेरित कर विद्यार्थियों को विश्वास दिलाना होगा कि हम सभी कुछ कर सकते हैं।

मूल्यांकन के प्रश्न

- ♦ विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के पुनर्वास एवं समाज में स्थापित करने के लिए हमारे राज्य व अन्य राज्य में किए जा रहे प्रयासों की जानकारी प्राप्त करें।

प्रोजेक्ट कार्य

- ♦ आप अपने क्षेत्र या अन्य जगह के ऐसे व्यक्ति को चिन्हित करें जिन्होंने अक्षमता के बावजूद अपने जीवन को सार्थक किया। उनसे चर्चा करें एवं रिपोर्ट तैयार करें।

♦ ♦ ♦ ♦ ♦

इकाई – 7

संसाधन, प्रोत्साहन, योजनाएँ व अनुशंसाएँ

(Resources, Intervation, Schemes and recommendation)

सामान्य परिचय (General Introduction)

बच्चों को सामाजिक सम्पर्क, भावनात्मक संवर्धन और व्यक्तित्व विकास के अनेक अवसर उपलब्ध कराएं जाएँ। प्रत्येक बच्चे में विशेष सामर्थ्य है जिसे प्रस्फुटित होने का अवसर मिले।

– सरला मोहन राज

दिव्यांग बच्चों के सर्वांगीण विकास तथा सहायता के लिए समय–समय पर देश एवं प्रदेश में योजनाएँ बनाई जाती हैं। दिव्यांग जनसशक्तिकरण विभाग का भी गठन किया गया है जिसमें दिव्यांगजनों के संदर्भ में नीति निर्धारण करना व प्रभावशाली क्रियान्वयन सुनिश्चित करना विभाग का दायित्व है। इस हेतु संसाधन, प्रोत्साहन, योजनाएँ व अनुशंसाएँ लागू की गई हैं। जिसके तहत् शासन द्वारा दिव्यांगजनों के हितार्थ कार्य हो सके।

उद्देश्य (Objectives)

1.दिव्यांगों के हितों के लिए विभिन्न संसाधनों से परिचित कराना।

2.शासन द्वारा लागू योजनाओं से जनमानस को जागरूककरना।

3.दिव्यांगता से पीड़ित बच्चों/पालकों को शासन की लाभकारी योजनाओं व सुविधाओं का लाभ लेने प्रेरित करना।

4.समाज के नागरिक के रूप में दिव्यांगों के प्रति स्वयं की भूमिका को समझना।

दिव्यांग बच्चें के लिए बाधारहित वातावरण का निर्माण –

(Making barrierfree environment for disable children)

किसी व्यक्ति को अक्षम या निःशक्त उसकी क्षति नहीं बनाती, बल्कि वातावरण में उपस्थित बाधाएँ व्यक्ति को निःशक्त बनाती हैं।

चलिए देखते है, कि यह कथन कहाँ तक सत्य है –

उदाहरण :– 1, मनोज एक पोलियो ग्रस्त बच्चा है, जो सीढ़ियाँ चढ़ने में अक्षम है। उसकी कक्षा, दूसरी मंजिल पर लगती है जहाँ व्हील चेयर भी नहीं जा सकती। विद्यालय प्रशासन ने भी बच्चे के लिए न तो रैम्प तैयार करवाया है न ही उसकी सुविधा की दृष्टि से कक्षा को ही परिवर्तित किया। शिक्षकों ने सोचा कि इस एक अकेले के लिए क्यों इतना परिवर्तन किया जावे, फिर रैम्प बनवाने के लिए पैसे भी नहीं है। वैसे भी यह बच्चा पढ़ लिखकर क्या कर लेगा।

उदाहरण :– 2,

राजू एक मानसिक रूप से अक्षम बच्चा है। राजू जिस शहर में रहता है वहाँ विशेष विद्यालय, समेकित विद्यालय एवं समावेशी विद्यालय है किन्तु राजू के पिता का ऐसा सोचना है, कि इस बच्चे को विद्यालय भेजकर कोई फायदा तो होगा नहीं, न ही यह बच्चा आगे चलकर हमें कोई सहारा दे पायेगा। अतः इसका घर पर ही

रहना ठीक है। अंततोगत्वा राजू शिक्षा से वंचित है।

उपरोक्त दोनों उदाहरणों से स्पष्ट हो रहा है, कि बच्चों को वातावरण में उपस्थित बाधाओं ने दिव्यांग बनाया है। यदि हम बच्चों को निःशक्त (दिव्यांग) बनने से रोकना चाहते हैं तो हमें वातावरणीय बाधाओं करना होगा।

दिव्यांग बच्चों के समावेशन में आने वाली बाधाएँ मुख्यतः दो तरह की होती हैं :–

1. भौतिक बाधाएँ **2. मानसिक बाधाएँ**

1. भौतिक बाधाएँ :–

भौतिक बाधाओं से तात्पर्य भौतिक वातावरण की बाधाओं से है जैसे – सीढ़ियों के विकल्प के रूप में रैम्प न होना, शौचालय के नल, हेंडल आदि पहुँच में न होना, मॉडीफाइड टॉयलेट का न होना, बैठने के लिए अनुकूलित टेबल कुर्सी का अभाव होना, कक्षा के दरवाजों का इतना सँकरा होना कि बच्चे की व्हील चेयर अंदर ही न जा सके आदि।

2. मानसिक बाधाएँ :–

परिवार, समुदाय शैक्षिक प्रशासकों में रूढ़िवादी व नकारात्मक सोच आदि इन बच्चों के विकास में सबसे बड़ी बाधाएं हैं जैसे –

- माता पिता सोचते हैं कि ऐसे बच्चे को स्कूल भेजने का क्या फायदा ये पढ़ नहीं सकते।
- सामाजिक कार्यो में साथ नहीं ले जाते जिससे उनका सामाजिक विकास रूक जाता है।
- उनकी शारीरिक अक्षमता के कारण उनके क्षमताओ पर अविश्वास करने की आदत बन जाती है जो उन्हें कमजोर बना देता है।
- सामाजिक रूढियाँ जैसे अपशकुन माना जाना।

गतिविधि –

नीचे लिखे बिन्दुओं पर विचार करें कि क्या ये इन बच्चों के विकास के लिए बाधाएँ हैं यदि हाँ तो इनको दूर करने के उपाय बताएँ –

1. जागरूकता की कमी
2. उपलब्ध सुविधाओं की जानकारी/उपयोग में कमी
3. पूर्वाग्रह से ग्रसित होना
4. सामाजिक भ्रम
5. परिवार के अंदर भेदभाव
6. रोजगार की कमी
7. वित्तीय संसाधनो की कमी
8. पृथक्कीकरण
9. अज्ञानता एवं भय

चर्चा के बिन्दु :–

नीचे कुछ समाधान सुझाये गये हैं चर्चा करें कि इनके अतिरिक्त और क्या किया जा सकता है–

- अभिभावक, विद्यालय प्रशासन एवं समुदाय के दृष्टिकोण में परिवर्तन के लिए चर्चा, प्रशिक्षण, संगोष्ठी, समय समय पर परामर्श आदि कार्य करना होगा।
- विद्यालयों में रैम्पस, बाधारहित टॉयलेट, बाधारहित कक्षा व खेल मैदान आदि तैयार कराने होंगे।
- शासन द्वारा प्रदत्त सुविधाएँ जैसे छात्रवृत्ति ,आवश्यक उपकरण,विभिन्न प्रकार के छूट एवं भत्ते आदि के संबंध में पालको एवं शिक्षकों को जागरूक व संवेदनशील बनाना होगा।
- विद्यालय स्तर पर नियमित रूप से व्यावसायिक प्रशिक्षण दिये जाने का प्रावधान करना होगा । शासन द्वारा इनके रोजगार के अनेक प्रावधान हैं जिसकी जानकारी पालकों और ऐसे बच्चों को देना होगा।

उक्त समाधानों को ध्यान में रखने पर ही हम इन दिव्यांग बच्चों के लिए शाला, घर और समाज में बाधारहित वातावरण का निर्माण कर पायेंगे और इन्हें अध्यापन के क्षेत्र में पूर्ण रूप से समावेशित कर पायेंगे। इन बच्चों के लिए बाधारहित वातावरण का निर्माण करना अति आवश्यक होगा।

इन बच्चों में आत्मविश्वास तथा विकास के लिए सभी स्तरों पर बाधा रहित एवं विश्वासपूर्ण वातावरण का निर्माण किया जाना होगा । उपरोक्त समाधान पर्याप्त नहीं हैं अपनी सूझबूझ एवं अनुभव से आपको ऐसा वातावरण तैयार करना होगा, जिससे इन बच्चों को समावेशित कर उनकी भागीदारी सुनिश्चित की जा सकें।

CWSN बच्चों हेतु संसाधन

क्र.	विशेषता का प्रकार	उपयोगी उपकरण	उपलब्ध या क्रय किये जाने वाली संस्था के नाम	उपयोग
1	अस्थिबाधित	1. बैसाखी 2. कैलिपर्स 3. ब्रेसस 4. हील रेंज जूते 5. कृत्रिम हाथ या पैर 6. स्प्लिण्ट 7. ट्राई सायकल 8. व्हील चेयर 9. वाकर	एलिम्को, जबलपुर	शारीरिक रूप से अक्षमता वाले व्यक्ति के लिये आवगमन एवं गामक कौशल में सहायता करने वाली वस्तुएँ

क्र.	विशेषता का प्रकार	उपयोगी उपकरण	उपलब्ध या क्रय किये जाने वाली संस्था के नाम	उपयोग
2	दृष्टिहीन	1. ब्रेलकिट 2. श्वेत छड़ी	एलिम्को, जबलपुर एन.आई.वी.एच. देहरादून बर्थ ट्रस्ट कार्ड, वेलूर	1. पढ़ने एवं लिखने हेतु उपयोग में लाये जाने वाला यंत्र 2. चलिश्नुता हेतु उपयोगी वस्तु
3	अल्पदृष्टि बाधित	1. मैग्नीफाइंग ग्लास (हैण्डसेट) 2. डोम मैग्नीफाइंग ग्लास 3. स्टैण्ड मैग्नीफाइंग ग्लास 4. फ्रेम मैग्नीफाइंग ग्लास	साईट सेवर	पढ़ते समय शब्दों एवं वाक्यों को बड़े रूप में व्यक्त करने वाला यंत्र।
4	श्रवण बाधित	1. श्रवण यंत्र (पॉकेट माडल) 2. बी.टी. (बिहाइंड द इयर) ग्रुप हियरिंग एड	एलिम्को एवं एन.आई.एच.एच.	कान में लगाकर सुनने एवं समझकर सम्प्रेषण में मदद करने वाला यंत्र।
5	मानसिक मंदता	1. एम.आर.किट 2. रोलेटर	एलिम्को एवं एन.आई.एच.एच.	मानसिक मंदता से ग्रस्त व्यि क्त को किसी भी प्रकार की अवधारणा को ज्ञात कराने वाली सामग्री।
6	सेरेब्रल पल्सी	1. व्हील चेयर 2. ब्रेसेस 3. स्टिलन्ट 4. वाकर	एलिम्को, जबलपुर	शारीरिक रूप से अक्षमता वाले व्यक्ति के लिये आवश्यक एवं गामक कौशल में सहायता करने वाली वस्तुएँ
7.	बहु निःशक्त	1. व्हील चेयर 2. बैसाखी 3. कैलिपर्स 4. वाकर 5. रोलेटर 6. श्रवण यंत्र 7. लो विजन एड 8. ब्रेलकिट	एलिम्को, जबलपुर	शारीरिक रूप से अक्षमता वाले व्यक्ति के लिये आवश्यक एवं गामक कौशल में सहायता करने वाली वस्तुएँ

दिव्यांगता एवं शिक्षण सामग्री

(Disabilities and learning resources)

1. पूर्ण दृष्टिबाधित – शिक्षण अधिगम सामग्री

- ब्रेल पुस्तक
- ब्रेल स्लेट, ब्रेलर
- एम्बोस्ड ब्रेल
- प्री ब्रेल (पढ़ाने में शीघ्र हस्तक्षेप करने वाला व्यक्ति)
- टाइप टॉक सॉफ्टवेयर
- टेक्टाइल ग्रॉफिक्स
- अबेकस एवं टेयलर फ्रेम
- ध्वनियुक्त केलकुलेटर
- ध्वनियुक्त घड़ी
- ध्वनियुक्त थर्मामीटर

2. श्रवणबाधित :–

- वर्ड कार्डस, फ्लेश कार्ड्स
- चार्टस
- कम्पूटेशनल डिवाईस
- मॉडल्स
- साइन चार्ट्स
- सिम्बल्स
- ब्लॉक्स
- इंद्रिय शिक्षण सामग्री
- कहानी पुस्तकें
- चित्रयुक्त चार्ट्स
- ग्लोब्स / मेप्स

3. अल्प मानसिक मंदता / धीमीगति से सीखने वाले बच्चे (स्लो लर्नर)

- फ्लेश कार्ड्स
- पिक्चर्स
- एलम्बस

- कॉंक्रीट ऑब्जेक्ट्स
- कॉनसेप्ट फारमेशन माड्यूल्स
- कहानीयुक्त पिक्चर चार्ट्स
- ऑडियो कैसट्स
- विडियो रिकार्डस
- एम.आर.किट

उच्च स्तर वाले विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए शारीरिक अधिगम सामग्री की अवधारणा में स्पष्टता, रंगों एवं चित्रयुक्त अवधारणा में स्पष्टता तथा सामग्री कम से कम मूल्य वाली होना चाहिए।

4. मानसिक मंदता –

- मानसिक मंदता सामान्यतः एक सामाजिक समस्या है।
- मानसिक और शारीरिक योग्यता की कमी के कारण समाज में योग्य स्थान न मिलना
- निःसंदेह ये सामान्य व्यक्तियों से भिन्न है, परन्तु इनकी आवश्यकताएँ सामान्य व्यक्तियों के समान है, इनके प्रति दृष्टिकोण भिन्न क्यों है ?
- इन्हें भी शिक्षण, प्रशिक्षण की जरूरत है
- सही सूचनाओं के अभाव के कारण अभिभावक अपने आपको कोसते है उनके कर्मो का फल है या धार्मिक लोगों की सहायता लेते है, झाड़ फूँक करवाते है।
- अपने बच्चें के लिए किसी जादुई शक्ति की सामान्यतः तलाश करते हुये दिखाई पड़ते है
- इन बच्चों की शिक्षण प्रशिक्षण के बारे में जागरूक अभिभावको व समाज को करना अनिवार्य है
- इन्हें मुख्यधारा में से होकर एकीकरण करवाना आवश्यक है और उन्हें मौका प्रदान करें जिससे कि वे शिक्षण और प्रशिक्षण के द्वारा सामाजिक व आर्थिक योगीकरण की प्रक्रिया में सहायता मिलें।
- विभिन्न कार्यक्रमो द्वारा जन जागृति समाज में लाई जा सकती है।
- सांस्कृतिक कार्यक्रम जैसे मेला और शान्ति मार्च करते हुये इनकी योग्यताओं को दर्शाया जा सकता है।
- इनके अलावा विशेषतयः शासकीय अधिकारियों को भी जागरूक करना जरूरी है।
- दिव्यांग व्यक्ति के योगीकरण की सेवाओं के संदर्भ में योजना बनाने और नीति बनाने वाले पर इस प्रकार के कार्यक्रमों के द्वारा दबाव डाला जा सकता है।

हम सब यह जानते हैं कि किसी भी कार्य को पूर्ण कर लेने के बाद उसकी प्रगति का मापन अत्यंत आवश्यक होता है। हमारा हमेशा यही प्रयास होता है कि हमारे द्वारा पढ़ाया गया पाठ बच्चों को अच्छी तरह आत्मसात हो। यह जानने के लिए मूल्याँकन करना अतिआवश्यक है। बच्चों के कार्यों के मूल्याँकन के साथ–साथ हम अपने कार्यों का भी मूल्याँकन करते हैं एवं अपने प्रयासों के परिणामों का आंकलन करते हैं। शिक्षण सामग्री का उपयोग विस्तृत रूप से होता है जैसे – पाठ्यपुस्तक, लेसन नोट्स, लेक्चर नोट्स, रिफरेन्स

आदि यह सामग्री बच्चों के उपयोग के लिये शिक्षकों, विषय विशेषज्ञों द्वारा तैयार की जाती है। शिक्षण सामग्री पाठ्यक्रम अनुसार विषयों के लिए तैयार की जाती है। शिक्षण सामग्री के उपयोग से ही विद्यार्थियों के लिये योजना बनाई जाती है, उसका क्रियान्वयन होता है तथा मूल्याँकन भी किया जाता है। यह सामग्री स्वशिक्षा, स्कूली शिक्षा, दूरस्थ शिक्षा आदि के लिए भी उपयोगी है।

शिक्षक को निरीक्षक ध्यानपूर्वक अभिप्रेरक काल्पनिक व कलात्मक गुणों से भरपूर व्यक्ति की भूमिका निभाने वाला होना चाहिए ताकि वे इन गुणों के उपयोग से शिक्षण सामग्री तैयार कर सके और शिक्षण अधिगम योजना में इन गुणों का उपयोग लगातार करते हैं। बच्चे कक्षा में कई बार प्रश्न करने की कोशिश करते हैं, शिक्षकों को ऐसे बच्चों की पहचान करनी चाहिए। शिक्षक अध्यापन करते समय अत्यधिक तीव्र गति से न बोले लेकिन बोलने की आवाज ऊँची हो, बच्चे शिक्षकों की मुखाकृति को देख अक्षरों की ध्वनियों का अनुमान कर लेते हैं। साधारणतः इस प्रक्रिया को हम ओष्ठ पठन (Leap reading) कहते हैं। इन बच्चों के लिए हम संकेत भाषा का उपयोग भी करते हैं। ऐसे बच्चों को सामान्य बच्चों के साथ उठने–बैठने बातचीत करने के अधिक अवसर देने चाहिए ताकि उनमें संप्रेषण क्षमता का विकास हो सके।

दृष्टिबाधित बच्चों के लिए शिक्षकों को शैक्षिक क्रियाकलापों में कुछ विशेष युक्तियों का प्रयोग करना चाहिए। इसी क्रम में ऐसे बच्चों के मूल्याँकन के लिए भी सामान्य बच्चों के साथ–साथ कुछ अन्य विशिष्ट मूल्याँकन के निम्न तरीके भी अपनाने होंगे –

- चित्र बनाने वाले प्रश्नों के लिए वैकल्पिक प्रश्न दिए जाएँ अथवा चित्रों के भागों का नाम लिखने पर बच्चे को पूरे अंक (नम्बर) देने चाहिए।
- सभी बच्चों का केवल एक पक्षीय मूल्याँकन न कर सभी पक्षों (ज्ञानात्मक, भावात्मक, कौशलात्मक पक्ष) का मूल्यांकन किया जाए।
- गणित का ज्ञान करा देने के बाद व्यावहारिक प्रश्नों के उत्तर मौखिक रूप से प्राप्त करें।
- मूल्याँकन में मौखिक या अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों एवं लघु उत्तरीय प्रश्नों का अधिक प्रतिशत रखा जाए।
- विज्ञान के विषयों को पढ़ाने के बाद प्रयोग से संबंधित प्रश्नों का उत्तर यदि पूरा वर्णन करे तो उन्हें पूरा अंक दिए जाएं।

श्रवण क्षतिग्रस्त बच्चों में सुनने की कमी के कारण भाषा विकास सामान्य बच्चों के स्तर से कुछ कम होता है अतः इस प्रकार के बच्चों के मूल्याँकन के समय हमें कुछ बातों का ध्यान रखना चाहिए। इस हेतु हम निम्नलिखित तरीके अपना सकते हैं –

- व्याकरण संबंधी साधारण त्रुटियों पर ध्यान न दें।
- लिखित या मौखिक अभिव्यक्ति कौशल को बहुत अधिक महत्व न दें।
- मूल्याँकन करते समय पाठ की विषय वस्तु के प्रत्येक भाग से छोटे–छोटे प्रश्न बनाएँ ताकि बालक विषय–वस्तु को पूरी तरह समझ जाएँ।
- इन बच्चों को दिए जाने वाले मूल्याँकन में लघु अथवा बहुविकल्प वाले प्रश्नों की संख्या अधिक रखें।
- चूँकि इन बच्चों में भाषा की कमी होती है अतः इन्हें निबंधात्मक प्रश्न न देकर शब्द आधारित प्रश्न

अधिक मात्रा में दें।

- हिन्दी विषय के अतिरिक्त अन्य विषयों में भाषा संबंधी त्रुटियों पर अधिक ध्यान न दें।
- भाषा के अतिरिक्त यदि विषय–वस्तु ठीक हो तो अन्य विषयों में संक्षेप में या अधूरे लिखे वाक्यों पर भी अंक दें।
- सामान्य बच्चों के साथ इन बच्चों के मूल्याँकन में प्रत्यक्ष क्रियाओं को भी शामिल किया जा सकता है।
- श्यामपट या ग्रीन बोर्ड का प्रयोग अधिक करें।

मानसिक दिव्यांग बच्चों के लिए :–

- प्रश्न पत्र में उपयोग की गई भाषा सरल व प्रश्नों का कठिनाई स्तर बच्चों के समझ के स्तर का होना चाहिए।
- प्रश्नों के उत्तर देने की समयावधि को बढ़ाना चाहिए।
- शब्द विन्यास, विराम चिन्ह एवं व्याकरण त्रुटियों पर अंक न काटे जाएँ बल्कि उनके द्वारा की गई त्रुटियों से उन्हें अवगत कराया जाए।
- यदि आवश्यक हो तो ऐसे छात्रों को कम संख्या में प्रश्न देने चाहिए।

मूल्याँकन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा ही अध्यापक यह जान सकते हैं कि उनके अध्यापन से बच्चों ने कितना ग्रहण किया है, यदि ग्रहण करने का स्तर न्यून है तो किन कारणों से। मूल्याँकन के द्वारा अध्यापक उन कारणों को ढूँढ सकते हैं कि –

- क्या उनकी शिक्षण विधि गलत है ?
- क्या उनके द्वारा बताए गए सवालों को बच्चों ने नहीं समझा ?
- क्या उसका (शिक्षण का) अभिव्यक्त करने का तरीका गलत है या उसमें कमी है ?

इस प्रकार कमियों को खोजकर अध्यापक को उनका निदान करना चाहिए और संबोधनों को सुप्रभाषित करने के लिए सहायक शिक्षण सामग्री का अधिकाधिक प्रयोग करना चाहिए तथा ज्ञान बच्चों को देने के लिए ज्ञान को व्यावहारिक जीवन से जोड़कर बताएँ। ऐसा करने पर निश्चित रूप से अधिक से अधिक बच्चे सीख सकेंगे।

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में मूल्याँकन करना बहुत ही आवश्यक है। इसके लिए हमारे विद्यालयों में सतत् मूल्याँकन की व्यवस्था की गई है।

हर बच्चे की दिव्यांगता के आधार पर उसकी कठिनाइयाँ भिन्न होती है। अतः अपने विवेक के आधार पर स्वयं निर्णय ले कि किन विषयों के मूल्याँकन में उनको सामान्य बच्चों की तरह समझा जाए तथा किन विषयों के मूल्याँकन में उनके लिए वैकल्पिक या लचीली व्यवस्था की जाए। ये बच्चे दिव्यांगता के कारण लिखने में अधिक समय लेते है। अतः इन्हें अधिक समय देने की आवश्यकता है। कभी–कभी प्रकाशित आम बच्चों की तरह इन बच्चों में भी विशेष प्रतिभा डाल देती है, ऐसी दशा में अध्यापक को चाहिए कि वे उनकी प्रतिभा को उभारे तथा उनके मूल्याँकन कार्यों में इनकी विशेष प्रतिभा को महत्व देकर मूल्याँकन करें।

दिव्यांग अधिकार विधेयक–2017, शासन द्वारा प्रदत्त सुविधाएँ –
(Disability rights bill 2017, provisions by government)

निःशक्त व्यक्तियों के कल्याणार्थ भारत सरकार द्वारा अनेकों सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं जिससे उनकी समस्याओं को दूर करते हुए उन्हें समाज की मुख्य धारा से जोड़ा जा सके। भारत सरकार द्वारा प्रदान की जाने वाली विभिन्न कल्याणकारी सुविधाएँ कुछ इस प्रकार है –

- रेल एवं बस मार्ग से यात्रा करते समय निःशक्त व्यक्तियों को यातायात में छूट की व्यवस्था है जिसमें रेल का पास बनाने हेतु सरकारी अस्पताल के चिकित्सक द्वारा जारी निःशक्तता प्रमाण पत्र के आधार पर रेल यात्रा करते समय प्रथम श्रेणी, द्वितीय एवं शयनयान में निःशक्त व्यक्ति एवं उसके सहायक को 75 प्रतिशत की रियायत है। बस में यात्रा करने के लिए भी यही नियम लागू होता है। रोडवेज बसों में इनके द्वारा प्रयोग किए जाने वाले यंत्रों एवं उपकरणों का वाहन किराया नहीं लिया जाता है।
- हवाई यात्रा के समय नेत्रहीन व्यक्ति को किराए में 50 प्रतिशत की छूट है, अस्थिबाधित को किराए में छूट नही है किन्तु वह अपने साथ सहायक उपकरण साथ ले जा सकता है, जिसका किराया नही लिया जाता है।
- नियमित अध्ययनरत निःशक्त छात्रों को छात्रवृत्ति दी जाती है। प्राथमिक, पूर्व माध्यमिक, उच्चतर माध्यमिक एवं महाविद्यालयीन शिक्षारत निःशक्त विद्यार्थियों की पात्रता एवं कक्षा अनुसार रू. 50 से स्वयं 240 प्रतिमाह उपलब्ध करायी जा रही है तथा दृष्टिबाधित छात्रों को रू. 50 से 100 तक वाचक भत्ता प्रदान किया जाता है शासन द्वारा अभिभावकों की मासिक आय सीमा 8000रू. प्रतिमाह निर्धारित की गई है।
- केन्द्र सरकार द्वारा दिव्यांगो को उनके मूल निवास अथवा उसके पास के स्थान पर नियुक्त किए जाने के निर्देश जारी किए हैं।
- दिव्यांगो की शासकीय सेवाओं में नियुक्ति के लिए निर्धारित आयु सीमा में 10 वर्ष की छूट प्रदान की गई।
- लिपिकीय पदों पर हाथों में, पैरों में अपंगता वालों को टायपिंग परीक्षा उत्तीर्ण करने की छूट दी गई।
- दिव्यांग बच्चों के अभिभावक जो आयकर दाता हैं उनके सकल आय में से 60 हजार अथवा 20 प्रतिशत जो अधिक हो, आयकर में छूट प्रदान की जाती है।
- आयकर अधिनियम की विभिन्न धारा में से दिव्यांगो को रूपए 15000, 20000 तथा रू. 40000 की छूट प्रदान की गई है।
- शासन द्वारा आवश्यकतानुसार निःशक्त व्यक्तियों को कृत्रिम अंग, कैलिपर्स ट्रॉईसाइकिल, बैसाखी, श्रवणयंत्र, श्वेतछड़ी, व ब्रेलकिट आदि प्रदाय किए जाते हैं।
- सरकारी नौकरी में निःशक्त व्यक्तियों को 3 प्रतिशत का आरक्षण प्रदान किया जाता है। (यह आरक्षण केवल मानसिक विमंद व मानसिक रोगी को छोड़कर पी.डब्ल्यू.डी. एक्ट में उल्लेखित शेष श्रेणी को प्रदान किया जाता है)

- विवाहित जोड़े में से यदि युवक को दिव्यांगता है तो 11 हजार रू.तथा यदि युवती को दिव्यांगता होने पर 14 हजार रू.तथा दोनो यदि दिव्यांग है तो अधिकतम 14 हजार रू. प्रोत्साहन राशि प्रदान किया जाती है। ऐसे निःशक्तजनों को छ.ग. राज्य शासन द्वारा 21 हजार रू. प्रोत्साहन राशि प्रदान की जाती है।
- ऐसे संस्थान जो '80 जी, आयकर अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत है, इन्हें दान देने पर दान दी गई राशि में आयकर की छूट मिलती है।
- छ.ग.शासन द्वारा मुख्यमंत्री स्वास्थ्य योजना के अंर्तगत श्रवणबाधित बच्चों के लिए निःशुल्क काकोलियर इम्प्लांट की सुविधा प्रदान की जाती है।
- राष्ट्रीय दिव्यांग वित्त एंव विकास निगम (NHFDC) द्वारा इन व्यक्तियों को व्यवसाय एवं रोजगार प्रदान करने हेतु निम्नानुसार सहायता प्रदान किया जाता है–
  - सेवा एवं व्यापार के क्षेत्र में लघु उद्योग लगाने के लिए 2.5 लाख रूपए तक ऋण का प्रावधान।
  - लघु औद्योगिक ईकाई की स्थापना के लिए 20 लाख रूपए तक की ऋण का प्रावधान।
  - कृषि संबधी गतिविधियों के लिए 5 लाख रूपए तक की ऋण की सुविधा का प्रावधान है।
  - दिव्यांग व्यक्तियों के लिए सहायक उपकरण के उत्पादन/निर्माण के लिए 25 लाख रूपए तक का ऋण।
  - मानसिक मंदता, प्रमस्तिष्क पक्षाघात एवं स्वलीनता ग्रस्त व्यक्तियों के स्वरोजगार के लिए 2.5 लाख तक ऋण की सुविधा।
  - प्रवीणता एवं उद्यमिता कौशल के विकास कार्यक्रम में सहायता प्रदान करने का प्रावधान।

शिक्षा के क्षेत्र में मिलने वाली छूट व सुविधाएँ (Concessions and rebales in education carrier) –

- बच्चों को विद्यालय में प्रवेश के समय आयु वर्ग में भी छूट प्रदान किया जाता है।
- एन एच एफ डी सी द्वारा उच्च स्तरीय शिक्षा अथवा व्यावसायिक प्रशिक्षण हेतु शिक्षा शुल्क,लेखन सामग्री का खर्च एवं छात्रावास सुविधा उपलब्ध कराई जाती है।
- प्रारंभिक शिक्षा में निःशुल्क पाठ्यपुस्तकें, गणवेश, एस्कार्टस एलाउंस, रीडर एलाउंस, मोबिलिटी एलाउंस आदि प्रदान किया जाता है।
- इन बच्चों को केन्द्र एवं राज्य स्तर द्वारा दी जाने वाली छात्रवृत्ति की सुविधा जो लागू हो, की सुविधा प्रदान की जाती है।
- नेत्रबाधित व ऐसे निःशक्त बच्चे जिन्हें लिखने में असुविधा होती है परीक्षा देते समय अतिरिक्त समय व लेखक की सुविधा प्रदान की जाती है। ऐसी सुविधा प्राप्त करने के लिए उनके चिकित्सा प्रमाण पत्र में इस बात का उल्लेख होना आवश्यक है।

दिव्यांग बच्चे एवं खेलकूद (Disable children and games) –

खेल व्यक्ति के शारीरिक एवं मानसिक विकास का सर्वोत्तम साधन है। खेल से व्यक्ति के जीवन में उत्साह, स्फूर्ति एवं शक्ति का संचार होता है। व्यक्ति हमेशा स्वस्थ एवं तंदरूस्त रहता है। खेल ऐसा साधन

है जिससे व्यक्ति के मन से निराशा एवं नकारात्मक भाव दूर होने लगते हैं और उसके मन में चेतना की नई तरंगे विकसित होने लगती है। बच्चों में कौशलों के विकास के लिए खेलकूद का महत्वपूर्ण स्थान है। विद्यालयों में बालक अपनी रूचि के अनुरूप खेलों का चयन करके उसमें सहभागी बनते हैं। वे इन खेलों में भाग लेकर राज्य, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर की प्रतियोगिताओं में पुरस्कार एवं प्रमाण–पत्र भी प्राप्त करते हैं। जब सामान्य विद्यालयों में खेलों का आयोजन होता है तब विद्यालय के कई ऐसे छात्र जो किसी भी प्रकार की शारीरिक अक्षमता से पीड़ित हैं, इन खेलों में शामिल नहीं हो पाते। इन बच्चों को प्रायः क्विज, पजल्स, शतरंज, निबंध, कहानी लेखन, स्लोगन बनाना जैसे – प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिए ही प्रोत्साहित किया जाता है, और शारीरिक क्रियाकलाप वाले खेलों से दूर रखा जाता है। जिससे उन्हें पीड़ा पहुंचती है एवं उनके विकास पर प्रभाव पड़ता है। निःशक्त बच्चों में भी

असीमित प्रतिभाएँ होती हैं। आपने ऐसे कई लोगों के बारे में देखा, सुना व पढ़ा होगा जिनमें शारीरिक अक्षमता के बावजूद भी उन्होने खेलकूद के साथ–साथ साहित्य, राजनीति, विज्ञान, कला, संगीत आदि अनेक क्षेत्रों में उत्कृष्ट प्रदर्शन किया है। इन व्यक्तियों में शारीरिक विकास के साथ–साथ आत्मनिर्भरता, आत्म संतोष, आत्मविश्वास आदि के भाव पैदा होते हैं। विद्यालय में आयोजित होने वाले सभी आयोजनों में इन्हें सहभागी बनाया जाना चाहिए। अब तो समावेशी विद्यालयों में विद्यालय स्तर,संकुल, विकासखण्ड, जिला एवं राज्य स्तर पर इनके लिए अनेक खेलों का आयोजन किया जाने लगा है। पंचायत एवं समाज सेवा विभाग इन श्रेणी के ग्रामीण युवक–युवतियों के लिए ग्राम, विकासखण्ड जिला एवं राज्य स्तर पर अनेक खेलों का आयोजन करता है। कुछ प्रतियोगिताएँ तो राज्य, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर नियमित रूप से आयोजित हो रही है इनमें से कुछ के बारे में यहाँ संक्षेप में बताया जा रहा है।

विशेष ओलम्पिक खेलों का आयोजन (Organising special olympics) –

खेल जगत में ओलम्पिक खेलों को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। ये खेल प्रति चार वर्ष के अंतराल में विश्व के कई बड़े शहरों में आयोजित किए गए हैं। निःशक्त बच्चों की खेलकूद में भागीदारी तथा उनमें विभिन्न कौशलों के विकास के लिए दिव्यांगो के लिए ओलम्पिक खेलों का आयोजन किया जाता है। सन् 1998 में जापान के नगानो शहर में पहली बार इस प्रकार खेलों का आयोजन किया गया था। अब इन खेलों को पैरा ओलम्पिक का नाम दिया गया है। इन खेलों में सभी श्रेणी के निःशक्त भाग ले सकते है। इन प्रतियोगिताओं के परिणाम निकालने का तरीका अत्यंत रोचक है– उदाहरणार्थ यदि दौड़ की प्रतियोगिता हो रही है तो प्रथम स्थान पाने के लिए परिणाम निकालते समय प्रतिभागी की निःशक्तता का प्रतिशत, दौड़ के लिए पूर्व निर्धारित अनुपात से गुणा करके अंतिम परिणाम प्राप्त किए जाते हैं। खेल मैदान में खिलाड़ियों के लिए आवश्यक सुविधाओं में बाधारहित वातावरण विशेष ध्यान रखा जाता है। संध्याकालीन सत्र में सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन भी किया जाता है। इन ओलम्पिक खेलों में भारत ने भी अनेक प्रतियोगिताओं में हिस्सेदारी निभायी एवं जीत दर्ज करायी है। हमारे विद्यालय में अध्ययनरत इस श्रेणी के बच्चों की रूचि का ध्यान रखते हुए यदि इन्हें अवसर उपलब्ध कराए जाएँ तो ये भी खेलकूद के क्षेत्र में अपना नाम रोशन कर सकते हैं। इन बच्चों के लिए स्थानीय स्तर पर आयोजित होने वाले खेलकूद के अतिरिक्त विशेष ओलम्पिक का आयोजन भी किया जाता है, यहां पर इसका संक्षिप्त उल्लेख किया जा रहा है।

CWSN के लिए विशेष ओलम्पिक :– विशेष ओलम्पिक के प्रतीक चिन्ह में 5 फिगर हैं जो विभिन्न मानव जाति को प्रदर्शित करते हैं। ओलम्पिक खेलों की शुरूआत में खिलाड़ियों को यह शपथ दिलायी जाती है " Let me win. But if I cannot win, let me be brave in attempt'' ''मुझे जीतना है, यदि मैं जीत न पाऊं तो खेल में भागीदार बनने का मुझमें साहस हो।,,

उद्देश्य – स्पेशल ओलम्पिक का उद्देश्य यह है कि मानसिक रूप से निःशक्त व्यक्तियों को अपनी शारीरिक व मानसिक क्षमता का प्रदर्शन करने का मौका मिले साथ ही वे समाज में एक प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकें। उनके परिवार को इस तरह के अनेक प्रतिभागियों व उनके परिवार से मिलने का मौका मिले।

दृष्टिकोण– स्पेशल ओलम्पिक का दृष्टिकोण यह है कि प्रतियोगिता में भाग लेकर यह प्रतिभागी समाज में अपना स्थान बना सके ताकि उन्हें उनकी निःशक्तता के साथ स्वीकृति मिले।

स्पेशल ओलम्पिक में पंजीकृत खेल –

1. **ग्रीष्मकालीन खेलः**– तैराकी, साईकिलिंग, रोलर स्केटिंग एथलेटिक्स, सॉफ्टबॉल, इनडोर बेडमिंटन, जिमनास्टिक, फुटबाल, टेनिस, टीम हेंडबॉल, बॉलीबॉल, गोल्फ, बास्केटबॉल, बॉलिंग पावर लिफ्टिंग, तेज चाल, दौड़, रिलेरेस, इत्यादि।
2. **शीतकालीन खेलः**– फ्लोर हॉकी, स्पीड स्केटिंग, फिगर स्लेटिंग, क्रॉस कन्ट्री स्केटिंग आदि।
3. **विशेष खेलकूदः**– बोची, नौका प्रतियोगिता, टेबल टेनिस, क्रिकेट, आदि।

स्पेशल ओलम्पिक में डिविशनिंग के आधार पर प्रतिभागी तय किए जाते है ताकि समान क्षमता वाले व्यक्ति अपनी खेल क्षमता का प्रदर्शन कर सकें। खिलाडियों के समूह या वर्ग का विभाजन निम्न नियमों के आधार पर किया जाता है–

1. लिंग के आधार पर – स्त्री या पुरूष
2. आयु के आधार पर निम्न प्रकार से विभाजन किया गया है –

एकल समूह–	8 से 11 वर्ष
	12 से 15 वर्ष
	16 से 21 वर्ष
समूह खेलकूद –	10 से 15 वर्ष
	16 से 21 वर्ष

3. क्षमता के अनुसार विभाजन –

- प्राथमिक विभाजन प्री–प्रतियोगिता के स्कोरिंग के आधार पर किया जाता है।
- टाईम ट्रायल, प्राथमिक प्रतियोगिता के प्रदर्शन के बाद फाईनल प्रतियोगिता कराई जाती है।
- व्यक्तिगत प्रतियोगिता कराकर अच्छा स्कोर और कम समय में अच्छा प्रदर्शन करने वाले व अधिक समय में कम प्रदर्शन वाले प्रतिभागियों के ग्रुप बनाए जाते हैं। यह ध्यान रखना चाहिए कि एक साथ प्रतियोगिता में भाग लेने वाले प्रतिभागियों के समूह का स्कोर/समय का अंतर 10–15 प्रतिशत से ज्यादा न हो।

4. समेकित समूह (combine group) –

- विभिन्न आयु व लिंग के प्रतिभागियों को एक ग्रुप बनाकर प्रतियोगिता में शामिल कर सकते हैं, उसमें ध्यान देने योग्य बात यह है कि एक ग्रुप के प्रतिभागियों की क्षमता व लिया गया समय समान हो।
- प्रतियोगिता के एक ग्रुप में 3 से 8 खिलाड़ी शामिल हो सकते हैं।

इस प्रकार अपने विद्यालय के ऐसे छात्र छात्राओं को जिन्हें आप विभिन्न श्रेणियों के निःशक्तता के अंतर्गत समझते हो तथा जिनके पास उक्त निःशक्तता का प्रमाणपत्र भी हो उसे इस प्रकार के खेलों में शामिल कर उनमें आत्मविश्वास, सम्मान, प्रतियोगिता की भावना जगाकर इन खेलों में शामिल कर सकते हैं। ऐसा होने पर तथा विभिन्न पुरस्कार प्राप्त करने पर इनके पालकों को भी अपने बच्चों पर गर्व होगा।

दिव्यांग बच्चों के लिए आयोजित किए जाने वाले खेल (Games for disable children) –

नेत्रबाधितों के लिए विश्वकप क्रिकेट – क्रिकेट का खेल आज लोगों में सबसे लोकप्रिय खेल समझा जाता है। यह खेल नेत्रहीनों को भी उतना ही पसंद है जितना सामान्य व्यक्तियों को। भारत में 1970 के दशक में राष्ट्रीय दृष्टिबाधित संस्थान, देहरादून ने प्लास्टिक की बाल में बालबियरिंग डालकर एक गेंद का निर्माण किया, इसे बोलने वाला बॉल कहा गया। बाद में नेत्रहीन इस गेंद के बाद सामान्य बल्ले से भी यह खेल खेलने लगे। 1990 से ये प्रतियोगिताएँ प्रतिवर्ष आयोजित होती है। एक नेत्रहीन व्यक्ति जब इस खेल को खेलते समय अपने बल्ले से शॉट लगाता तो गेंद बल्ले पर आए या न आए उसे अपार खुशी का अहसास जरूर होता है। इन खेलों के जरिए उनमें आत्मविश्वास, नेतृत्वक्षमता, परिश्रम, अनुशासन और प्रतिस्पर्द्धा की भावना का विकास होता है।

दिव्यांगो के लिए भारोत्तोलन प्रतियोगिता – अक्षमता सारे शरीर में नहीं होती, शरीर के उस प्रभावित अंग के अतिरिक्त शेष अंग सुचारू रूप से कार्य करते हैं इसी बात से प्रेरित होकर अनेक होनहार बच्चे जो किसी प्रकार की शारीरिक अक्षमता से पीड़ित हैं ने अपने शरीर को पुष्ट करके भारोत्तोलन की प्रतियोगिताओं में हिस्सा लेना शुरू किया है। ऐसे बच्चों के लिए विश्व स्तर पर पहली बार भारोत्तोलन की प्रतियोगिता मई 1998 में स्पेन के मारबेला शहर में आयोजित की गई। इसमें 14 देशों ने हिस्सा लिया था। इस प्रतियोगिता में भारत के अनिल कुमार ने 58 किलोग्राम वर्ग में हिस्सा लेकर चौथा स्थान प्राप्त किया था। पोलियोग्रस्त होने के बावजूद राकेश छाबड़ा ने 52 किलोग्राम वर्ग में हिस्सा लेकर पाँचवा स्थान प्राप्त किया।

व्हील चेयर टेनिस– भारत में अस्थिबाधितों के लिए इस खेल की शुरूआत 1994 में हालैण्ड के इलैन दि लैंग ने की। इस खेल को बाद में श्री अनिल खन्ना ने आगे बढ़ाया। 1998 में यह प्रतियोगिता पटाया (बैंकाक) में सम्पन्न हुई।

शतरंज– अस्थिबाधित एवं मूकबाधिर खिलाड़ियों को शतरंज खेलने में कोई कठिनाई नहीं होती। अब ब्रेललिपि में शतरंज खेल को साहित्य उपलब्ध होने के बाद नेत्रबाधित खिलाड़ी भी बेहतर शतरंज खेल सकते हैं। भारत में आयोजित शतरंज प्रतियोगिता में विशालभट्ट जिन्हें बिल्कुल नहीं के बराबर दिखाई देता है। (low Vision) ने यह प्रतियोगिता जीती थी।

पर्वतारोहण – पर्वतारोहण कठिन खेल माना जाता है टॉम व्हाइटर जिनकी एक दुघर्टना के बाद दायीं टाँग फट गई थी, उन्होंने तीन बार के अथक प्रयास के बाद 27 मई 1998 को ऐवरेस्ट की सबसे ऊंची चोटी तक पहुँचने में सफलता प्राप्त कर ली। भारत के रंजित गोहेल ने पोलियोग्रस्त होने के बाद भी अनेक चोटियों तक जिनमें 15000 फीट की ऊँचाई शामिल है, चढ़ने में सफलता पाई। अरूणिमा सिन्हा को चलती ट्रेन से डाकुओं ने फेक दिया था जिससे उनका एक पैर प्रभावित हुआ था किन्तु उन्होंने माउंट एवरेस्ट पर चढ़ने में सफलता प्राप्त की। अमरनाथ यात्रा के दौरान अनेक निःशक्तता वाले लोगों को यह यात्रा सम्पन्न करते हुए देखा है।

अन्य प्रकार के खेल :– ऐसा कोई भी खेल नहीं है जिसमें निःशक्तता बाधा पहुँचाती हो, दृढ़ इच्छाशक्ति और आधुनिक सहायक उपकरणों का उपयोग कर व्यक्ति इन खेलों में भागीदारी निभा सकता है।

हम अपने विद्यालय के इन छात्र–छात्राओं को आसानी से इन खेलों में शामिल कर सकते हैं। एथलेटिक्स में दौड़ लांग जम्प, रिलेरेस, बास्केट बाल, कराटे, साइक्लिंग, तैराकी आदि। कुछ ऐसे नाम भी है जिन्होंने अक्षमता को परास्त करते हुए अनेक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय बैकलॉग के स्तर के पुरस्कार प्राप्त किये हैं। जॉन मैथ्यूस ने एथलीट के रूप में लान्ग जम्प में स्वर्ण पदक प्राप्त किया है। सत्येन्द्र सिंह एवं मसूदूर रहमान बैदवा ने निःशक्तता के बाद भी इंग्लिश चैनल को तैरकर पार करने में सफलता प्राप्त की है। अंजन भट्टाचार्य मूकबधि ार होकर भी रणजी क्रिकेट में शामिल हुए और उन्हें बाद में अर्जुन पुरस्कार प्राप्त हुआ।

कृपया आपके विद्यालय के इस श्रेणी के बच्चों को भी खेल के अवसर प्रदान करें उन्हें प्रेरित करें, उन्हें विभिन्न प्रतियोगिताओं में हिस्सा लेने के अवसर प्रदान करें। विभिन्न विभाग एवं स्वयं सेवी संस्थाएं भी ऐसे व्यक्तियों को आगे बढ़ाने के लिए आर्थिक सहायता प्रदान करती है, उनका लाभ लेकर हम इनके जीवन को आगे बढ़ा सकते हैं तभी समान अवसर समान भागीदारी का सपना पूरा हो पाएगा।

पुनर्वास (Rehabilitation)

भारतीय पुनर्वास परिषद का गठन (R.C.I.) -

भारतीय पुर्नवास परिषद निःशक्त व्यक्तियों के पुनर्वास एवं शिक्षा के दायित्व हेतु गठित एक पंजीकृत संस्था के रूप में 1986 में स्थापित की गयी थी, जो एक सांविधिक निकाय के रूप में 22 जून 1993 में अस्तित्व में आया। परिषद द्वारा निम्नलिखित कार्य किए जाते है–

- पुनर्वास के क्षेत्र में प्रशिक्षण नीतियों एवं कार्यक्रमों को तैयार करना।
- पाठयक्रमों का मानकीकरण करना।
- पुनर्वास के क्षेत्र में प्रशिक्षण के लिए न्यूनतम मानक तैयार करना।
- पुनर्वास के क्षेत्र में डिग्री/डिप्लोमा/प्रमाणपत्र संचालित करने वाली संस्थाओं को मान्यता प्रदान करना।
- उक्त संस्थाओं की गुणवत्ता की मानिटरिंग करना।
- मान्यता प्राप्त योग्यता वाले व्यक्तियों का भारतीय पुनर्वास परिषद में पंजीकरण करना।

किसी भी व्यक्ति की शारीरिक, बौद्धिक, संवेगात्मक, मानसिक एवं सामाजिक क्षमताओं का अधिकतम विकास कर उन्हें जीवकोपार्जन योग्य बनाकर अपने परिवेश में प्रति स्थापित करने की प्रक्रिया को पुनर्वास कहते हैं।

इस संबंध में भारतीय पुनर्वास परिषद् की स्थापना तथा केन्द्रीय पुनर्वास पंजी रखने के लिए अधिनियम पारित किया गया। इसका भारतीय पुर्नवास परिषद् अधिनियम 2000 के द्वारा संशोधन किया गया जिसमें इस अधिनियम के अतिरिक्त उद्देश्य के रूप में पुर्नवास व्यावसायिकों और कार्मिकों के प्रशिक्षण को चलाने के लिए पुनर्वास में अनुसंधान और विशेष शिक्षा की भी व्यवस्था है।

पुनर्वास के प्रकार

पुनर्वास चार प्रकार के होते हैं :–

1. **चिकित्सीय पुनर्वास** :– शरीर के क्षतिग्रस्त अंगों के उपचार किए जाने वाले प्रयास को चिकित्सीय पुनर्वास कहते हैं। इसके अंतर्गत औषधि से उपचार, शल्य क्रिया, फिजियो थैरेपी, व्यावसायिक उपचार, स्पीच थैरेपी, कृत्रिम उपकरणों का प्रयोग कर क्षमता विकास करना है।

2. शैक्षणिक पुनर्वास :– विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को उनके सीखने की क्षमता के आधार पर अतिअल्प एवं अल्प क्षमता वाले बच्चों को सामान्य शालाओं में समायोजित कर शिक्षा प्रदान करना एवं गंभीर एवं अति गंभीर प्रकार के बच्चों को घर में शिक्षा हेतु मोबाइल स्रोत शिक्षकों के माध्यम से पालकों एवं बच्चों को प्रशिक्षित किया जाना है। समावेशी शिक्षा के माध्यम से हमारा प्रयास इसी दिशा को प्रोत्साहित करना है।

3. मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक पुनर्वास – इसके अंतर्गत विशेष आवश्यकता वाले व्यक्तियों को उनके अधिकार के प्रति जागरूक करना तथा उन्हें सामाजिक कार्यों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित कर सामाजिक प्रतिष्ठा दिलाना शामिल है। उनमें अंतर्निहित प्रतिभा एवं न्यूनता को पहचान कर व्यक्तिगत संचेतना जागरूकता की जाती है।

4. व्यावसायिक एवं आर्थिक पुर्नवास :– इसके अंतर्गत चिकित्सीय और शैक्षिक पुनर्वास प्रक्रिया सम्पन्न होने के बाद उनकी बौद्धिक एवं शारीरिक क्षमता के अनुकूल आवश्यक व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। प्रशिक्षण के पश्चात विभिन्न प्रकार की क्षमतानुसार स्वरोजगार योजनाओं के अंतर्गत आर्थिक सहयोग प्रदान किया जाता है।

सामान्य तौर पर व्यावसायिक प्रशिक्षण का तात्पर्य व्यक्ति को जीविकोपार्जन करने के आधारभूत कौशलों में कुशल बनाकर समाज के उत्पादक सदस्य के रूप में स्थापित करना है।

व्यावसायिक मार्गदर्शन की आवश्यकता (Need of Vocational Guidance) :– सामान्यतः ऐसा देखा जाता है कि सामान्य व्यक्ति रोजगार प्रशिक्षण प्राप्त कर रोजगार कार्य करते हैं। वह आसानी से किसी भी व्यवसाय का चयन कर रोजगार करना प्रारम्भ करते हैं, लेकिन दिव्यांग व्यक्तियों में रोजगार के चयन हेतु मार्गदर्शन की आवश्यकता निरन्तर पड़ती रहती है। ऐसे व्यक्ति किसी भी कार्य को सीखकर, सामान्य व्यक्ति की तरह तुरंत रोजगार में प्रतिस्थापन के उपरान्त कार्य नहीं कर पाते हैं। अतः इसके लिए उन्हें समय–समय पर उचित मार्गदर्शन की आवश्यकता पड़ती है। यदि ऐसे व्यक्तियों को सही मार्गदर्शन प्राप्त होता है तो वे उपयुक्त रोजगार का चयन कर आसानी से कार्य सीख जाते हैं। इनके लिए उचित रोजगार के चयन में निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान दिया जाता है, जैसे– बच्चों का वर्तमान क्रियात्मक स्तर, पारिवारिक स्थिति, रूचि, उचित प्रशिक्षण व्यवस्था तथा रोजगार की सुलभता इत्यादि। इस प्रकार बच्चे उचित मार्गदर्शन में प्रशिक्षण प्राप्त करके स्वयं की आवश्यकता एवं वातावरण के अनुसार तैयार हो जाते हैं। अतः रोजगार मार्गदर्शन एक प्रक्रिया है जिसमें व्यक्तियों को अपने रोजगार के चयन, उसमें प्रशिक्षण तथा कार्य हेतु तैयार होने में मदद कर उसकी क्षमता को बढ़ाना है।

रोजगार के चयन, प्रशिक्षण एवं कार्यान्वयन में व्यावसायिक मार्गदर्शन की निम्नलिखित उपयोगिताएँ हैं –

(Selection of employment training and execution and proffessional guidance) –

- उपयुक्त रोजगार का चयन बच्चे की स्थिति, क्षमता, रूचि, पारिवारिक स्थिति तथा सुविधाओं को ध्यान में रखकर किया जा सकता है।
- उपयुक्त प्रशिक्षण स्थान का चयन
- प्रशिक्षण किस प्रकार किया जाए व प्रशिक्षण की प्रकृति आदि के संबंध में मार्गदर्शन
- विभिन्न रोजगारों के प्रति सकारात्मक सोच विकसित करने हेतु
- प्रशिक्षण उपरान्त उपयुक्त रोजगार में प्रतिस्थापन

रोजगार के प्रकार –

व्यावसायिक दृष्टि कोण से रोजगार को मुख्यरूप से तीन भागों में बाँटा गया है –

1. आश्रयदत्त रोजगार (Sheltered Employment) – इसके अंतर्गत एक कार्यशाला होती है, जिसमें ऐसे व्यक्तियों को योग्यतानुसार उचित देख–रेख में विशिष्ट कौशलों का प्रशिक्षण देकर उसी स्थान पर रोजगार दिया जाता है। आश्रयदत्त रोजगार के उदाहरण हैं – पेंटिंग इकाई, बढ़ई की इकाई, स्प्रे–पेंटिंग इकाई, इत्यादि।

2.खुला स्पर्धा रोजगार (Open Employment) – खुले रोजगार का क्षेत्र अत्यन्त ही वृहद है तथा इसमें बहुत ही प्रतिस्पर्धा है। बाजार में कुछ ऐसे निरन्तर दोहराये जाने वाले कार्य होते हैं जिन्हें मंदबुद्धि बच्चे सफलतापूर्वक कर सकते हैं। थोड़ी सी प्रारम्भिक सहायता के उपरान्त वे खुले रोजगार में सफलतापूर्वक कार्य कर सकते हैं। खुले रोजगार का चयन अत्यन्त सावधानी से करना चाहिए ताकि मंदबुद्धि एवं अन्य प्रकार के दिव्यांग व्यक्तियों का शोषण न हो सके। ऐसे व्यक्तियों के लिए खुले रोजगार के अंतर्गत निम्नलिखित कार्य उपयुक्त हो सकते हैं, जैसे – ऑफिस सहायक, कैंटीन सहायक, स्टेशनरी या अन्य किसी दुकान में सहायक, वाहन कार्यशालाओं में सहायक, प्रिंटिंग प्रेस में सहायक, फोटोकॉपी मशीन एवं सायक्लोस्टाइल मशीन संचालन इत्यादि।

3. स्व–रोजगार (Self Employment) :– कुछ दिव्यांग व्यक्तियों के परिवारों के पास स्व–रोजगार हेतु स्त्रोत या साधन होते हैं। यदि ऐसे व्यक्तियों को किसी विशेष कार्य का उचित एवं पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाये तथा परिवार उसके कार्य में सहायता और देख–रेख करने हेतु तैयार हो तो, स्व–रोजगार बेहद सफल हो सकता है। इसके अंतर्गत खाद्य उत्पाद, दुग्ध उत्पादन, कृषि कार्य तथा शहरी क्षेत्रों में लिफाफा बनाना, मोमबत्ती बनाना, अगरबत्ती बनाना, दुकान चलाना इत्यादि सम्मिलित है।

निःशक्त व्यक्तियों की आवश्यकता, सुविधा एवं योग्यता को देखते हुए रोजगार के अन्य कई अवसर प्रदान किये जा सकते हैं, जैसे – बागवानी, सब्जी एवं फल की खेती करना व बेचना, जानवरों को चारा खिलाना, गाय भैंस से दूध निकालना, दूध बेचना, फर्नीचर बनाना एवं मरम्मत करना, मकान बनाने के कार्य में भागीदारी, जूते चप्पल बनाना, साबुन बनाना, रेडियो एवं घड़ी की मरम्मत करना, जूट का थैला बनाना, कपड़े की सिलाई, कपड़े का थैला बनाना, विभिन्न प्रकार की धातुओं का कार्य, हस्तकला के कार्य, बुनाई, कढ़ाई, मिट्टी की कला इत्यादि भी कराया जा सकता है।

किसी भी रोजगार को प्रारम्भ करने हेतु धन की जरूरत होती हैं इस प्रकार के कार्यों में सहयोग के लिए सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार का नेशनल हैण्डीकैप्ड फाइनेंसियल एण्ड डेवलपमेंट कार्पोरेशन अनेक संस्थाओं एवं समूहों को अनुदान देता है।

व्यावसायिक प्रबंधन :– दिव्यांग बच्चों की शिक्षा का उद्देश्य उनमें उपस्थित क्षमता को देखते हुए व्यवसाय का चयन करना, उसमें प्रशिक्षित करना एवं प्रशिक्षण के उपरान्त उन्हें संबंधित व्यवसाय में समायोजित करना है।

व्यावसायिक प्रशिक्षण :– किसी भी प्रकार के विशेष आवश्यकता वाले बच्चे या व्यक्ति व्यावसायिक प्रशिक्षण में निपुण बनाने के लिए सबसे पहले उनकी विशेषता क्षमता तथा स्तर का ध्यान रखना अति आवश्यक है। क्षमता एवं स्तर के अवलोकन करने के पश्चात् व्यवसाय के क्षेत्र में किसी कौशल को सिखाने से पहले संबंधित पूर्व कौशलों को सिखाना बहुत महत्वपूर्ण होता है। जैसे :– सिलाई, कढ़ाई, पेन्टिंग, स्क्रीन पेंटिंग, केनिंग, कारपेन्टर के कार्य, वेल्डिंग, मोटर बाइंडिंग, दुकानों के कार्य आदि कार्यों में निपुण बनाने के लिये पूर्व कौशलों को सिखाना आवश्यक है।

जैसे :– सिलाई सिखाने के पूर्व –

1. रंगों एवं रंगीन धागों की पहचान एवं मिलान करना।
2. कैंची पकड़ना
3. ट्रेसिंग एवं कपड़े को नाप कर काटना।
4. बटन टाँकना, काज बनाना, कपड़े में तुरपाई करना, विभिन्न प्रकार के स्टिचों को सीखना आदि।

इसके साथ–साथ कुछ गणितीय ज्ञान, आवश्यक सामग्रियों का ज्ञान, पैसों का ज्ञान, व्यावहारिक ज्ञान तथा सामाजिक ताल–मेल आदि भी सिखाना अति आवश्यक है। इस प्रकार पूर्व कौशलों में बच्चों के निपुण होने के उपरान्त व्यावसायिक स्थलों या स्वयं के व्यवसाय में उनका समायोजन कर उन्हें व्यावसायिक व्यवस्था में स्वावलंबी बनाया जा सकता है।

निःशक्तता के आधार पर निम्नलिखित व्यवसायों में दक्ष किया जा सकता है जैसे :–

अल्प मानसिक –

1. दर्जी दुकान में सहायक के रुप में – काज, बटन टाँकना, तुरपाई करना
2. स्क्रीन प्रिंटिंग –ग्रीटिंग,विजिटिंग,वेडिंग कार्ड,आदि की छपाई।
3. गृह उद्योग – अचार, पापड़, बड़ी, फुड प्रिजरवेशन, मोमबत्ती, अगरबत्ती, साबुन बनाना, मशरुम उत्पादन, लिफाफे, दोना–पत्तल, डिब्बे बनाना आदि।

अल्पदृष्टिबाधित / पूर्णदृष्टिबाधित –

1. कुर्सियों की बुनाई (केनिंग)
2. बांस द्वारा निर्माण (केन वर्क)– फर्नीचर, सूपा, टोकनी आदि बनाना।
3. ब्रेललिपि द्वारा पढ़ाई में निपुण होने के उपरांत टेलीफोन एक्सचेंज, कम्प्यूटर से संबंधित कोई भी कार्य करने में सक्षम।

श्रवण बाधित बच्चों के लिए उपयुक्त व्यवसाय कुछ इस प्रकार है जैसे –

1. प्रिंटिंग प्रेस – सम्पूर्ण प्रिंटिंग के कार्य।
2. सरकारी तथा गैर सरकारी दफ्तरों – कम्प्यूटर सीखने के पश्चात कम्प्यूटर ऑपरेटर के रूप में।
3. वेल्डिंग शॉप – वेल्डर के रूप में।
4. कारपेंटरी – कारपेंटर के हेल्पर के रूप में या स्वयं के व्यवसाय।
5. फोटोग्रॉफर – स्वयं का व्यवसाय या फोटोग्राफर के हेल्पर के रूप में कार्य कर सकते हैं।

इस प्रकार से विभिन्न प्रकार के विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को हम व्यावसायिक क्षेत्रों में प्रशिक्षित कर उन्हें अपने जीवनयापन हेतु स्वावलम्बी बना सकते हैं।

मूल्यांकन के प्रश्न –

√ CWSN विशेष आवश्यकता वाले बच्चों हेतु शिक्षण सामग्री की क्या उपयोगिता है?

√ दिव्यांग बच्चों हेतु शालेय स्तर पर किस प्रकार के वातावरण की आवश्यकता है?

√ आपकी कक्षा के अस्थि बाधित बच्चे के प्रोत्साहन हेतु शासन से प्राप्त कौन–कौन सी जानकारी आप देंगे?

प्रोजेक्ट कार्य –

- धीमी गति से सीखने वाले बच्चों के लिए शैक्षिक खेलों का आयोजन कर किस प्रकार उनकी उपलब्धि को बढ़ाया जा सकता है। (कक्षा एवं विषय और अवधारणा के आधार पर योजना बनाएं)
- दिव्यांग बच्चों हेतु अवसरों की समानता के लिए कौन–कौन सी गतिविधियाँ आयोजित करेगें योजना बनाकर रिपोर्ट लिखें?

अभिभावक परामर्श –

दिव्यांग बच्चे का पालन पोषण उनके माता–पिता के लिए किसी चुनौती से कम नही है क्योंकि माता–पिता को रोज किसी न किसी समस्या का सामना करना पड़ सकता है उन्हें कदम–कदम पर तनाव और चिंताओं से मुकाबला कर पाने तथा जीवन में आये इस दबाव का नियंत्रण करना पड़ता है। अतः माता–पिता अपने दिव्यांग बच्चे को लेकर प्रायः परेशान रहते हैं।

बच्चें के कारण माता–पिता की स्थिति–

1. वैवाहिक जीवन प्रभावित होता है।
2. सामाजिक जीवन प्रभावित होता है।
3. आर्थिक परेशानी होती है।
4. अपनी रूचियों व मनोरंजन के अनुसार कार्य नहीं कर पाते।
5. शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है।

माता–पिता को किस–किस प्रकार का दबाव हो सकता है–

1. बच्चे की दशा के बारे में जानने के बाद दुख या अवसाद
2. भावनात्मक प्रतिक्रिया – गुस्सा,उदासी,घृणा, तनाव
3. अतिरिक्त आवश्यकता शारीरिक, मदद, कर्ज, ज्यादा काम
4. निश्चय न कर पाना
5. परिवार वालों या रिश्तेदारों का दबाव एवं तनावग्रस्त संबंध
6. सामाजिक बंधन
7. बच्चे को मारने का विचार या आत्महत्या का प्रयास
8. बच्चे के व्यवहार को लेकर शर्मसार होना
9. स्वास्थ्य की समस्या – (उच्च रक्तचाप,अनिद्रा,सिरदर्द आदि का होना)
10. दूसरे बच्चे के जन्म से डर होना

ये सभी दबाव माता–पिता को हर समय घेरे रहते हैं। जिनसे बाहर निकलना उनके लिए बहुत कठिन सा होने लगता है। इस समय परिवार परामर्श की अधिक जरूरत होती है समय–समय पर अभिभावकों को मार्गदर्शन एवं परामर्श देने की जरूरत होती है। सभी दिव्यांगो के अभिभावकों के अपने बच्चे की जरूरत के अनुसार मार्गदर्शन देना होता है।

जैसे – दृष्टि बाधित बच्चे के अभिभावक को यह बताना की दृष्टिबाधित बच्चे को कोई नई जानकारी या तथ्य समझाते समय स्पष्ट मौखिक निर्देश देना या उसे उसके नाम से संबोधित करना तथा उसे हर क्रिया में शामिल करना। उसके स्पर्शीय कौशल को विकसित करना। पर सभी अभिभावकों को इन चरम बिन्दु पर परामर्श देना जिससे वे अपनी समायोजन युक्तियों को पर अमल कर पायें। सामान्य बच्चे के माता–पिता की तुलना में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के माता–पिता की जिम्मेदारियाँ अधिक बढ़ जाती हैं।

यदि हम अपने मार्गदर्शन एवं परामर्श में निम्नलिखित बातों को शामिल कर लेंगे तो उन्हें आसानी होगी

- माता–पिता को समझाएँ कि उनका बच्चा विशेष आवश्यकता वाला है। उस पर अधिक ध्यान दें साथ ही न तो उसे अधिक संरक्षण दें और न ही उसके प्रति उदासीन रवैया अपनाएँ।
- माता–पिता को यह भी कहें कि बच्चे से अधिक बातें करें उसे नई–नई वस्तुओं से अवगत कराएँ।

सारांश (Summary)–

- दिव्यांग बच्चों के सर्वांगीण विकास तथा उनकी सहायता के लिए विभिन्न संसाधनों, प्रोत्साहन योजनाओं व नीतियों का निर्धारण करना अत्यन्त आवश्यक है।
- दिव्यांगों के लिए बाधा रहित वातावरण प्रदान करना परिवार, समाज, शाला एवं शासन का अनिवार्य दायित्व है।
- दिव्यांगों हेतु संसाधन उपलब्ध कराने वाली संस्थाओं की जानकारी सभी को होना जरूरी है।
- विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को शिक्षा की मुख्यधारा में लाने के लिए शालाओं में शिक्षकों के द्व ारा दिव्यंगता के प्रकार के अनुसार शिक्षण सामग्री का उपयोग करना होगा।
- दिव्यांग व्यक्तियों के पुनर्वास एवं शिक्षा के लिए एक पंजीकृत संस्था भारतीय पुनर्वास परिषद् (R.C.I.) का गठन किया गया है।

अभ्यास कार्य –

प्रश्न – आपकी कक्षा में मूकबधिर बच्चे के लिए आप अपनी कक्षा में किस प्रकार की व्यवस्था करेंगे? उस बच्चे के लिए आप किस प्रकार की शिक्षण सामग्री का उपयोग करेंगे? उदाहरण सहित लिखें।

प्रश्न – किसी पूर्ण दृष्टिबाधित बच्चे की शिक्षा में आपकी क्या भूमिका होगी? विस्तारपूर्वक लिखें।

प्रश्न – दिव्यांगजनों हेतु संसाधनों, प्रोत्साहन योजनाओं की जानकारी समुदाय को देने के लिए एक योजना बनाकर रिपोर्ट लिखें।

प्रश्न – आपके जिले में दिव्यांगों के पुनर्वास के लिए पूर्व में किए गए एवं किए जा रहे कार्यों के संदर्भ में एक रिपोर्ट लिखिए।

परियोजना कार्य –

क्र.	विद्यार्थी का नाम एवं शाला	कक्षा	दिव्यांगता का प्रकार	उपलब्ध सुविधा/संसाधन	शिक्षकों का व्यवहार	पालकों का व्यवहार

♦♦♦♦♦

खण्ड–स

इकाई – 8

जेण्डर : अवधारणा, महिला, पुरूष एवं तृतीय लिंग

(Gender: Concept, males, females and third gender)

सामान्य परिचय (General Introduction)

शिक्षा न केवल निर्णय लेने की क्षमता की स्वतंत्रता से जुड़ी है, बल्कि बदलने की, समझ की और फिर से अविष्कार करने की संसार को जानने और उसे रूपान्तरित करने की स्वतंत्रता से भी जुड़ी है।

– एयर्स

इस पठन सामग्री में कुछ सवाल उठाए गए हैं जैसे जेण्डर शब्द के क्या मायने हैं? इसका हम किस अर्थ में उपयोग करते हैं? मर्द और औरत की सामाजिक परिभाषा क्या है अर्थात समाज इन्हें किस नजर से देखता है? इनकी जमीनी सच्चाई क्या है? समाज में स्त्री और पुरुषों में जो असमानता है वह कितनी सामाजिक है और कितनी प्राकृतिक है? इन सबका उत्तर जानने का प्रयास इसमें किया गया है। एक तरह से यह पठन सामग्री 'जेण्डर' की अवधारणा को स्पष्ट करती है।

इकाई के उद्देश्य (Objectives of Unit)

यह समझना कि –

1. लैंगिक असमानता क्या है। लैंगिक भेदभाव के पीछे क्या कारण है?
2. समाज में लड़के–लड़कियों (औरत–मर्द) की भूमिकाएँ क्या हैं?
3. जेण्डरीकरण (सामाजीकरण) क्या है तथा ये कैसे (प्रक्रिया) होता है?
4. लिंग और जेण्डर अर्थात प्राकृतिक लिंग–सामाजिक लिंग क्या है तथा दोनों का आपस में क्या सम्बन्ध है तथा अन्तर क्या है?
5. सामाजिक लिंग का प्राकृतिक लिंग से कितना सम्बंध है?
6. मर्द और औरतों का जैविकीय सत्य क्या है?
7. तृतीय लिंग अथवा ट्रांसजेण्डर क्या है?

हालाँकि अँग्रेज़ी भाषा के व्याकरण में हम जेण्डर शब्द से परिचित रहे हैं लेकिन अब इस शब्द का इस्तेमाल ज़ाहिर है कि एक दूसरे ही अर्थ में किया जा रहा है। क्या आप यह नया अर्थ समझा सकती हैं?

जेण्डर का अर्थ (Meaning of gender)

जेण्डर शब्द का इस्तेमाल अब सामाजिक अर्थ में या अवधारणात्मक शब्द के रूप में हो रहा है। इसे अब एक बहुत ही खास अर्थ दे दिया गया है। अपने इस नए रूप में जेण्डर शब्द का अर्थ है औरत तथा मर्द दोनों की सामाजिक व सांस्कृतिक परिभाषा यानि समाज औरत व मर्द को किस तरह से देखता है, उन्हें कैसी भूमिकाएँ, अधिकार, संसाधन देता है, उन्हें किस तरह का व्यवहार व मानसिकता सिखाता है।

आजकल जेण्डर शब्द का इस्तेमाल औरतों व मर्दों की ज़मीनी सामाजिक सच्चाईयों को समझने के लिए, विश्लेषण के एक औज़ार के रूप में किया जाता है।

औरतों की अधीनता की स्थिति की ज़िम्मेदार उनके शरीर को मानने की आम सोच से निपटने के लिए जेण्डर की अवधारणा लाई गई। सदियों से यह माना जाता रहा है कि औरतों तथा मर्दों की चारित्रिक विशेषताएँ, उनकी भूमिकाएँ और समाज से मिलने वाला अलग दर्जा आदि सब उनकी जैविकीयता या उनके शरीर (यानि उनके सेक्स या लिंग) द्वारा निर्धारित होता है। अगर मान लें कि अपने शरीर की वजह से स्त्री–पुरुष में अन्तर और ऊँच–नीच है तो स्त्री–पुरुष असमानता समाज और प्राकृतिक बन जाती है। उसे दूर करने के लिए कुछ करने की ज़रूरत भी नहीं समझी जाती। जेण्डर की धारणा के तहत सेक्स या शारीरिक लिंग एक बात है लेकिन जेण्डर बिलकुल अलग।

जेण्डरीकरण (Genderisation)

हर कोई नर या मादा के रूप में पैदा होता है। हमारी सेक्स की पहचान जननांगों को देखकर ही की जा सकती है। परन्तु हर संस्कृति में लड़के और लड़कियों की अहमियत निर्धारित करने और उन्हें अलग भूमिकाएँ, जवाबदारी और विशेषताएँ प्रदान करने के अपने तरीके होते हैं। जन्म के समय से ही लड़के और लड़कियों को उनके अलग–अलग रूप में ढालने की जो सामाजिक और सांस्कृतिक प्रक्रिया शुरू होती है उसे जेण्डरीकरण कहा जा सकता है। हर समाज में एक नर या मादा बच्चे को धीरे–धीरे मर्द या औरत के रूप में, उसकी पुरुषोचित या स्त्रियोचित विशेषताओं के साथ विकसित किया जाता है। उनके गुण, व्यवहार के तरीके, भूमिकाएँ, ज़िम्मेदारियाँ, अधिकार और उम्मीदें भी अलग–अलग होती हैं।

सेक्स की पहचान जन्म से जैविकीय रूप में मिलती है परन्तु औरतों तथा मर्दों की जेण्डर पहचान सामाजिक और मनोवैज्ञानिक रूप से मिलती है अर्थात ऐतिहासिक व सांस्कृतिक रूप से तय की जाती है।

प्रश्न

जेण्डरीकरण या सामाजीकरण की प्रक्रिया के कोई दो उदाहरण दीजिए।

इस धारणा का इस्तेमाल करने वाले कुछ नारीवादी विद्वानों में से एक ऐन ओकली का कहना है कि – जेण्डर का सम्बन्ध संस्कृति से है। इसका तात्पर्य उन सामाजिक श्रेणियों से है जिनमें मर्द व औरतें, ''पुरूषोचित'' और ''स्त्रियोचित'' रूप ले लेते हैं। लोग नर हैं या मादा इसका पता शारीरिक प्रमाण से किया जा सकता है, लेकिन पुरुषोचित व स्त्रियोचित को इस तरीके से नहीं जाँचा जा सकता, उसके मानदण्ड सांस्कृतिक होते हैं जो समय और स्थान के साथ बदलते हैं। सेक्स की स्थिर सच्चाई को स्वीकारना पड़ेगा परन्तु साथ ही जेण्डर की परिवर्तनशील सच्चाई को भी स्वीकारा जाना चाहिए।

अन्त में वे कहती हैं – जेण्डर का मूल जैविकता या शरीर में नहीं है तथा सेक्स और जेण्डर के बीच रिश्ता कतई ''प्राकृतिक'' नहीं है। चलिए, हम इन दो अलग–अलग सच्चाईयों के बीच मुख्य अन्तर देखें–

सेक्स और जेण्डर में अन्तर

सेक्स	जेण्डर
सेक्स जैविकीय या शारीरिक है। यानि ऐसा फर्क जो औरत व मर्द के जननांगों में और उससे जुड़े प्रजनन कार्यों में साथ दिखाई देता है।	जेण्डर सामाजिक, सांस्कृतिक है। इसका सम्बन्ध पुरुषोचित–स्त्रियोचित गुणों, व्यवहार के तरीकों, भूमिकाओं आदि से है।
सेक्स प्रकृति की देन है।	जेण्डर सामाजिक, सांस्कृतिक है तथा मनुष्य ने बनाया है।
सेक्स स्थाई है। हर जगह व समय शारीरिक रूप से स्त्री व पुरुष के वहीं अंग होते हैं।	जेण्डर परिवर्तनशील है। यह समय के साथ, संस्कृति के साथ, यहाँ तक कि एक परिवार से दूसरे परिवार में बदल सकता है।
सेक्स को बदला नहीं जा सकता।	जेण्डर को बदला जा सकता है।

सामाजिक लिंग और प्राकृतिक लिंग (Social gender and natural gender)

जेण्डर शब्द का अनुवाद दक्षिण एशियाई भाषाओं में किस प्रकार किया जा सकता है?

यह एक समस्या है। अंग्रेज़ी भाषा में दो अलग–अलग शब्द हैं– सेक्स और जेण्डर, जबकि अधिकतर दक्षिण एशियाई भाषाओं में हमारे पास एक ही शब्द है – ''लिंग'' जिसे सेक्स और जेण्डर दोनों के लिए इस्तेमाल किया जाता है। इन दोनों में फर्क दर्शाने के लिए हमने दो शब्द ढूँढे हैं। सेक्स के लिए हम ''प्राकृतिक लिंग'' तथा जेण्डर के लिए ''सामाजिक लिंग'' शब्द का इस्तेमाल कर सकते हैं। वास्तव में ये दोनों शब्द ''सेक्स'' और ''जेण्डर'' शब्दों से बेहतर है क्योंकि इन शब्दों के जरिए उनका अर्थ भी साफ हो जाता है और आगे किसी तरह के स्पष्टीकरण की जरूरत नहीं होती। सामाजिक लिंग या जेण्डर को हम छोटे रूप में सालिंग कह सकते हैं और प्राकृतिक लिंग (सेक्स) को प्रालिंग।

परन्तु क्या सामाजिक लिंग का सम्बन्ध हमारे प्राकृतिक लिंग से नहीं है? क्या औरतों व मर्दों को मिलने वाली भूमिकाएँ, बर्ताव के ढंग उनके प्राकृतिक लिंग के अन्तर के आधार पर नहीं होते?

सामाजिक लिंग और प्राकृतिक लिंग में सम्बध

सिर्फ कुछ हद तक ऐसा होता है। उनकी शारीरिक रचना के कारण औरतों को माहवारी होती है, वे बच्चे पैदा करती हैं, उन्हें दूध पिलाती हैं और वैसे भी प्रजनन के अलावा ऐसा कुछ नहीं है जो औरतें कर सकती हैं पर मर्द नहीं कर सकते या मर्द कर सकते हैं और औरतें नहीं कर सकतीं और बच्चे पैदा करने का यह मतलब नहीं है कि सिर्फ औरतें ही उन्हें पाल सकती हैं या उन्हें ही बच्चों को पालना चाहिए। पालन–पोषण मर्द भी उसी तरह कर सकते हैं। इसलिए नर या मादा शरीर के साथ पैदा होने का यह अर्थ नहीं कि हमारा स्वभाव, बर्ताव, भूमिकाएँ यहाँ तक कि भाग्य भी उन्हीं के आधार पर निश्चित कर दिया जाए।

जेण्डर सामाजिक व सांस्कृतिक विशेषताएँ हैं, प्राकृतिक नहीं, यह इसी बात से साबित हो जाता है कि वे समय के साथ–साथ, अलग–अलग जगहों पर तथा विभिन्न सामाजिक समूहों में भिन्न–भिन्न होती हैं। मिसाल के लिए एक मध्यमवर्गीय परिवार की लड़की की दुनिया घर और स्कूल तक सीमित होती है जबकि आदिवासी लड़की आज़ादी से जंगलों में अकेली घूमती है, मवेशी चराने ले जाती है या फलों, पत्तों और टहनियों को तोड़ने के लिए ऊँचे–ऊँचे पेड़ों पर चढ़ जाती है। वे दोनों ही लड़कियाँ हैं, दोनों के शरीर भी एक जैसे हैं लेकिन उनकी योग्यताओं के विकास में, उनकी आकांक्षाओं और सपनों में बहुत फर्क होता है।

इस तरह से कई परिवारों में पारम्परिक रूप से दस–ग्यारह साल की उम्र के बाद लड़कियों को स्कूल नहीं भेजा जाता था या घर के बाहर निकलने पर पाबन्दी होती थी। प्रायः किशोरी होते ही उनकी शादी कर दी जाती थी। हालांकि अब हालात बदल रहे हैं। इसी तरह मर्दों की शिक्षा, भूमिकाएँ और ज़िम्मेदारियाँ भी बदल रही हैं पर शायद उतनी ज़्यादा नहीं। जब हम कहते हैं कि जेण्डर परिवर्तनशील है, यह बदलता रहता है तो हमारा मतलब ऐसे ही बदलावों से होता है। यह अलग–अलग समय पर, अलग–अलग परिवारों व समाज में अलग हो सकता है। इस सबका अर्थ है कि सालिंग (जेण्डर) प्रकृति का रचा नहीं है, समाज का रचा है।

गतिविधि –

निम्नांकित सूची में दर्शाए गए कार्यों का वर्गीकरण दो भागों में करें –

- युद्ध में लड़ना।
- शिशु को जन्म देना।
- कठोर कंठ–स्वर होना।
- शिशु को स्तनपान कराना।
- कोमल कंठ–स्वर होना।
- राजमिस्त्री का कार्य करना।
- बुनाई, सिलाई, कढ़ाई करना।
- झाड़ू–पोछा लगाना।
- खेत में हल चलाना।
- दाढ़ी–मूंछे होना।

महिला	पुरूष

दोनों सूचियों के कार्यों को प्राकृतिक एवं सामाजिक आधार पर पुनः वर्गीकृत करें।

महिला		**पुरूष**	
प्राकृतिक	सामाजिक	प्राकृतिक	सामाजिक

इस गतिविधि से आपने यह जाना कि प्राकृतिक रूप से मानव में जो बाह्य शारीरिक लक्षण होते हैं, वह मानव को नर एवं मादा के रूप में पहचान देते हैं तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक परंपराओं के आधार पर कार्यों का विभाजन मनुष्य को महिला एवं पुरूष के रूप में पहचान देता है।

कुछ प्रश्न

1. ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र के लड़के–लड़कियों या औरतों व मर्दों के कामकाज में किस–किस तरह से परिवर्तन आ रहे है?
2. किसी समाज में औरतों द्वारा सिर्फ घर का काम करना एवं पुरुषों का घर से बाहर काम करना प्राकृतिक लिंग का उदाहरण है या सामाजिक लिंग का?

सच तो यह है कि हम स्वयं या समाज या संस्कृति हमारे शरीर तक को बदल सकते हैं। हम प्रशिक्षण के द्वारा शरीर के नाप, आकार और ताकत में बदलाव ला सकते हैं। उसी प्रकार उसके इस्तेमाल, गैर इस्तेमाल या अत्याचार से भी शरीर कमज़ोर या ताकतवर बन सकते हैं। हमारे सामने स्त्री–पुरुष पहलवानों, धावकों, तैराकों, नर्तकों या योग साधकों के उदाहरण मौजूद हैं। उसी प्रकार से, औरतों के शरीर की बनावट ऐसी है कि वे प्रजनन कर सकती हैं परन्तु अब यह चुनाव हमारे हाथ में है कि बच्चे हों या नहीं, कितने हों तथा कितने अन्तर पर हों। बच्चे पैदा करना औरतों के लिए उस तरह की अनिवार्यता या मज़बूरी नहीं है जैसी कि मादा पशुओं के लिए है।

''लिंग समानता पुरूषों और महिलाओं के बीच समानता..... इसका मतलब यह नहीं है कि महिलाओं और पुरूषों को समान होना है। लेकिन उनके अधिकार, जिम्मेदारियाँ और अवसर इस बात पर निर्भर होंगे कि वे नर या मादा पैदा हुए हैं या नहीं। लिंग इक्विटी का अर्थ पुरूषों का महिलाओं के लिए उनकी संबंधित जरूरतों के अनुसार अवसर की निष्पक्षता। इसमें बराबर अवसर शामिल हो सकता है जो अलग है लेकिन जिसे अधिकार, लाभ, दायित्व और अवसरों के संदर्भ में समकक्ष समझा जाता है''

– संयुक्त राज्य शैक्षिक वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन

प्रत्येक समाज लड़के और लड़कियों, औरतों और मर्दों के लिए भिन्न नियम बनाता है जो उनके जीवन के हर पक्ष को ही नहीं भविष्य को भी नियंत्रित करते हैं। चलिए कुछ बहुत प्रत्यक्ष नियमों को देखते हैं–

पहनावा

अधिकांश समाजों में लड़के–लड़कियाँ तथा औरतें व मर्द अलग–अलग ढंग की पोशाकें पहनते हैं। कुछ जगहों पर यह फर्क नाम मात्र के लिए होता है तथा कुछ अन्य जगहों पर बहुत ज्यादा। कुछ समुदायों में औरतों को अपने चेहरे सहित पूरा शरीर, एड़ी से चोटी तक ढककर रखना पड़ता है। पहनावे के ढँग का असर व्यक्तियों की गतिशीलता, उनकी आज़ादी की भावना और सम्मान पर पड़ता है।

गुण व विशेषताएँ

अधिकांश समाजों में औरतों से आशा की जाती है कि वे कोमलता, साज–संभाल, सेवा और आज्ञाकारिता, आत्मविश्वासी, तार्किक और होड़ में आगे बढ़ने वाले हों। एक भारतीय नारीवादी वसन्था कन्नबिरान ने एक जेण्डर प्रशिक्षण के दौरान कहा था – ''यह समझा जाता है कि बच्चों को पालना औरतों के लिए उतना ही स्वाभाविक और प्राकृतिक है जितना बच्चों को जन्म देना... और यह सिर्फ अपने बच्चों के सन्दर्भ में नहीं समझा जाता बल्कि यह मान लिया जाता है कि प्यार और ममता का भण्डार मेरे भीतर इस इन्तजार में है कि जैसे ही किसी को उसकी ज़रूरत होगी वह झरने की तरह फूट पड़ेगा। हम शाश्वत माताएँ बन जाती हैं। इस तरह मैं न सिर्फ अपने बच्चों को ममता देती हूँ बल्कि दूसरों के बच्चों को, पति को, अपने भाईयों को, अपनी बहनों को, अपने पिता को (जो सच में मुझे 'मेरी छोटी–सी माँ'! कहकर पुकारते हैं) भी देती हूँ। इस तरह

मैं हर एक के लिए माँ बन जाती हूँ। आपसे यह आशा की जाती है कि आप सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के प्रति मातृत्व भाव उड़ेलती रहें तथा यह सब प्राकृतिक समझा जाता है। उसके लिए कुछ करना नहीं पड़ता इसलिए वह काम नहीं है। यह तो आप उसी स्वाभाविकता से करती है जैसे साँस लेती हैं, खाती या सोती हैं।''

वसन्ता कन्नबिरान का कथन – ''महिलाओं से यह आशा की जाती है कि आप सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के प्रति मातृत्व भाव उड़ेलती रहें तथा यह सब प्राकृतिक समझा जाता है।'' उनका वास्तविक आशय क्या है? इनमें से सही पर सही का निशान लगायें तथा (विकल्प चुनने के लिए अपना तर्क भी दें।)

– महिलायें माँ होने के अलावा और बहुत कुछ हो सकती हैं
– महिलायें प्राकृतिक रूप से मां बनकर लालन–पोषण करने के लिए बनी हैं।

भूमिकाएँ और ज़िम्मेदारियाँ (Roles and responsibility)

मर्दों को परिवार का मुखिया, रोजी–रोटी कमाने वाला, सम्पत्ति का मालिक और प्रबन्धक, राजनीति, धर्म, व्यवसाय और पेशे में सक्रिय व्यक्ति के रूप में देखा जाता है। दूसरी ओर औरतों से आशा की जाती है तथा उन्हें सिखाया जाता है कि वे बच्चे पैदा करें, पालें, बीमारों व बूढ़ों की सेवा करें, सारा घरेलू काम करें आदि–आदि। उनके इसी रूप पर अन्य बातें भी निर्भर करती हैं जैसे उनकी शिक्षा या वास्तव में शिक्षा की कमी, रोज़गार के लिए तैयारी, रोज़गार की प्रकृति आदि। फिर भी औरतों तथा मर्दों की भूमिकाओं के बीच फर्क के स्तर में बहुत विभिन्नता पाई जाती है। कभी–कभी नियम सिर्फ पसन्द को दर्शाते हैं और थोड़े समय के लिए भूमिकाओं की अदला–बदली होने पर किसी को परेशानी नहीं होती।

''एलोर से कारा डयूबोइस की रिपोर्ट है कि यहाँ हालाँकि दोनों लिंगों की अलग–अलग आर्थिक भूमिकाएँ हैं लेकिन फिर भी यदि कोई दूसरे लिंग की भूमिका निभाता है तो उसे बुरा नहीं समझा जाता, बल्कि उन्हें आर्थिक हुनरमन्दी के लिए पसन्द किया जाता है। औरतें जीवन निर्वाह से जुड़ी आर्थिक गतिविधियों का नियंत्रण करती हैं और मर्द वित्तीय सौदों का काम सम्हालते हैं लेकिन फिर भी बहुत से मर्दों को घरेलू खेती–बाड़ी का बेइन्तिहा शौक होता है और कई औरतों में वित्तीय मामलों की गहरी समझ होती है। दूसरी ओर, कुछ संस्कृतियों में जहाँ घरेलू खेती–बाड़ी को औरतों का काम समझा जाता है, अगर मर्द उसमें दिलचस्पी दिखाएँ तो उसे उनकी मर्दानगी में गड़बड़ी का सबूत समझा जाता है। जबकि कुछ अन्य में, दोनों लिंगों की भूमिकाओं को योग्यता से निबाहने वाली औरतों की प्रशंसा की जाती है।''

– ऐन ओकली

कुछ प्रश्न

नीचे कुछ कामों या परिस्थितियों की सूची दी गई है। इन्हें सामाजीकरण या सामाजिक लिंग के आधार पर पुरुषोचित तथा स्त्रीयोचित गुणों में अलग कीजिए– बाजार जाना, खाना बनाना, कपड़े धोना, घर का मुखिया होना,बंदूक–कार जैसे खिलौनों से खेलना, गुड़ियों से खेलना, सजना–संवरना, घर के बाहर का कामकाज सम्हालना।

पुरुषोचित गुण	स्त्रीयोचित गुण

रिश्तों में जेण्डर आधारित भूमिका (Gender based roles in relationship) –

छोटे समूह में चर्चा

प्रतिभागियों को छोटे समूहों में बांटे। यदि चार समूह हों तो उन्हें निम्नानुसार समूहों में काम करने के लिये लिखित में निर्देश दें –

समूह–1

1. रिश्ते – पति–पत्नी एवं भाई–बहन
2. इन रिश्तों में पत्नी व बहन से समाज की क्या अपेक्षाएँ हैं?

समूह–2

1. रिश्ते – पति–पत्नी एवं भाई–बहन
2. इन रिश्तों में पत्नी व बहन से समाज की क्या अपेक्षाएँ हैं?

समूह–3

1. रिश्ते – पिता–बेटी एवं लड़का–लड़की (दोस्त)
2. इन रिश्तों में पिता व लड़के (दोस्त) से समाज की क्या अपेक्षाएँ है?

समूह–4

1. रिश्ते – पिता–बेटी एवं लड़का–लड़की (दोस्त)
2. इन रिश्तों में बेटी व लड़की (दोस्त) से समाज की क्या अपेक्षाएँ हैं?

निर्देश –

चार से अधिक समूह होने पर इस तरह के अन्य रिश्ते या एक से अधिक समूहों को एक ही प्रकार के उपरोक्त रिश्ते भी कार्य के लिए दिए जा सकते हैं। समूह को निर्देश दें कि रिश्तों से अपेक्षाएँ कागज पर साफ–साफ लिखें।

यदि प्रतिभागी समूह में हुई चर्चा को लिखने में कठिनाई महसूस करें तो प्रशिक्षक यह गतिविधि बड़े समूह में बातचीत द्वारा कर सकते हैं, या कुछ प्रतिभागी चर्चा को लिख सकते हैं तो लेखन की जिम्मेदारी इन्हें समूहवार दी जा सकती है।

बड़े समूह में चर्चा –

प्रशिक्षक सभी प्रतिभागियों को बड़े समूह में बैठाएँ व छोटे समूहों में किए गए कार्य का विवरण सभी प्रतिभागियों को मिले, इसके लिए उप–समूहों से बड़े समूह में प्रस्तुतीकरण कराएँ। प्रस्तुतीकरण में बताई गई अपेक्षाओं को निम्नानुसार फ्लिप चार्ट पर लिखें –

अपेक्षाएँ **अपेक्षाएँ**

पत्नी		पति	
1. 2. 3.		1. 2. 3.	

लैंगिक अन्तर एवं जैविकीय सत्य (Gender based difference and genetic fact)

वास्तव में जैविकीय नज़रिये से पुरुष कमज़ोर लिंग है तथा वाई क्रोमोजोम (जो नर लिंग में ही होता है) अनेक अक्षमताओं के लिए ज़िम्मेदार होता है।

एशले मौन्टेग्यू ने अपनी किताब 'द नैचुरल सुपीरियोरिटी ऑफ विमॅन' में ऐसी 62 गड़बड़ियों की सूची दी है जिनका सम्बन्ध मुख्य रूप से या पूर्णतया लिंग निर्धारण करने वाले जीन्स से होता है व प्रायः वे कमियाँ पुरुषों में पाई जाती हैं। ''इन बीमारियों में हीमोफीलिया (खून का थक्का जमने की प्रक्रिया में गड़बड़ी) मिस्ट्रल स्टैनोसिस (दिल की बनावट में खराबी) तथा कुछ मानसिक कमज़ोरियों सहित आधी से ज़्यादा बीमारियाँ गम्भीर किस्म की होती हैं। गर्भधारण की स्थिति से लेकर जीवन के हर चरण में आनुवांशिक कारणों से मादा की तुलना में अधिक नर मरते हैं। इसीलिए शायद प्रकृति मादा की तुलना में अधिक नर उत्पन्न करती। अधिक मृत्यु और अधिक उत्पत्ति – ये दो तथ्य साथ–साथ चलते हैं।''

हालाँकि एक्स तथा वाई शुक्राणु बराबर संख्या में उत्पन्न होते प्रतीत होते हैं परन्तु प्रति 100 मादा भ्रूण ाों की तुलना में 120 से 150 तक नर भ्रूण गर्भ में ठहरते हैं। यू.एस.ए. के श्वेतों में गर्भावस्था पार करते समय तक पहुँचते–पहुँचते यह अनुपात गिरकर 100 पर 106 रह जाता है तथा ब्रिटेन में तो 100.98 ही होता है। मादा की तुलना में अधिक संख्या में नर भ्रूण का गर्भपात हो जाता है या वे मृत जन्म लेते हैं। प्रसव के धक्के में भी मादा की तुलना में अधिक नर जन्म के दौरान मर जाते हैं। प्रसव के दौरान लगी चोटों से 54 प्रतिशत तथा जन्मजात खराबियों के कारण 18 प्रतिशत नर अधिक मरते हैं।

वास्तव में जन्म के समय मादा की जीवन अवधि की सम्भावना लगभग सभी जगह नर से अधिक होती है। ब्रिटेन में जन्म के समय स्त्रियों की जीवन सम्भावना 74.8 जबकि पुरुषों के लिए यह 68.1 है, चीन में क्रमशः 65.6 तथा 61.3 है, ब्राजील में 45.5 तथा 41.8 है।

ऐन ओकली ने शोध से मिले आँकड़ों के द्वारा इस बात के पर्याप्त सबूत दिए हैं कि पुरुषों को संक्रामक बीमारियाँ होने व उससे मृत्यु होने की सम्भावना अधिक है। उनके अनुसार पुरुषों की ''इस कमज़ोरी का सीधा सम्बन्ध स्त्री–पुरुष के भिन्न संघटन से है। संक्रमणों से लड़ने की शरीर की व्यवस्था का नियंत्रण करने वाली जीन्स ऐक्स क्रोमोजोम के ज़रिए मिलती हैं। पुरुषों की इस जन्मजात कमज़ोरी के पीछे निश्चित रूप से जीव रासायनिक कारण हैं।''

दक्षिण एशिया में औरतों की यह जैविकीय श्रेष्ठता उन पर थोपी गई सामाजिक सांस्कृतिक हीनता के आगे कमज़ोर पड़ गई है। यहाँ पर पुरुषों की तुलना में औरतें कम हैं, औरतों की जीवन अवधि पुरुषों से कम है और आज लगभग हर क्षेत्र में औरतें मर्दों से पिछड़ गई हैं।

कुछ प्रश्न

उपरोक्त पैराग्राफ (लैगिंक अन्तर व जैविकीय सत्य) के आधार पर बताइये कि क्या सामाजिक–लैंगिक अन्तर इसलिए पैदा होते हैं क्योंकि लड़कियाँ व औरतें जैविकीय रूप से कमज़ोर हैं?

सदियों से कुछ बड़े विचारक ऐसे भी हुए हैं जो औरतों के बारे में नकारात्मक विचार रखते आए हैं, जो कि निम्नलिखित पैराग्राफ में देखने को मिलता है –

औरतों के बारे में फैलाई गई अफवाहें (Rumours about women)

अरस्तू ने नर सिद्धान्त को सक्रिय तथा मादा को निष्क्रिय कहा था। उनके अनुसार मादा एक ''खण्डित नर'' है, जिसके पास आत्मा नहीं है। औरत की शारीरिक कमज़ोरियों के कारण ही वह योग्यताओं में भी हीन रहती है। उसकी तार्किक योग्यता और निर्णय शक्ति भी कम होती है। चूँकि नर श्रेष्ठ है और मादा हीन, पुरुषों का जन्म शासन करने के लिए और स्त्रियों का जन्म शासित होने के लिए हुआ है। अरस्तु ने कहा है ''पुरुष का साहस उसकी प्रभुता में है और स्त्री का उसकी आज्ञाकारिता में।''

सिगमंड फ्रॉयड ने कहा कि औरत के लिए उसका ''शरीर ही भाग्य है।'' फ्रॉयड के लिए सामान्य मनुष्य एक नर तथा स्त्री उसका बिगड़ा हुआ रूप है, जिसके पास 'लिंग' नहीं है और जिसकी पूरी मानसिकता अपनी इस कमज़ोरी को पूरा करने के संघर्ष के इर्द–गिर्द घूमती है।

औरत के बारे में **डार्विन** साहब का मत – ''औरत अपनी मानसिकता में पुरुष से भिन्न मालूम होती है। खास तौर पर उसमें अधिक कोमलता है और स्वार्थी भाव कम है। आमतौर पर यह माना जाता है कि औरतों में अन्तर्दृष्टि, तत्काल समझ तथा नकल की योग्यता पुरुषों से अधिक है परन्तु इनमें से कुछ बातें ''निम्न प्रजातियों की चारित्रिक विशेषताएँ हैं और इस प्रकार वे सभ्यता के अतीत व निचले दर्जे से जुड़ी हैं।''

कुछ प्रश्न

अरस्तु, सिगमंड फ्रायड तथा डार्विन ने औरतों के बारे में मुख्य रुप से क्या कहा है? एक–एक वाक्य लिखिए। साथ ही सहमत हैं या असहमत हैं, लिखिए–

अरस्तू		सहमत / असहमत
सिगमंड फ्रॉयड		सहमत / असहमत
डार्विन		सहमत / असहमत

क्या आप यह कह रही हैं कि स्त्री तथा पुरुष के बीच के जैविकीय अन्तर का कोई महत्व नहीं है?

औरतें बच्चे पैदा करती हैं। इस सच्चाई का समाज द्वारा दी गई उनकी भूमिका से कोई वास्ता नहीं है?

हम इससे इन्कार नहीं करते कि स्त्री व पुरुष, नर व मादा के बीच कुछ जैविकीय अन्तर हैं लेकिन यह भी सच है कि अलग–अलग संस्कृतियों की सालैंगिक (जेण्डर) भूमिकाओं के बीच इतना फर्क मिलता है कि उन्हें किसी प्रकार से प्रालिंग आधारित नहीं माना जा सकता। यदि हमारी भूमिकाएँ सिर्फ जैविकीयता से तय होती हैं तो संसार की हर औरत सिर्फ खाना पका रही, कपड़े धो रही या सिलाई कर रही होनी चाहिए लेकिन ज़ाहिर है स्थिति ऐसी नहीं है क्योंकि अधिकांश पेशेवर रसोइए, धोबी और दर्जी मर्द हैं।

कुछ प्रश्न

लोगो की दिनचर्या का अवलोकन के आधार पर स्त्री और पुरुषों के कार्यों की सूची बनाइये। सोचिए इनमें से कौन से काम प्राकृतिक लिंग का हिस्सा है और कौन से सामाजिक लिंग का?

हमारा कहना है कि औरतों और मर्दों के बीच जो अन्यायपूर्ण असमानताएँ मौजूद हैं उनके लिए न तो प्रालिंग और न ही प्रकृति ज़िम्मेदार है। जातियों, वर्गों और नस्लों के बीच की ऊँच–नीच की तरह ये ऊँच–नीच भी मनुष्य द्वारा बनाई गई है। इन्हें इतिहास के किसी मोड़ पर बनाया गया था इसलिए इन पर सवाल भी उठाए जा सकते हैं, चुनौती दी जा सकती है और उन्हें बदला भी जा सकता है। एक औरत, बच्चे ज़रूर पैदा करती है लेकिन यह ऐसा कोई कारण तो नहीं जिससे वह हीन या अधीन हो जाए और न ही इस बात को उसकी शिक्षा, प्रशिक्षण व रोज़गार के अवसरों का नियंत्रक होना चाहिए। भिन्न शरीर और उसकी क्रियाओं के कारण ऊँच–नीच क्यों पैदा होनी चाहिए? प्रकृति में हर ओर विविधता है लेकिन फिर भी हर जीव का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। समानता, बराबर अधिकारों और अवसरों के लिए एक जैसा होना तो ज़रूरी नहीं। भिन्नता का मतलब ऊँच–नीच या गैर बराबरी तो नहीं है। गुलाब और कमल भिन्न हैं पर इनमें कौन ऊँचा, कौन नीचा? पाँचों उँगलियाँ एक जैसी नहीं हैं, इनके अलग–अलग काम हैं, पर शरीर के लिए पाँचों की अहमियत है, पाँचों ज़रूरी हैं।

यदि ऐसा है तो क्या आप हमें बता सकती हैं कि समाज किस तरह से स्त्रियों व पुरूषों को स्त्रियोचित और पुरुषोचित (जनाना और मर्दाना) प्राणियों में बदलता है?

यह सामाजीकरण या सालैंगीकरण की प्रक्रिया के द्वारा होता है। यह प्रक्रिया परिवारों और समाज में लगातार चलती रहती है।

समाजीकरण एवं सालैंगीकरण

हम सब जानते हैं कि शिशु के जन्म के साथ ही लिंग के आधार पर वह एक खास श्रेणी का हो जाता है यानि लड़का या लड़की। साथ ही सालिंग (जेण्डर) से जुड़ी पूरी सोच भी उसके अस्तित्व का हिस्सा बन जाता है। हमने पहले भी देखा है कि किस प्रकार कुछ संस्कृतियों में नवजात लड़का–लड़की का स्वागत भी अलग ढंग से होता है। इसके बाद जिस तरह से उस बच्चे को पुकारा जाएगा, खिलाया, पिलाया या दुलारा जाएगा उसमें फर्क होगा। उसके कपड़े–लत्तों में, आगे चलकर उसके लिए नियम, कायदों में, उसे दी गई व्यवहार करने की सीख में अन्तर होगा। इस प्रक्रिया को सामाजीकरण कहा जाता है। सामाजीकरण की प्रक्रिया के दौरान जब बच्चों को उनकी जेण्डर भूमिकाओं की शिक्षा मिलती है और उनकी कच्ची मन–बुद्धि को एक खास दिशा दी जाती है तो उसे सालैंगीकरण (genderisation) की प्रक्रिया या सालैंगिक (जेण्डर) शिक्षा (gender indoctrination) कहते हैं। उनके सामाजिक क्रिया–कलाप के जरिए बच्चों के व्यक्तित्व में पुरुषत्व और नारीत्व पैदा किया जाता है और वे उससे जुड़े बर्ताव के तरीकों, रवैयों और भूमिकाओं को अपने भीतर समाहित (internalise) कर लेते हैं।

सामाजीकरण की प्रक्रिया (Process of socialisation)

रूथ हार्टले के अनुसार सामाजीकरण चार प्रक्रियाओं के द्वारा होता है – छल योजन, (manipulation) धारा बद्धता (canalisation), मौखिक सन्देश (verbal appellation) तथा कार्यों से पहचान (Activity exposure)। अधिकतर इन चारों प्रक्रियाओं में लिंग के आधार पर भेद किया जाता है तथा ये जन्म से ही शिशु के सामाजीकरण का भाग होती हैं।

छल योजन (manipulation) या साँचें में ढालने की प्रक्रिया का तात्पर्य है कि आप किस तरह बच्चे को सम्हालते हैं। देखा गया है कि लड़कों को शुरू से सशक्त और स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में देखा जाता है। कुछ संस्कृतियों में माताएँ छोटी–सी लड़की के भी कपड़ों, बालों के ढंग और साज–शृंगार की तरफ काफी ध्यान देती हैं और उसे कहती हैं कि वह कितनी सुन्दर है। छुटपन के इन शारीरिक अनुभवों का काफी गहरा असर, बच्चे के मन में उसकी अपनी छवि पर पड़ता है। वे अपने आपको एक खास रूप में देखने लगते हैं – सशक्त या कोमल।

दूसरी प्रक्रिया धाराबद्धता (canalisation) के अन्तर्गत लड़के और लड़कियों का ध्यान विशेष चीज़ों या उनके खास पक्षों की ओर निर्देशित किया जाता है। इसके उदाहरण हैं लड़कियों को खेलने के लिए गुड़िया, रसोई के बर्तन आदि देना और लड़कों को बन्दूक, कार और हवाई जहाजों से खेलने के लिए प्रोत्साहन करना। दक्षिण एशिया के कामगार घरों में लड़कियाँ बर्तनों से नहीं खेलती हैं। उन्हें बचपन से ही असली बर्तन और घर साफ करने और असली मुन्ने–मुन्नी खिलाने के काम पर लगा दिया जाता है जबकि वे खुद बच्ची होती हैं। दूसरी ओर लड़के या तो स्कूल जाते हैं या घर के बाहर काम करते हैं। इस तरह से अलग–अलग बर्ताव से लड़के और लड़कियों की रुचियाँ एक खास दिशा में धाराबद्ध होने लगती हैं। आगे चल कर उनकी योग्यताओं, रवैयों, आकांक्षाओं और सपनों का विकास भी अलग–अलग दिशाओं में होता है। कुछ खास चीज़ों से बचपन में बनी पहचान उनके चुनावों पर भी असर डालती है।

मौखिक सन्देश (verbal appellation) भी लड़के और लड़कियों के लिए अलग–अलग होते हैं। मिसाल के लिए हम प्रायः लड़कियों से कहते हैं कि ''ओह! बिटिया कितनी प्यारी लग रही हो।'' शोध अध्ययन बताते हैं कि ऐसी टिप्पणियों से लड़के और लड़कियों की स्वपहचान बनती हैं। घर के सदस्य बहुत छोटे बच्चों से बात करते हुए भी सीधे तौर पर उनकी जेण्डर भूमिकाओं से जुड़े संदेश देते रहते हैं। इन सन्देशों से यह भी पता लगता है कि किस बच्चे को कितना महत्व दिया जा रहा है।

अन्तिम प्रक्रिया है – कार्यों से पहचान (activity exposure) लड़के और लड़कियाँ बचपन से ही अपने चारों ओर पारम्परिक पुरुषोचित और स्त्रियोचित गतिविधियाँ होते देखते हैं। लड़कियों से कहा जाता है कि वे घर के कामकाज में माँ का हाथ बँटाएँ जबकि लड़के बाप के साथ बाज़ार जाते हैं। जिन समुदायों में दोनों लिंगों के बीच अलगाव रखा जाता है वहाँ लड़के–लड़कियाँ दो अलग वातावरण में रहते हैं और दो भिन्न प्रकार की गतिविधियाँ देखते हैं। इन्हीं प्रक्रियाओं के जरिए बच्चे पुरुषत्व और नारीत्व का अर्थ समझते हैं और धीरे–धीरे जाने–अनजाने में उसे अपने व्यक्तित्व का हिस्सा बनाते चलते हैं।

कुछ प्रश्न

रूथ हार्टले के अनुसार सामाजीकरण निम्नांकित चार प्रक्रियाओं के द्वारा होता है। सभी प्रक्रियाओं के एक–एक उदाहरण दीजिए जो आपने अपने आस–पास देखे हों।

छल योजन	
धाराबद्धता	
मौखिक पहचान	
कार्यों से पहचान	

सामाजीकरण की यह प्रक्रिया लगातार चलती रहती है तो फिर ''प्रकृति'' (nature) और ''पालन–पोषण'' की यह बहस अब तक क्यों जारी है? क्या यह साफ नहीं कि लड़कों और लड़कियों के बीच फर्क के लिए उनका पालन–पोषण ही ज़िम्मेदार है?

आश्चर्यजनक बात यह है कि हममें से अनेक इस बात से आगाह भी नहीं होते कि हम अपने बच्चों के साथ क्या कर रहे हैं। सच तो यह है कि हम विश्वास करते हैं कि लड़के और लड़कियाँ भिन्न होते हैं, इसलिए उन्हें वैसे ही पालना भी चाहिए। हम शायद यह न मानें कि हमारे बेटे और बेटियाँ अलग तरह से इसलिए विकसित होते हैं क्योंकि स्कूलों में, समुदाय और घरों में हम खुद उनके साथ अलग–अलग तरह से व्यवहार करते हैं।

बच्चों को भी यह जानकारी नहीं होती कि उन्हें किसी विशेष रूप में ढाला जा रहा है और वे इन भूमिकाओं को सीखते जाते हैं। यदि सभी लड़के और सभी लड़कियाँ हर जगह एक जैसा व्यवहार करते तो समझा जा सकता था कि सालैंगिक भूमिकाएँ प्राकृतिक लिंग पर आधारित हैं लेकिन हमने देखा है कि यह सच नहीं है। लड़कों–लड़कों और लड़कियों–लड़कियों के बीच भी तो इतने फर्क होते हैं। जब बच्चे या बड़े, अपनी सामाजिक लैंगिक (जेण्डर) भूमिका से हटकर कुछ करते हैं, तो उनके खिलाफ नाराज़गी या दण्ड भी एक सशक्त तरीका है जिससे उन्हें निश्चित स्त्री–पुरुष व्यवहार के दायरे में रखा जाता है। सबसे आम दण्ड विधान सामाजिक उपहास या खिल्ली उड़ाना है।

जो औरतें हटकर कुछ करने की हिम्मत करती हैं उनके खिलाफ सामाजिक उपहास का एक भयंकर उदाहरण केरल के एक गाँव में देखा गया। तीन युवा कामगार लड़कियाँ रोज़ अपने पुरुष सहयोगियों को शराबखाने में जाते देखती थीं। एक दिन मज़ाक के तौर पर उन्होंने भी वही करने की सोची। इसके बाद हर तरह के लोगों ने उनका पीछा करना शुरू कर दिया चूँकि औरतों ने ऐसी जगह जाने की हिम्मत की थी जहाँ ''शरीफ'' औरतें नहीं जातीं, उन्हें ''आवारा'' का खिताब दे दिया गया।

सामाजिक दण्ड के अलावा आर्थिक दण्ड भी होते हैं। ऐन ओकली के अनुसार एकल औरतों व बच्चों को जिन कड़ी आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है वे समाज द्वारा अपनी नापसन्दगी ज़ाहिर करने का ढंग है। इसी प्रकार जब बच्चे निश्चित नियमों और तरीकों से हटते हैं तो परिवार वाले खर्चा पानी बन्द करने की धमकी देते हैं।

तृतीय लिंग (थर्ड जेण्डर) अथवा ट्रांसजेण्डर

(Third Gender or Transgender)

उद्देश्य –

(क) थर्ड जेण्डर के प्रति शिक्षक एवं शिक्षिकाओं को जागरूक एवं संवेदनशील करना।

(ख) थर्ड जेण्डर की समस्याओं से अवगत कराना एवं संभावित समाधान हेतु पहल करना।

(ग) थर्ड जेण्डर से संबंधित शासकीय एवं न्यायिक निर्देशों से अवगत कराना।

(घ) लैंगिक समानता के लिए समाज में चेतना जागृत करना।

(ड़) थर्ड जेण्डर के प्रति सामाजिक एवं पारिवारिक स्वीकार्यता को बढ़ाना।

इसका संबंध व्यक्ति की मानसिकता से होता है। ऐसा व्यक्ति जिसका लिंगभाव (जेण्डर अभिव्यक्ति) जन्म से प्राप्त लैंगिक पहचान (बायोलॉजिकल सेक्स) से भिन्न होता है उसे तृतीय लिंग या ट्रांसजेण्डर व्यक्ति कहा जाता है। यानि ऐसा पुरूष जिसकी लिंगभाव व्यवहार (जेण्डर अभिव्यक्ति) महिलाओं की भांति हो और ऐसी महिला जिसका लिंग व्यवहार (जेण्डर अभिव्यक्ति) पुरूषों की भांति होता है, और यदि वे स्वयं की पहचान तृतीय लिंग/ट्रांसजेण्डर के रूप में करना चाहते हैं, तो उन्हें तृतीय लिंग/ट्रांसजेण्डर कहा जायेगा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय रिट पिटिशन 400/2012 की उद्घोषणा क्रमांक 01 और 02 के अनुसार ऐसे ट्रांसजेण्डर स्वयं की अपनी स्वेच्छा से महिला, पुरूष या तृतीय लिंग के रूप में कानूनी पहचान राज्य सरकार एवं केन्द्र सरकार से प्राप्त कर सकते हैं।

तृतीय लिंग या ट्रांसजेण्डर समुदाय के उपवर्ग
(Sub-classes in transgenders)

माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय तथा भारत सरकार सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय नई दिल्ली द्वारा गठित विशेषज्ञ समिति के अनुसार तृतीय लिंग समुदाय के मुख्य रूप से निम्न उपवर्ग हैं :–

1. हिजरा – यह ट्रांसजेण्डरों का एक सांस्कृतिक एवं सामाजिक उपवर्ग है, जिनकी अपनी निर्धारित मान्यता एवं परम्परा होती है। इनकी आजीविका का साधन अधिकतर बधाई मांगना, दुआ देना तथा नृत्य करना होता है। हिजरा समाज में गुरू–शिष्य परंपरा होती हैं।

2. धार्मिक एवं सांस्कृतिक उपवर्ग – तृतीय लिंग समुदाय का एक वर्ग धार्मिक मान्यताओं के आध ाार पर जीवनयापन करता है, ये अधिकतर मंदिरों, देवालयों, आश्रमों व धार्मिक केन्द्रों में निवास करते है। इनको अनेक नामों से जाना जाता है जैसे – सखी, जोगता, जोगप्पा, शिवशक्ति, आरवानी आदि।

3. ट्रांसवूमेन – ऐसी ट्रांसजेंडर जो हिजरा समाज से नहीं जुड़ी है तथा जो अपनी कानूनी पहचान एक महिला के रूप में निर्धारित करना चाहती है ट्रांसवूमेन है। ट्रांसवूमेन अधिकतर लिंग प्रत्यारोपण सर्जरी करा लेते है।

4. ट्रांसमेन – ऐसा ट्रांसजेण्डर जिसका जन्म से निर्धारित लिंग महिला का था और जिसने सर्जरी प्रक्रिया के बाद स्वयं को पुरूष के रूप में परिवर्तित कर लिया है। ट्रांसमेन कहलाता है।

5. कोथी – जो अपने जन्म से निर्धारित लैंगिक पहचान के साथ जीवन भर रहते हैं, उन्हें कोथी कहते हैं। यद्यपि लिंगभाव (जेण्डर अभिव्यक्ति) जन्म से प्राप्त लैंगिक पहचान (बायोलॉजिकल सेक्स) से भिन्न होता है फिर भी ये लिंग प्रत्यार्पण सर्जरी नहीं कराते हैं। ये प्रायः पुरूष की वेशभूषा में जीवन–यापन करते हैं।

तृतीय लिंग व्यक्तियों के विरूद्ध होने वाले मुख्य अपराध व हिंसा
(Crimes and Voilence against transgender people)

तृतीय लिंग समुदाय का व्यक्ति सभी प्रकार की हिंसा एवं प्रताड़ना का सामना करता है, लेकिन कुछ प्रकार की हिंसा और प्रताड़ना विशेष रूप से होती है, वह निम्नलिखित है :–

1. पारिवारिक बहिष्कार – तृतीय लिंग समुदाय के व्यक्ति को सामाजिक कलंक समझकर कई बार समाज, परिवार से बहिष्कृत कर दिया जाता है।

2. लैंगिक हिंसा – तृतीय लिंग समुदाय के व्यक्ति अधिकतर छेड़छाड़ व लैंगिक शोषण के शिकार होते हैं। लैंगिक हिंसा का सामना उन्हें परिवार व परिवार के बाहर भी करना पड़ता है।

3. मौखिक हिंसा – तृतीय लिंग व्यक्ति के प्रति असम्मान जनक अपशब्दों जैसे – छक्का, मामू, हिजड़ा, नपुंसक आदि का प्रयोग किया जाता है। इससे उनमें अवसाद, आत्मघाती प्रवृत्ति, कुण्ठा व आत्मविश्वास की कमी आती है।

4. आत्महत्या की प्रवृत्ति – सामाजिक भेद–भाव व अकेलेपन के कारण उनके अंदर आत्महत्या की भावना विकसित होती है।

5. भावनात्मक हिंसा – ट्रांसजेण्डरों के विवाह को कानूनी मान्यता नहीं मिल पाने के कारण कई बार उनके जीवन साथी उन्हें मानसिक व भावनात्मक रूप से ठेस पहुँचा कर बीच में साथ छोड़ देते हैं। विवाह को किसी भी प्रकार की कानूनी मान्यता नहीं होने के कारण यह अपराध के रूप में पंजीबद्ध भी नहीं हो पाता है।

6. आर्थिक शोषण – तृतीय लिंग समुदाय के व्यक्तियों को भावनात्मक सहारा देने के बहाने कई बार उनके मित्रों व समुदाय के सदस्यों द्वारा आर्थिक शोषण किया जाता है।

7. शारीरिक हिंसा – कई बार तृतीय लिंग व्यक्ति के स्वभाव एवं रहन–सहन को बदलने के लिए परिवार के लोगों के द्वारा मारपीट की जाती है। यह मारपीट परिवार में तथा स्कूली जीवन में अधिकतर होती है।

8. सार्वजनिक स्थलों व सार्वजनिक सेवा केन्द्रों में भेदभाव – कई बार तृतीय लिंग व्यक्तियों को हॉटलों, सरकारी अस्पतालों, सिनेमा हॉल, सार्वजनिक नल, स्कूल/कॉलेजों आदि सार्वजनिक स्थानों में लैंगिक भेदभाव का शिकार होना पड़ता है।

9. अपराधिक गतिविधियों में संलिप्तता – कई बार तृतीय लिंग समुदाय के व्यक्ति आजीविका उपार्जन हेतु अपराधिक गतिविधियों में भी संलिप्त हो जाते हैं, जैसे – अवैध वसूली करना व पैसों के लिए यौनकर्म करना, लेकिन इन अपराधिक गतिविधियों में संलिप्तता का मुख्य कारण सामाजिक भेदभाव व सम्मानजनक आजीविका का नहीं होना है।

10. बंधुवा मजदूरी/भिक्षावृत्ति – परिवार से निकाल दिये जाने के बाद कई बार तृतीय लिंग समुदाय के व्यक्तियों को दबाव पूर्वक बंधुवा मजदूरी व भिक्षावृत्ति जैसे कार्य करवाये जाते हैं। इस अपराध में समुदाय के ही लोग संलिप्त रहते हैं।

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा राज्य व केन्द्र सरकार को प्राप्त दिशा निर्देश –

(Guidelines for state and central goverment from supreme court) -

1. ट्रांसजेण्डर व्यक्ति को यह अधिकार है कि वह स्वेच्छा से अपने लिंग का निर्धारण महिला, पुरूष व तृतीय लिंग के रूप में कर सकता है तथा राज्य व केन्द्र सरकार इसे कानूनी मान्यता प्रदान करेगी।
2. तृतीय लिंग को सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ा वर्ग माना जावेगा तथा उन्हें शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश तथा नियुक्तियों में तदनुसार आरक्षण की सुविधा प्राप्त होगी।
3. तृतीय लिंग के व्यक्तियों की अनेक यौन–स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं होती हैं जिसके लिए शहरी स्वास्थ्य केन्द्रों में उनके लिए पृथक HIV निगरानी केन्द्र/कक्ष (HIV Serosurveillance) स्थापित किया जावे।
4. तृतीय लिंग के व्यक्ति भय, संकोच, सामाजिक दबाव, डिप्रेशन, आत्महत्या की प्रवृत्तियां सामाजिक बहिष्कार आदि के शिकार होते हैं। इन पर लिंग प्रमाणीकरण आदि के लिए दबाव बनाना अनैतिक और अवैधानिक होगा।
5. नगरीय निकायों द्वारा निर्मित किए जाने वाले भवनों में तथा सार्वजनिक भवनों को भवन निर्माण अनुज्ञा प्रदान करते समय यह सुनिश्चित करना होगा कि तृतीय लिंग व्यक्तियों के लिए पृथक शौचालयों का प्रावधान अनिवार्य रूप से हो।
6. तृतीय लिंग के व्यक्तियों के लिए हितग्राही मूलक योजनाएँ बनाई जाएँ।
7. निकायों को जन–जागरण अभियान के माध्यम से यह सुनिश्चित करना होगा कि तृतीय लिंग के समुदाय को अछूत न माना जावे तथा उन्हें समाज में सम्मान से जीने का अवसर प्राप्त हो।
8. निकायों को अपने स्तर पर यथासंभव पहल करनी होगी ताकि तृतीय लिंग के समुदाय को हमारी प्राचीन संस्कृति और सामाजिक जीवन में प्राप्त सम्मानजनक स्थान प्राप्त हो सके।

तृतीय लिंग व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) विधेयक 2017 के महत्वपूर्ण बिंदुओं की जानकारी – (Important points in third gender rights bill 2017) -

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय द्वारा प्रस्तावित इस उभयलिंगी व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) विधेयक 2017 में 8 अध्याय हैं। इन आठ अध्यायों में तृतीय लिंग समुदाय के अधिकारों को कानूनी रूप से संरक्षित किया गया है –

अध्याय 1 – इसमें ट्रांसजेण्डर शब्द को इस प्रकार परिभाषित किया गया है –

(क) न पूरी तरह से पुरूष न पूरी तरह से महिला

(ख) स्त्री और पुरूष का समन्वय

(ग) न पुरूष और न महिला

(घ) ऐसा व्यक्ति जिसकी लैंगिक अभिव्यक्ति उसके जन्म से प्राप्त लिंग से मिलती–जुलती ना हो।

अध्याय 2 – इसमें सभी प्रकार के भेदभाव को खत्म करने की बात कही गई है, जैसे – सार्वजनिक स्थलों, सार्वजनिक सेवा केन्द्रों, शैक्षणिक संस्थाओं, आजीविका के अवसरों तथा स्वास्थ्य सेवा केन्द्रों में ट्रांसजेण्डर व्यक्ति के साथ होने वाले भेदभाव खत्म होना चाहिए।

अध्याय 3 – इसमें ट्रांसजेण्डरों की पहचान को मान्यता प्रदान करने संबंधी दिशा निर्देश दिए गए हैं। ट्रांसजेण्डरों की पहचान को मान्यता प्रदान करने हेतु प्रत्येक जिले में जिला स्तरीय निगरानी समिति गठित होगी। समिति द्वारा तृतीय लिंग समुदाय के व्यक्ति को परिचय पत्र प्रदान किया जाएगा। यह परिचय पत्र समस्त शासकीय प्रयोजनों, मतदान परिचय पत्र, राशन कार्ड, पासपोर्ट कार्ड हेतु मान्य किया जाएगा।

अध्याय 4 – इसमें राज्य व केन्द्र सरकार को तृतीय लिंग समुदाय के विकास के लिए विभिन्न प्रकार की कल्याणकारी योजनाओं का निर्माण करने हेतु दिशा–निर्देश दिए गए हैं।

अध्याय 5 – इसमें कार्यस्थल पर ट्रांसजेण्डरों के साथ होने वाले भेदभाव का निषेध करते हुए पारिवारिक जिम्मदारियाँ तय की गई हैं।

अध्याय 6 – इस अध्याय में ट्रांसजेण्डरों के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य व सामाजिक सुरक्षा तय करने हेतु शासन को दिशा–निर्देश दिए गए हैं।

अध्याय 7 – इस अध्याय में राष्ट्रीय स्तर पर ट्रांसजेण्डरों के विकास की रूपरेखा तय करने हेतु राष्ट्रीय कौंसिल के गठन करने संबंधी दिशा–निर्देश दिए गए हैं।

अध्याय 8 – इसमें ट्रांसजेण्डरों के साथ होने वाली हिंसा को रोकने हेतु दण्ड व्यवस्था का निर्धारण किया गया है।

भारतीय संविधान में मौलिक अधिकार –

अनुच्छेद 14 – विधि के समक्ष समता – राज्य, भारत के राज्यों के किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता से या विधियों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा।

अनुच्छेद 15 – धर्म, मूल, वंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध – राज्य किसी नागरिक के विरूद्ध केवल धर्म, मूल, वंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।

अनुच्छेद 16 – लोक नियोजन के विषय में अवसर की समता–राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से संबंधित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समता होगी।

अनुच्छेद 19, 1(क) – सभी नागरिकों को बोलने और अभिव्यक्ति की स्वातंत्र्य होगी।

अनुच्छेद 21 – प्राक् और दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण किसी व्यक्ति को, उसके प्राक् या दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जायेगा अन्यथा नहीं।

1. विधि के समक्ष क्षमता का अधिकार (Fundamental rights in Indian constitution) –

संविधान के अनुच्छेद 14 में प्रावधान किया गया है कि राज्य किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता या विधियों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा। यह अनुच्छेद 'व्यक्ति' को केवल 'पुरूष' और 'स्त्री' तक ही सीमित नहीं करता है। 'हिजड़ा' या 'ट्रांसजेण्डर' जो न तो पुरूष है और न ही स्त्री, भी शब्द 'व्यक्ति' के अन्तर्गत आते हैं। इसलिए राज्य के उन सभी क्षेत्र के कार्यों, नियोजन, स्वास्थ्य सेवाएँ, शिक्षा तथा समान सिविल और नागरिक अधिकारों, जिनका उपयोग देश के अन्य नागरिक कर रहें हैं, यह वर्ग भी विधियों का कानूनी संरक्षण प्राप्त करने का हकदार है। अतः उनके साथ लिंगीय पहचान या लिंगीय उत्पत्ति के आधार पर विभेद करना विधि के समक्ष समानता और विधि के समान संरक्षण का उल्लंघन करता है।

2. किन्नरों के साथ लिंग–विभेद (अनुच्छेद 15 एवं 16) –

संविधान के अनुच्छेद 15 एवं 16 संयुक्त रूप से लिंगीय पक्षपात या लिंगीय विभेद को प्रतिबंधित करते हैं। इसमें प्रयोग किया गया शब्द 'लिंग' केवल पुरूष या स्त्री के जैविक लिंग तक ही सीमित नहीं है बल्कि इसके अंतर्गत वे लोग भी शामिल हैं जो स्वयं को न तो पुरूष मानते हैं और न स्त्री। अतः यह वर्ग इन अनुच्छेदों के संरक्षण के साथ–साथ अनुच्छेद 15 (4) एवं 16 (4) के द्वारा प्रदत्त आरक्षण का भी लाभ प्राप्त करने का अधिकारी है, जिसे देने के लिए राज्य बाध्य है।

वास्तव में यह दोनों अनुच्छेद 'सामाजिक समेकता (Social Equality)' की अपेक्षा करते हैं और इनका लाभ ट्रांसजेण्डर समुदाय तभी ले सकता है जब उसे भी सुविधाएँ और अवसर प्रदान किए जाएं।

3. किन्नरों की स्व–पहचानीकृत लिंग एवं आत्म–अभिव्यक्ति (अनुच्छेद 19 {1} क) – अनुच्छेद 19 (1) {क} का कथन है कि सभी नागरिकों को वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता होगी और इसके अंतर्गत किसी नागरिक के द्वारा अपने 'स्व–पहचानीकृत लिंग (Self-Identified Gender)' को अभिव्यक्त करने का अधिकार भी सम्मिलित है, जिसे पहनावा (Dress), शब्द, कार्य या व्यवहार अथवा अन्य रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है और संविधान के अनुच्छेद 19 (2) में कथित प्रतिबंधों के सिवाय किसी ऐसे व्यक्ति की व्यक्तिगत प्रस्तुति या वेशभूषा पर अन्य कोई प्रतिबंध नहीं लगाया जा सकता है। अतः ट्रांसजेण्डर समुदाय के सदस्यों की एकांतता का महत्व, स्व–पहचान (Self Identity), स्वायत्ता और अधिकारों की रक्षा करने तथा उन्हें मान्यता प्रदान करने के लिए बाध्य है।

4. लिंगीय पहचान और गरिमा का अधिकार (अनुच्छेद 21) –

संविधान का अनुच्छेद 21 यह प्रावधान करता है कि ''किसी व्यक्ति को, उसके प्राक् या दैहिक स्वतंत्रता से विधि स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा अन्यथा नहीं''। यह अनुच्छेद किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वायत्तता एवं उस की निजता के अधिकार को संरक्षण प्रदान करता है। किसी व्यक्ति की लिंगीय पहचान को मान्यता दिया जाना गरिमा के मूल अधिकार और स्वतंत्रता का एक भाग है।

तृतीय लिंग व्यक्ति के प्रति शिक्षकों का व्यवहार एवं पारिवारिक काउंसिलिंग –

(Behaviour of teachers with third gender, family councelling) –

हर व्यक्ति मुख्य रूप से दो धरातलों पर जीवनयापन करता है पहला मानसिक या आंतरिक धरातल तथा दूसरा बाह्य या सामाजिक धरातल। केवल एक पक्ष के विकास से व्यक्ति पूर्ण नहीं हो सकता, उसके दोनों पक्षों के व्यक्तित्व का विकास होना चाहिए। इन्हीं बातों को ध्यान रखकर शिक्षक स्कूल में पढ़ने वाले तृतीय लिंग या ट्रांसजेण्डर विद्यार्थी के विकास में अपना योगदान दे सकते हैं। इनकी पहचान करना बहुत ही मुश्किल होता है फिर भी इनके व्यवहार प्रदर्शन से कुछ हद तक इनकी पहचान की जा सकती है। यदि कोई पुरूष अपनी सामाजिक अभिव्यक्ति एक महिला की भाँति कर रहा हो या कोई महिला अपनी सामाजिक अभिव्यक्ति एक पुरूष की भाँति कर रही हो तो उन्हें ट्रांसजेण्डर के रूप में पहचान सकते हैं लेकिन स्पष्ट रूप से पहचान तभी हो सकती है जब वे स्वयं ही अपनी पहचान तृतीय लिंग या ट्रांसजेण्डर के रूप में करते हों।

तृतीय लिंग व्यक्ति के प्रति शिक्षकों का दायित्व –

(Responsibilities of teachers towards third gender persons) –

1. ट्रांसजेण्डर बच्चा यदि अपनी पहचान छुपाना चाहता है तो शिक्षक की भूमिका परामर्शदाता की होगी और यदि वह अपनी पहचान उजागर करना चाहता है तो शिक्षक की भूमिका अन्य बच्चों के लिए परामर्शदाता की होगी।
2. तृतीय लिंग समुदाय या ट्रांसजेण्डर बच्चे का व्यवहार प्रदर्शन उसके जन्मजात लिंग के अनुरूप न हो तो भी उसकी पहचान तृतीय लिंग या ट्रांसजेण्डर के रूप में सार्वजनिक नहीं किया जाना चाहिए।
3. ट्रांसजेण्डर बच्चों की प्रत्येक गतिविधि का अप्रत्यक्ष रूप से निगरानी की जानी चाहिए ताकि उनके साथ किसी भी प्रकार का भेदभाव या हिंसा न हो सके।
4. स्कूल व संस्था में भेदभाव निगरानी समिति का गठन किया जाना चाहिए।
5. पुस्तकालयों में ट्रांसजेण्डर मुद्दों पर पुस्तकें रखी जानी चाहिए।
6. स्टॉफ एवं छात्रों को फिल्मों के माध्यम से जागरूक करना चाहिए।
7. यदि कोई विद्यार्थी स्वयं को सार्वजनिक रूप से ट्रांसजेण्डर प्रमाणित करता है तो उससे पूछना चाहिए कि क्या उसके परिवार के साथ काउंसिलिंग की आवश्यकता है और यदि वह विद्यार्थी हाँ कहता है तो उसके परिवार के लोगों की काउंसिलिंग भी शिक्षक द्वारा की जानी चाहिए।

सारांश (Summary)–

- जेंडर शब्द का प्रयोग महिला व पुरूष के प्रति सामाजिक सोच को समझने के लिए विश्लेषण के एक माध्यम के रूप में किया जाता है।

- सेक्स – (जैविकीय या शारीरिक) तथा जेण्डर (सामाजिक, सांस्कृति) में अंतर होता है।
- ट्रांसजेण्डर (तृतीय लिंग) का संबंध व्यक्ति की मानसिकता से होता है। जिस व्यक्ति की जेण्डर अभिव्यक्ति जन्म से प्राप्त लैंगिक पहचान से भिन्न होती है, उसे तृतीय लिंग या ट्रांस जेण्डर व्यक्ति कहा जाता है।
- तृतीय लिंग व्यक्तियों के विरूद्ध अपराधों व हिंसा से सुरक्षा हेतु अनेक प्रावधान तथा राज्य व केन्द्र सरकार द्वारा हितग्राही योजनाएँ बनाई गई हैं।

अभ्यास कार्य

1. रूथ हार्टले के अनुसार सामाजीकरण की प्रक्रियाओं के अलावा क्या अन्य प्रक्रियाएँ भी होती हैं? अपने अनुभव के आधार पर लिखिए।
2. जेण्डर क्या है? समझाइये।
3. ''सामाजिक लिंग (जेण्डर) प्रकृति का रचा नहीं है, समाज का रचा है।'' कथन की विवेचना कीजिए।
4. परिवार में होने वाले उन व्यवहारों को चिन्हित कीजिए जिससे एक शिशु का सामाजीकरण होता है।
5. ''जेण्डर परिवर्तनशील है।'' इस कथन की पुष्टि में अपना तर्क दीजिए।
6. सामाजीकरण से क्या आशय है? तथा परिवार में होने वाले उन व्यवहारों को चिन्हित किजिए जिससे एक शिशु का सामाजीकरण/जेण्डरीकरण होता है।
7. 'माँ बनना' और 'बच्चे पालना' इनमें से कौन प्राकृतिक लिंग का हिस्सा है तथा कौन सामाजिक लिंग का? तर्क दीजिए।
8. प्राकृतिक लिंग (सेक्स) तथा सामाजिक लिंग (जेण्डर) में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
9. महिलाएं मोटर सायकिल नहीं चला सकती हैं क्योंकि वे साड़ी या बुरखा पहनती हैं। पुरुष लोगों के हाथ से अच्छी रोटी नहीं बन सकती, क्योंकि उनके हाथ सख्त होते हैं। कमला भसीन के आलेख – जेण्डर क्या है, के आधार पर इन कथनों का परीक्षण कीजिए।
10. लड़कियों को घर पर किस–किस तरह के असमान व्यवहार का सामना करना पड़ता है?
11. जैविक संरचना के आधार पर कहा गया है कि महिलाओं की तुलना में पुरुष कमजोर हैं लेकिन हम समाज में देखते हैं कि लोग महिलाओं को अधिक कमजोर मानते हैं। इसका क्या कारण हो सकता है?
12. लड़कियाँ कुछ खास तरह के काम जैसे, मैकेनिक बनना, फुटबाल खेलना, आदि करने के बारे में सोचती भी नहीं हैं। इसका क्या कारण हो सकता है? यदि लड़कियों को बचपन से ही इस तरह के काम व खेलों में प्रोत्साहन मिले तो क्या वे भी ये कर सकती हैं?

13. औरतों की सामाजिक भूमिका किस हद तक उनकी शारीरिक बनावट पर आधारित है?
14. समाज में स्त्रीयोचित व पुरुषोचित व्यवहार कैसे बनता है?
15. लड़कियाँ माँ–बाप के लिए बोझ हैं, यह रूढ़िबद्ध धारणा एक लड़की के जीवन को किस तरह प्रभावित करती है?
16. तृतीय लिंग अथवा ट्रांसजेण्डर समुदाय की प्रमुख समस्याएँ क्या–क्या हैं और उनके संभावित समाधान क्या हो सकते हैं?
17. तृतीय लिंग अथवा ट्रांसजेण्डर समुदाय के अधिकारों के संरक्षण के प्रावधान कौन–कौन से हैं ?

प्रयोजना कार्य

आपको अपने भाई से क्या अपेक्षाएँ है एवं अपनी बहन से क्या अपेक्षाएँ है? लिखे।

संदर्भ सूची

1. भला ये जेण्डर क्या है, कमला भसीन, अनुवाद वीणा शिवपुरी, जागोरी प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. हमारी बेटियाँ इंसाफ की तलाश में।
3. नारीवाद यह आखिर है क्या? कमला भसीन–निघत सईद खान, अनुवाद वीणा शिवपुरी, कमला भसीन और जुही जैन, जागोरी प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. काश, मुझे किसी ने बताया होता!! कमला भसीन, जागोरी प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. पितृसत्ता क्या हैं? कमला भसीन, अनुवाद वीणा शिवपुरी, जागोरी प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. पुरुषों के साथ जेण्डर कार्यशालाएँ।
7. लड़की क्या हैं? लड़का क्या हैं? कमला भसीन, जागोरी प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. You can also visit for more reading - www.jagori.org

♦ ♦ ♦ ♦ ♦

इकाई – 09

खण्ड–स

मातृ एवं पितृ सत्तात्मक समाज में चुनौतियाँ

(Challenge in patriarchal and matriarchal societies)

सामान्य परिचय (General Introduction)

''शिक्षकों की तैयारी सामाजिक न्याय के लक्ष्य की ओर बढ़ने में एक गतिशील वाहन हो सकती है।''

– हैन्सन 2008

समाज में मौजूद असमानताएँ जिस तरह से भेदभाव का कारण बनती है ठीक उसी तरह पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था भी कुछ खास तरीकों से औरतों के साथ भेदभाव को जन्म देती हैं। इसके परिणामस्वरुप महिलाएँ चाहे वह किसी भी वर्ग की क्यों न हों, रोजमर्रा की जिन्दगी में अनेक तरीकों से अपने को गिरे हुए दर्जे का महसूस करती हैं।

इस अध्याय में पुरुष प्रधान समाज में पुरुषों का वर्चस्व औरतों पर किस–किस तरह से होता है? किन–किन चीजों पर होता है? किन–किन राजनैतिक, धार्मिक और सामाजिक संस्थाओं पर पुरुष का नियंत्रण होता है? आदि पर चर्चा की गई है।

इकाई के उद्देश्य (Objectives of Unit)

1. समाज में औरतों पर होने वाले विभिन्न प्रकार के भेदभाव को पितृसत्तात्मक व्यवस्था के संदर्भ में समझना।

2. यह समझना कि पितृसत्तात्मक व्यवस्था किन–किन राजनैतिक, धार्मिक तथा सामाजिक संस्थाओं पर और कैसे नियंत्रण रखती है?

पितृसत्ता क्या है? (What is Patriarchy)

पितृसत्ता का शाब्दिक अर्थ है पिता या ''कुलपति'' (परिवार का बुजुर्ग पुरुष) की सत्ता या शासन। आरम्भ में इस शब्द का इस्तेमाल एक खास तरह के पुरुष प्रधान परिवार के लिए किया जाता था। यह एक बडा संयुक्त परिवार होता था, जिसका सर्वेसर्वा एक बुजुर्ग पुरुष होता था। इस परिवार में इस कुलपति के नीचे औरतें, छोटे मर्द, बच्चे, दास, घरेलू नौकर सभी होते थे। आजकल इस शब्द का इस्तेमाल आम तौर पर पुरुष सत्ता दर्शाने या उन शक्ति सम्बन्धों को बताने के लिए, जिनमें मर्द औरतों को दबाते हैं, या उस व्यवस्था के लिए किया जाता है, जो अनेक तरीकों से औरतों को निचले दर्जे पर रखती हैं। किसी भी वर्ग की औरतें क्यों न हों, रोज़मर्रा की जिन्दगी में अनेक तरीकों से अपने को गिरे हुए दर्जे को महसूस करती हैं। परिवार, काम की जगह और समाज में औरतों के साथ होने वाला भेदभाव, बेकद्री, अपमान, नियंत्रण, शोषण जुल्म और हिंसा उसके अनेक रूप हैं। पितृसत्ता यानि स्त्री की प्रजनन शक्ति, यौनिकता और श्रम पर पुरुष नियंत्रण।

पितृसत्ता की पहचान (Identification of Patriarchal)

पितृसत्ता किस तरह से हमारे सामने आती है? क्या हम उसे अपने जीवन में पहचान सकते हैं? इस बात को कुछ उदाहरणों के ज़रिए समझा जा सकता है। हर उदाहरण एक खास किस्म के भेदभाव और पितृसत्ता का एक रूप है :

* मैंने सुना है मेरे जन्म पर परिवार वाले बहुत दुखी हुए थे। वे लड़का चाहते थे। (बेटे को महत्व)
* मेरे भाईयों को खाना माँगने का हक था। वे जो चाहते थे, हाथ उठा कर लेते थे। हमें कहा जाता था, जब तक दिया न जाए, इन्तजार करो। हम बहनें और माँ बचे–खुचे से काम चला लेती थीं। (भोजन के बँटवारे में लड़कियों के साथ भेदभाव)
* मुझे घर के कामों में माँ की मदद करनी पड़ती है, भाई नहीं करते। (औरतों और बच्चियों पर घरेलू काम का बोझ)
* स्कूल जाना एक बड़ी लड़ाई थी। मेरे पिता का खयाल था कि हम लडकियों के लिए पढ़ाई की कोई ज़रूरत नहीं। (लड़कियों के लिए पढ़ाई के अवसरों का अभाव)
* मैं सहेलियों से मिलने या खेलने बाहर नहीं जा सकती।
* मेरे भाई कितने भी बजे घर आ सकते हैं, लेकिन मुझे अँधेरा ढलने से पहले लौटना पड़ता है। (लड़कियों के लिए आज़ादी और आने–जाने की छूट का अभाव)
* मेरे पिता मेरी माँ को कई बार मारते थे। (पत्नी प्रताड़ना)
* मेरे भाई तो पिता से भी गए गुज़रे थे। वो नहीं चाहते थे कि मैं किसी भी लड़के से बात करूँ। (औरतों लड़कियों पर पुरुष नियंत्रण)
* मेरे पिता की सम्पत्ति में मेरा हिस्सा नहीं है। मेरे पति की सम्पत्ति भी मेरी नहीं है। असल में, ऐसा कोई घर नहीं, जिसे मैं अपना कह सकूँ। (औरतों के लिए उत्तराधिकार या सम्पत्ति अधिकार का अभाव)

कुछ प्रश्न

उपरोक्त तरह के कुछ और उदाहरणों की सूची बनायें तथा विचार करें कि इसमें पुरुषों द्वारा औरतों पर नियंत्रण का औरतों पर क्या प्रभाव पड़ता है?

जैसे ही हम टुकड़ों में बँटे हुए इन अलग–अलग अनुभवों पर सोच–विचार करते हैं तो एक साझी तस्वीर बनती नज़र आती है। हमें यह पता चलता है कि प्रत्येक औरत को किसी–न–किसी रूप में इस भेदभाव का सामना करना पड़ता है। लडकों और मर्दों के मुकाबले लगातार छोटा और गिरा हुआ बताए जाने का अनुभव और एहसास, आत्म–सम्मान, आत्म–महत्व और आत्म–विश्वास को खत्म कर देता है तथा स्त्रियों की इच्छाओं, आकांक्षाओं और सपनों के पर काट देता है। अपनी अहमियत जताने के लिए उठाए गए हर मज़बूत कदम को नारीत्व के खिलाफ मान कर थू–थू की जाती है। ज्यों ही स्त्रियाँ पूर्व निश्चित हदों और भूमिकाओं के बाहर निकल कर कुछ नया करना चाहती हैं तो उन्हें बेशर्म और बेपर्दा कहा जाता है। ऐसे रिवाज़ और कायदे जो स्त्रियों को मर्दों से नीचा मानते हैं, वो सभी जगह मौजूद हैं। यह बात स्पष्ट है कि स्त्रियों के साथ जो कुछ हो रहा है, वह एक 'व्यवस्था' के तहत है, यह व्यवस्था पुरुष प्रधानता पुरुष उच्चता और पुरुष नियंत्रण की है, इसमें औरतों का दर्जा गिरा हुआ, कमज़ोर और अधिकारहीनता का है।

पितृसत्तात्मक व्यवस्था के तहत किन–किन चीज़ों पर मर्दों का नियंत्रण होता है ?

(Areas of command in Patriarchal system)

पितृसत्तात्मक व्यवस्था का नियंत्रण जीवन के सभी क्षेत्रों में फैला हुआ है, जैसे कि –

1. औरतों की उत्पादन या श्रम शक्ति पर नियंत्रण – मर्द, घर के भीतर औरत द्वारा की जाने वाली मेहनत और घर के बाहर कमाई के लिए की जाने वाली मज़दूरी दोनों पर नियंत्रण रखते हैं। इसे ''उत्पादन की पितृसत्तात्मक प्रणाली'' का नाम दिया जाता है। इसके तहत पति तथा परिवार के अन्य सदस्य औरतों की मेहनत का फायदा उठाते हैं। घरेलू औरतें उत्पादन करने वाला वर्ग है और पति फायदा उठाने वाला वर्ग। औरत का चौबीस घण्टे चलने वाला उबाऊ काम और कमरतोड़ मेहनत को काम समझा ही नहीं जाता, और फिर भी उसे पति पर निर्भर व्यक्ति के रूप में देखा जाता है।

2. औरतों की प्रजनन शक्ति पर नियंत्रण – अनेक समाजों में बच्चों की संख्या, उनके जन्म का समय, गर्भ निरोधकों का इस्तेमाल जैसे औरतों से ताल्लुक रखने वाले बुनियादी मुद्दों का फैसला भी खुद उनके हाथों में नहीं होता। औरतें कब और कितने बच्चे पैदा करें, या बिलकुल ना करें, इसका फैसला खुद कर पाने की आज़ादी के लिए लगभग सारी दुनिया की औरतें लगातार संघर्ष कर रही हैं। इस बात से साबित हो जाता है कि सरकार और धर्म के माध्यम से पुरुषों का यह नियंत्रण कितना कठोर है और ये सभी लोग इस नियंत्रण को छोड़ने को ज़रा भी तैयार नहीं हैं।

3. औरतों की यौनिकता (सेक्सुअलिटी) पर नियंत्रण – ऐसा माना जाता है कि पुरुषों की इच्छाओं और ज़रूरतों के अनुसार औरतों को यौन सुख देना ही चाहिए। स्त्रियों की यौनिकता पर किसी एक पुरुष का ही अधिकार हो इसे सुनिश्चित करने के लिए उसकी पोशाक, चाल–ढाल पर कड़ा नियंत्रण रखा जाता है। स्त्री की यौनिकता उसके अपने अधिकार में नहीं रहती, वह दूसरों द्वारा नियंत्रित वस्तु हो जाती है। परिवार के भीतर तथा बाहर बलात्कार अथवा उसकी धमकी के ज़रिए भी यौनिकता पर काबू रखा जाता है। इसे और अधिक कारगर बनाने के लिए बलात्कार के साथ शर्मिन्दगी और बेइज्जती के भाव का एक बहुत बड़ा मायाजाल तैयार कर दिया गया है।

4. औरतों की गतिशीलता पर नियंत्रण – औरतों की यौनिकता, उसके उत्पादन और प्रजनन पर नियंत्रण, रखने के लिए ज़रूरी है कि मर्द, औरतों के आने–जाने पर नियंत्रण रखे। इसके लिए कई तरीके अपनाए गए हैं। पर्दा, घरेलू क्षेत्र तक उनके दायरे की सीमा, उस सीमा को छोड़ने पर रोक, पारिवारिक और सार्वजनिक दायरों के बीच बड़ा–सा फर्क, स्त्रियों और पुरुषों के बीच कम से कम सम्पर्क, आदि सभी बातें अपने ढंग से औरत की आज़ादी और गतिशीलता पर नियंत्रण रखती हैं। इनकी खासियत ये है कि ये एक जेण्डर पर लागू होती हैं, दूसरे पर नहीं।

5. सम्पत्ति तथा अन्य आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण – ज़्यादातर सम्पत्ति तथा अन्य आर्थिक संसाधनों पर मर्दों का नियंत्रण है और आमतौर पर ये एक मर्द से दूसरे मर्द, याने पिता से पुत्र के हाथों में जाती हैं। जहाँ कहीं औरतों को उत्तराधिकार का कानूनी हक मिला है, वहाँ भी सामाजिक रिवाज़, भावनात्मक दबाव, रिश्तों की राजनीति से लेकर साफ–साफ ज़ोर–जबरदस्ती का इस्तेमाल करके उन्हें अपने हक वास्तव में पाने से रोका जाता है।

उपरोक्त बिन्दु क्रमांक 1 से 5 तक के अध्ययन के आधार पर एक सूची बनाइये कि पुरुषों द्वारा औरतों पर किस–किस प्रकार से नियंत्रण किया जाता है?

_____

_____

_____

पितृसत्तात्मक व्यवस्था किन–किन राजनैतिक, धार्मिक और सामाजिक संस्थाओं पर नियंत्रण करती है?
(Commands and control's of Patriarchy in societal, religion and political institutions)

समाज की सभी मुख्य संस्थाओं का विश्लेषण करें तो मालूम होता है कि इस व्यवस्था की कड़ियाँ आपस में बड़ी मज़बूती से जुड़ी हुईं हैं – कि इसे हिलाना भी असम्भव लगता है। कुछ हद तक तो व्यवस्था प्राकृतिक लगने लगती है, जो हमेशा से चली आई है और हमेशा चलती रहेगी। चलिए हम प्रत्येक पितृसत्तात्मक संस्था को अलग–अलग देखते हैं :–

1. परिवार – परिवार, जो समाज की बुनियादी इकाई है, शायद सबसे अधिक पितृसत्तात्मक संस्था है। आने वाली पीढ़ियों को पितृसत्तात्मक मूल्य देने और सिखाने का काम भी परिवार करता है। परिवार के भीतर ही हम सबसे पहले ऊँच–नीच पदानुक्रम पर आधारित भेदभाव का पाठ पढ़ते हैं। लड़कों को दबावकारी बनने और रौब जमाने की सीख मिलती है, जबकि लड़कियों को दबने और भेदभाव स्वीकारने की। हालाँकि विभिन्न समाजों और परिवारों में पुरुष नियंत्रण का रूप और सीमा अलग–अलग हो सकती है, लेकिन ये पूरी तरह से गैर–मौजूद कभी नहीं होती। परिवार अपने आईने में न सिर्फ सामाजिक व्यवस्था को प्रतिबिम्बित करता है, वरन् बच्चों को उसे मानने का पाठ भी पढ़ाता है, बल्कि परिवार लगातार उस व्यवस्था को गढ़ता है और मज़बूत करता चलता है।''

> किसी परिवार में होने वाले उन कार्यों तथा निर्देशों की सूची बनाइये जिनसे आपको लगता है कि ये पितृसत्तात्मक व्यवस्था के कारण है।

2. धर्म – अधिकांश आधुनिक धर्म पितृसत्तात्मक हैं, जो पुरुष प्रभुत्व को सर्वोपरि मानते हैं। वे पितृसत्ता को इस ढंग से पेश करते हैं कि जैसे वह ईश्वर की इच्छा है। उन्होंने ही नैतिकता, नीतिशास्त्र, व्यवहार और यहाँ तक कि कानून की परिभाषाएँ तय की हैं, स्त्रियों व पुरुषों के कर्तव्य और अधिकार बताए हैं। उन दोनों के बीच का रिश्ता निश्चित किया है। वे सरकारी नीतियों पर भी असर डालते हैं और अधिकांश समाज में एक बड़ी ताकत के रूप में आज भी कारगर हैं। एक लोकतांत्रिक देश होते हुए भी विवाह, तलाक और उत्तराधिकार के मामलों में किसी भी व्यक्ति की कानूनी पहुँच उसके धर्म पर निर्भर करती है।

3. कानूनी व्यवस्था – अधिकांश देशों में कानूनी व्यवस्था पुरुष तथा आर्थिक रूप से सशक्त वर्ग की पक्षधर है। परिवार, विवाह और उत्तराधिकार सम्बन्धी कानून पितृसत्तात्मक सम्पत्ति नियंत्रण के साथ करीब से जुड़े हुए हैं। विधि–शास्त्र, कानूनी न्याय व्यवस्थाएँ, न्यायाधीश तथा वकील, सभी अधिकतर अपने दृष्टिकोण तथा कानूनी व्यवस्था में पितृसत्तात्मक सोच रखते हैं।

4. आर्थिक व्यवस्था तथा आर्थिक संस्थाएँ – पितृसत्तात्मक अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत, पुरुष आर्थिक संस्थाओं, अधिकांश सम्पत्ति व आर्थिक गतिविधियों पर नियंत्रण रखते है। वे ये भी तय करते हैं कि उत्पादन की विभिन्न कार्यवाहियों को कितनी अहमियत दी जाए। औरतों द्वारा किए जाने वाले अधिकांश उत्पादन कार्य का न तो भुगतान होता है और न ही अहमियत मिलती है। औरतों के घरेलू कामों का तो मूल्यांकन ही नहीं होता। खास बात यह है कि औरत की उत्पादक व बच्चों को पालने आदि की विभिन्न भूमिकाओं को आर्थिक योगदान के रूप में देखा ही नहीं जाता।

5. राजनैतिक व्यवस्था तथा संस्थाएँ – ग्राम पंचायत से लेकर संसद तक सभी स्तरों पर समाज की सभी राजनैतिक संस्थाओं में पुरुषों का बोलबाला है हमारे देश का भाग्य तय करने वाले राजनैतिक दलों व संगठनों में मुट्ठीभर औरतें हैं। हालाँकि दक्षिण एशियाई देशों में इतनी अधिक औरतों ने सरकार की अगुआई की है, परन्तु जहाँ तक संसद में औरतों की मौजूदगी का सवाल है, दो–तीन देशों को छोड़कर दुनिया में कहीं भी उनकी संख्या 10 प्रतिशत से अधिक नहीं बढ़ी।

6. जनसंचार माध्यम – वर्ग और जेण्डर से जुड़ी विचारधारा फैलाने के लिए उच्च वर्ग व उच्च जाति के मर्दों के हाथ में जनसंचार माध्यम एक बहुत मज़बूत औज़ार है। फिल्मों से लेकर टेलीविजन तक, पत्रिकाओं, अखबारों, रेडियो, सभी जगह औरत की वही घिसी–पिटी विकृत छवि को दर्शाया जाता है। लगातार शब्दों, छवियों के ज़रिए पुरुष उच्चता और स्त्री के नीचे दर्जे को जताने वाले सन्देश मिलते रहते हैं। दूसरे क्षेत्रों की ही तरह जनसंचार माध्यमों में भी पेशेवरों के रूप में स्त्रियों की संख्या बहुत कम है। रिपोर्ट लिखने, छापने, विज्ञापन व सन्देश देने का ढंग पूरी तरह औरतों के खिलाफ है, जो उन्हें एक कमज़ोर, गिरी हुई यौन वस्तु के रूप में देखता है।

7. शिक्षण संस्थाएँ और ज्ञान व्यवस्थाएँ – जब से ज्ञान को औपचारिक व संस्थागत रूप मिला तब से शिक्षा पर पुरुषों ने अपना कब्ज़ा जमा लिया। दर्शन, धर्मशास्त्र, विधि, विज्ञान, गणित, साहित्य, कला ज्ञान के सभी अंगों तथा शास्त्रों पर आरम्भ से ही पुरुषों का कब्ज़ा रहा है और उन्होंने ऐसी व्यवस्थाएँ बनाई जिससे कि महिलाओं के ज्ञान प्राप्त करना और उसके निर्माण में अपना योगदान देना असम्भव हो जाए। इसी कारण से आज हम देखते हैं कि शिक्षा के क्षेत्र में पुरुष वर्चस्व कायम है। हाल के दिनों में महिला शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ती हुई दिखती हैं, तथापि वे पुरुषों की तुलना में बहुत पीछे हैं। ज्ञान के निर्माण व प्रसार के पुरुषों के इस आधिपत्य के कारण औरतों की समझ, उनके अनुभव, उनकी योग्यता और आकांक्षाएँ शिक्षा व्यवस्था के हाशिए पर धकेल दी गई हैं। ये शिक्षा पुरुषों द्वारा नियंत्रित होने तथा पितृसत्ता के पक्ष में निर्मित होने के कारण औरत और मर्द के सोचने और समझने के तरीकों में भिन्नता पैदा करती है, जिससे स्त्री व पुरुष अलग–अलग ढंग से व्यवहार करते हैं, सोचते हैं, आकांक्षाएँ रखते हैं, क्योंकि उन्हें भेदभावपूर्ण पुरुषत्व और नारीत्व की सोच सिखलाई गई है।

कुछ प्रश्न

1. पितृसत्तात्मक व्यवस्था महिलाओं को आगे बढ़ने से रोकती है। इस कथन के पक्ष में कुछ उदाहरण दीजिए।
2. पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था लड़के और लड़कियों के बीच भेदभाव करती है। कुछ उदाहरण दीजिए।

पितृसत्तात्मक व्यवस्था के ढाँचे की जड़ें इतनी गहरी हैं और ज़िन्दगी के हर पहलू में फैली हुई हैं, उन्हें कहाँ से काटना शुरू करेंगे और कैसे उनसे छुटकारा पाएँगे ?

किसी भी ढाँचे या स्थिति की ठीक से जाँच कर लेने मात्र से, उसकी तरफ गौर से बिना खौफ देख लेने मात्र से, उसका हौवा कम हो जाता है। उसका विकराल रूप फिर उतना डरावना नहीं लगता। अगर पितृसत्ता एक बड़ा जाल है और उसका एक पहलू दूसरे से जुड़ा हुआ है तो उसे एक जगह से काटेंगे तो दूसरी गाँठें भी कमज़ोर पड़ेंगी। पूरे जाल में हरकत होगी, पर हाँ, यह ज़रूरत है कि पितृसत्ता का ढाँचा कोई ऐसा नहीं है कि हम कुछ छोटे–मोटे कदम उठाएँ और वो हमारे सामने ढेर हो जाए। ढेर ये तभी होगा जब हर घर में हलचल होगी। जब हर औरत इसे बोझ समझेगी और इसे अपने सर से उतार फेंकना चाहेगी।

कुछ मातृसत्तात्मक व्यवस्थाएँ (Some matriarchal systems) –

मातृसत्तात्मक समाज के घरों की जिम्मेदारी महिलाओं के पास होती है, जायदाद पर मालिकाना हक महिलाओं का होता वे उसे अपनी बेटियों को देती हैं। यहाँ पति, शादी कर महिला के घर रहने जाते हैं। पुरूष के पास, राजनैतिक और सामाजिक मसलों पर निर्णय लेने का हक होता है। इसका उदाहरण भारत में खासी समुदाय में दिखायी देता है।

पूर्वात्तर के खासी समुदाय में लड़की का जन्म जश्न का मौका होता है। वहाँ लड़का पैदा होना एक साधारण बात है। आम तौर पर परिवार की बड़ी बेटी का परिवार की विरासत पर हक होता है। अगर किसी दम्पत्ति की बेटी नहीं होती तो वे लड़की गोद लेकर उसे अपनी जायदाद सौंप सकते है। खासी समुदाय की इस प्रथा के कारण पुरूषों ने अपने हकों के लिए नये समुदाय बना लिए।

इसी प्रकार दक्षिण भारत के चाम समुदाय की मान्यताएँ कंबोडिया, वियतनाम और थाईलैंड में बहुत अधिक प्रचलन में है। चाम समुदाय भी मातृसत्तात्मक व्यवस्था पर विश्वास करता है, और परिवार की जायदाद भी महिलाओं को मिलती है। लड़कियों को अपने लिए पति चुनने का अधिकार होता है। शादी के बाद लड़के, ज्यादातर लड़की के परिवार के साथ रहते हैं।

सारांश (Summary)

- सामाजिक व्यवस्था में पितृसत्ता/मातृसत्ता के नियंत्रण के परिणाम को समझ सकेंगे।
- विकास के लिए सामाजिक व्यवस्था में पारिवारिक सदस्यों की भूमिकाओं को समझेंगे।
- सभी के विकास हेतु उपयुक्त वातावरण की समझ विकसित होगी।

अभ्यास कार्य

1. पितृसत्तात्मक व्यवस्था और लैंगिक भेदभाव के बीच गहरा सम्बंध है, समझाइये।
2. ''पुरुषों की तुलना में महिलाओं का दर्जा गिरा हुआ, कमजोर और अधिकारहीनता का है।'' उदाहरण देते हुए समझाइये।
3. पितृसत्तात्मक व्यवस्था में औरतों की श्रम शक्ति तथा गतिशीलता पर नियंत्रण को उदाहरणों से समझाइये।
4. पितृसत्तात्मक व्यवस्था किन–किन राजनैतिक और सामाजिक संस्थाओं पर कैसे नियंत्रण करती हैं? वर्णन कीजिए।
5. पितृसत्तात्मक व्यवस्था से होने वाले नुकसान क्या–क्या हैं, सूची बनाइये।
6. विकास के लिए किस तरह की सामाजिक व्यवस्था होनी चाहिए, इसके लिए आपकी क्या भूमिका होगी?

प्रयोजना कार्य

आप मातृसत्तात्मक व्यवस्था के विषय में पक्ष या विपक्ष में तर्क पूर्ण विचार दीजिए।

संदर्भ ग्रंथ

1. भला ये जेण्डर क्या है, कमला भसीन, अनुवाद वीणा शिवपुरी, जागोरी प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. हमारी बेटियाँ इंसाफ की तलाश में।
3. नारीवाद यह आखिर है क्या? कमला भसीन–निघत सईद खान, अनुवाद वीणा शिवपुरी, कमला भसीन और जुही जैन, जागोरी प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. काश, मुझे किसी ने बताया होता!! कमला भसीन, जागोरी प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. पितृसत्ता क्या हैं? कमला भसीन, अनुवाद वीणा शिवपुरी, जागोरी प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. पुरुषों के साथ जेंडर कार्यशालाएँ।
7. लड़की क्या हैं? लड़का क्या हैं?

   कमला भसीन, जागोरी प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. You can also visit for more reading - www.jagori.org

इकाई – 10

लैंगिक मुद्दे : शिक्षा एक समाधान

(Gender issues: Education a resolution)

सामान्य परिचय (General Introduction)

लैंगिक असमानता को दूर करने व महिलाओं की स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए समाज की मानसिकता में परिवर्तन करने की आवश्यकता है।

भारतीय समाज में लिंग असमानता का मूल कारण कहीं पितृसत्तात्मक व्यवस्था या मातृसत्तात्मक व्यवस्था में निहित है। ऐसी सामाजिक संरचना में कहीं पुरूष महिलाओं पर प्रभुत्व जमाते हैं, तो कहीं महिलाएँ पुरूषों पर।

विकास की यात्रा में महिला एवं पुरूष की साझी समझ एवं कार्यों में भागीदारी का विशेष महत्व है, अतः लैंगिक मुद्दों में जागृति लाना शिक्षा से ही संभव है।

इकाई के उद्देश्य (Objectives of Unit)

1. शिक्षा के महत्व को समझाना।
2. शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओं के योगदान को समझना व प्रेरित करना।
3. बालिकाओं हेतु हितकारी योजनाओं के प्रति जागरूकता लाना।

- **बालिकाओं की शिक्षा हेतु किए गए योगदान (Interventions in girls education)**

प्रथम स्कूल की प्रथम अध्यापिका –

14 जनवरी, 1848 के दिन पूना के बुधवार पेठ निवासी तात्यासाहब भिड़े के मकान में एक कन्या पाठशाला खुली। इसकी शुरूआत एक लंबे संघर्ष के बाद हो सकी। इसकी योजना के दौरान ही कई घटनाएँ घटी, जो साधारण दिलो–दिमाग वाले आदमी की हिम्मत ही तोड़ देती। लेकिन फुले दंपत्ति उनसे नहीं घबराए और उन्होंने इसे जीवन का परम लक्ष्य मान लिया। वे जानते थे कि यह कांटों भरी राह है। इस बीच उनके अनेक शुभचिंतकों ने जहां उनका साहस बढ़ाया, वहीं कुछ ने उन्हें निरूत्साहित भी किया। तात्यासाहब भिड़े यह जान चुके थे कि स्कूल के बहाने ही फुले अपनी लड़ाई लड़ और उसे जारी रख सकेंगे। भिड़े, ज्योतिबा के पक्के मित्र थे। यह एक ऐसा स्कूल था, जिसमें पढ़ने के लिए छात्राओं को घर से बुला कर लाया जाता था। कहा जाता है कि इससे पहले सन् 1832 में इसी पेठ में ही एक पाठशाला खुली थी, जिसमें नाम लिखाने के लिए अभिभावकों को जिलाधिकारी या एजेंट की चिट्ठी लानी पड़ती थी। लेकिन यह पहला स्कूल था जिसमें दाखिले के लिए विद्यार्थी सीधे आ सकते थे। जब ज्योतिबा फुले बुधवार पेठ के आसपास बसे लोगों से अपनी लड़कियों को इस स्कूल में भेजने के लिए कहते, तब सभी आश्चर्य से उनकी ओर देखने लगते। उनकी लगन देखकर ही भिड़े जी ने उन्हें प्रोत्साहित किया। उन्होंने फुले दंपत्ति को स्कूल के लिए न केवल अपना बड़ा सा

मकान दिया, बल्कि स्कूल शुरू करने के लिए एक सौ एक रूपये चंदा भी दिया। प्रारंभ में स्कूल में अन्नपूर्णा जोशी, सुमती मोकाशी, दुर्गा देशमुख, माधवी थत्ते, सोनू पवार और जानी करडिले नामक 6 लड़कियां आई। इनकी पहली अध्यापिका सावित्रीबाई बनीं। उन्होंने एक कुशल अध्यापिका के रूप में सबको प्रभावित किया। कठिनाइयां झेल कर भी उन्होंने हमेशा अपने कर्तव्य का निर्वाह किया। स्त्रियों के जीवन में क्रांतिकारी चेतना जागृत करने वाली सावित्रीबाई फुले सही मायने में प्रकाशपुंज थी।

2. शिक्षा एक हथियार : शिक्षा के लिए–मलाला युसुफजई का बालिकाओं की शिक्षा में योगदान–

मलाला युसुफजई एक ऐसी शख्सियत का नाम है जिसने पढ़ने–लिखने और खेलने–कूदने की छोटी सी उम्र में आतंकवादियों से लोहा लेना शुरू कर दिया, लेकिन इसके लिए उसने बन्दूक और गोला बारूद की जगह हथियार बनाया शिक्षा को। उन आतंकवादियों की गोलियों और धमकियों से ना वो डरी ना सहमी, यहां तक की मौत भी उसके इरादों को बदल ना सकी। और जब उसे गोली लगी तो भी वो डरी नहीं, उसने अपने हौसले से मौत को हरा दिया। उसने सभी महिलाओं और बच्चियों को शिक्षा दिलाने के लिए अपनी जंग और मुहिम को जारी रखा। मलाला युसुफ़ज़ई (Malala Yousafzai), जिसे मात्र 17 साल की उम्र में शान्ति के नोबेल पुरूस्कार से नवाज़ा गया, जो अब तक सबसे कम उम्र में नेाबेल पुरूस्कार पाने वाली शख्शियत है और यही वजह है कि 12 जुलाई को पूरे विश्व में ''मलाला युसुफज़ई दिवस'' के रूप में मनाया जाता है।

स्वात घाटी के केन्द्र मिंगोरा में हालात ऐसे हो गए कि लोग जब सुबह उठते तो उन्हें शहर के चौराहों पर लटकी हुई लाशें मिलती थीं। कई लोगों को इस वजह से मार दिया गया क्योंकि उन पर तालिबान का विरोध करने का आरोप लगा था। मलाला ने ब्लॉग और मीडिया में तालिबान की ज्यादतियों के बारे में जब लिखना शुरू किया तब से उसे कई बार मौत की धमकियां मिली। मलाला उन पीड़ित लड़कियों में से है जो तालिबान के फरमान के कारण लम्बे समय तक स्कूल जाने से वंचित रहीं। तीन साल पहले स्वात घाटी में तालिबान ने लड़कियों के स्कूल जाने पर पाबंदी लगा दी थी। लड़कियों को टीवी कार्यक्रम देखने की भी मनाही थी। मलाला भी इसकी शिकार हुई। संघर्ष के दौरान ही मलाला ने अपनी एक डायरी लिखनी प्रारंभ कर दी थी। जिसमें उसने स्वात घाटी में तालिबान की दरिंदगी का वर्णन करने के साथ–साथ अपने दर्द को भी बयां किया। इसके बाद 13 साल की मलाला को पूरे पाकिस्तान में जाना–पहचाना जाने लगा और उसे बहादुरी के लिए पुरस्कार से नवाजा गया।

बालिका शिक्षा के लिए छत्तीसगढ़ राज्य में संचालित योजनाएँ –

छत्तीसगढ़ राज्य में शिक्षा विभाग द्वारा बालिकाओं की शिक्षा के प्रति रूचि जाग्रत करने तथा राज्य के विकास में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न योजनाएँ चलायी जा रही हैं, जो निम्नानुसार हैं –

1. सरस्वती सायकल योजना –

विभाग का नाम	–	स्कूल शिक्षा विभाग
योजना का नाम	–	सरस्वती सायकल योजना
क्रियान्वयन एजेंसी	–	स्कूल शिक्षा विभाग

कार्यक्षेत्र	–	सम्पूर्ण छत्तीसगढ़
योजना का उद्देश्य	–	कक्षा 9वीं के शासकीय एवं अनुदान प्राप्त विद्यालयों में अध्ययनरत अनुसूचित जाति, जनजाति एवं बी.पी.एल. परिवार की छात्राओं को शाला आवागमन की सुविधा प्रदान करना एवं बालिका शिक्षा को प्रोत्साहन करना।
हितग्राही की पात्रताएं	–	शासकीय एवं अनुसूचित जाति, जनजाति एवं बी.पी.एल. परिवार की छात्राएँ।
मिलने वाले लाभ	–	निःशुल्क सायकल।
आवेदन की प्रक्रिया	–	आवश्यक नहीं।
चयन प्रक्रिया	–	हितग्राही का चयन शाला के प्राचार्य द्वारा जाति प्रमाण पत्र के आधार पर किया जाता है।

2. कस्तूरबा गांधी आवासीय बालिका विद्यालय –

भारत सरकार द्वारा अगस्त 2004 से सर्व शिक्षा अभियान के पृथक घटक के रूप में दूरस्थ ग्रामीण अंचलों में निवासरत अ.जा./अ.ज.जा./अ.पि.व. एवं अल्प संख्यक समुदाय के उच्च प्राथमिक स्तर की बालिकाओं की शिक्षा को बढ़ावा देने हेतु कस्तुरबा गांधी बालिका आवासीय विद्यालय (100 सीटर) का संचालन सफलता पूर्वक किया जा रहा है।

निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के लागू होने तथा सर्व शिक्षा अभियान के क्रियान्वयन की संरचना में संशोधन के उपरांत के.जी.बी.व्ही. घटक का क्रियान्वयन अधिनियम के अंतर्गत निर्धारित नियम व शर्तों के अनुरूप किया जा रहा है –

1. उक्त विद्यालय में 10 वर्ष से अधिक आयु की शाला त्यागी/अप्रवेशी, पालक/अभिभावक से वंचित, नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में शिक्षा से वंचित विशेष आवश्यकता वाली, मौसमी पलायन के कारण पढ़ाई से वंचित एवं कठिन भौगोलिक कारण से पढ़ाई से वंचित बालिकाओं को प्रवेश दिया जाता है।
2. प्रदेश के चार जिलों को छोड़कर (रायपुर, दुर्ग, बालोद व राजनांदगांव), 24 जिले में कुल 93 कस्तूरबा गांधी बालिका आवासीय विद्यालय (100 सीटर) संचालित हैं।
3. यह विद्यालय उन विकासखण्डों में संचालित है जहाँ महिला साक्षरता दर, कम है।
4. उक्त विद्यालय में 93 अधीक्षिकाएं, 320 शिक्षिकाएँ कार्यरत हैं। इसके अलावा प्रत्येक के.जी.बी.व्ही. में लेखापाल, रसोईया, भृत्य एवं नगर सेनानी महिला सुरक्षागार्ड कार्यरत है।
5. माननीय मुख्यमंत्री के निर्देशानुसार सेन्टर फार एक्सीलेंस के.जी.बी.व्ही. हेतु कार्ययोजना का निर्माण किया गया है।
6. बालिकाओं के अध्ययन स्तर के आकलन हेतु कक्षावार, विषयवार प्रश्न बैंक का निर्माण किया गया है।
7. समस्त के.जी.बी.व्ही. हेतु ''के.जी.बी.व्ही. का आईना'' कार्यक्रम के तहत प्रत्येक माह राज्य कार्यालय

से कार्ययोजना का निर्माण किया जाता है।

8. माहवारी स्वच्छता प्रबंधन पर बाल केबिनेट/मीना मंच के माध्यम से नारे, पोस्टर निर्माण, कविता लेखन, वाद–विवाद, भाषण प्रश्नोत्तरी, निबंध लेखन आदि कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है।

9. बालिकाओं के सर्वांगीण विकास हेतु खेल–कूद, साहित्यिक–सांस्कृतिक प्रतियोगिता का आयोजन तथा शाला स्तर, जिला स्तर, संभाग स्तर एवं राज्य स्तर पर विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित की जाती हैं।

10 राज्य के समस्त के.जी.बी.व्ही. में आपस में एक स्वस्थ प्रतियोगिता की भावना विकसित हो एवं अपने द्वारा किये कार्य एवं उपलब्धियों को सामने लाने के उद्देश्य से बेस्ट विद्यालय, बेस्ट स्टॉफ एवं बेस्ट अधीक्षिका का मूल्यांकन शाला स्तर, जिला स्तर, संभाग स्तर एवं राज्य स्तर पर किया गया है।

11. प्रत्येक माह सभी बालिकाओं का स्वास्थ्य परीक्षण कराया जाता है तथा आयरन/फोलिक एसीड टेबलेट प्रत्येक सप्ताह दिया जाता है।

12. अधीक्षिकाओं को आत्मरक्षा प्रशिक्षण एवं जीवन कौशल प्रशिक्षण दिया गया है और अब उनके द्व ारा यह प्रशिक्षण बालिकाओं को दिया जा रहा है।

13. सभी कस्तूरबा गांधी बालिका आवासीय विद्यालयों में ग्रीष्मकालीन अवकाश में व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है।

3. कन्या छात्रावास (केन्द प्रवर्तित योजना) –

विभाग	–	स्कूल शिक्षा विभाग
योजना	–	केन्द्र प्रवर्तित योजना (कन्या छात्रावास)
कार्यक्षेत्र	–	छत्तीसगढ़ के पिछड़े विकासखंड
उद्देश्य	–	शैक्षणिक रूप से पिछड़े विकासखंड जहां महिला साक्षरता दर कम है, वहां बालिकाओं के उन्नयन में आने वाली बाधाओं को दूर करना।
पात्रता	–	14 से 18 आयु समूह की कक्षा 9वीं से 12वीं तक अध्ययनरत् बालिकाएं, जो अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़ा वर्ग, अल्प संख्यक समुदाय एवं बी.पी.एल. परिवार से संबंधित हैं।
हितलाभ	–	सर्व सुविधायुक्त कन्या छात्रावास की स्थापना से कक्षा में सहभागिता एवं गुणवत्तायुक्त शैक्षणिक उन्नयन।

राज्य के शैक्षणिक रूप से पिछड़े 74 विकासखंडों में 100 सीटर कन्या छात्रावासों की स्वीकृति भारत शासन से प्राप्त हुई, जिसमें 74 कन्या छात्रावासों का संचालन प्रारंभ है।

4. बालिका प्रोत्साहन योजना (केन्द प्रवर्तित योजना) –

- केन्द्र प्रवर्तित योजना राज्य में प्रभावशील है।
- योजनान्तर्गत् अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, बी.पी.एल. परिवार तथा कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय की समस्त छात्राएं योजना की हितग्राही हैं।
- 18 वर्ष की आयु पूर्ण करने पर 3000/– रूपये छात्रवृत्ति की पात्रता है।
- छात्रवृत्ति की राशि सीधे लाभान्वित छात्राओं के बैंक खाते में जमा करने का प्रावधान है।
- लगभग 35600 बालिकाओं के प्रस्ताव भारत सरकार को अनुमोदन हेतु प्रेषित है।
- वर्ष 2015–16 एवं 2016–17 से नेशनल स्कॉलरशिप पोर्टल में जानकारी सीधे अपलोड की जा रही है।

5. कन्या साक्षरता प्रोत्साहन योजना –

विभाग का नाम	–	स्कूल शिक्षा विभाग
योजना का नाम	–	कन्या साक्षरता प्रोत्साहन योजना
कार्यक्षेत्र	–	सम्पूर्ण छत्तीसगढ़
योजना का उद्देश्य	–	अनुसूचित जाति, जनजाति की कन्याओं को शिक्षा में प्रोत्साहन हेतु
हितग्राही की पात्रताएँ	–	शासकीय शालाओं में कक्षा 6वीं में अध्ययनरत् अनुसूचित जाति, जनजाति की छात्राएं।
मिलने वाले लाभ	–	रू. 500/– प्रति दस माह हेतु।
आवेदन की प्रक्रिया	–	आवश्यक नहीं।
चयन प्रक्रिया	–	योजनान्तर्गत शासकीय शालाओं के अनुसूचित जाति, जनजाति की छात्राओं को शिक्षण की सुविधा।

सारांश (Summary)

- विकास की यात्रा में महिला एवं पुरूष की सही समझ एवं कार्यों में भागीदारी का विशेष महत्व है, जिसकी जागरूकता शिक्षा से ही संभव है।
- प्रारंभ से ही बालिकाओं की शिक्षा हेतु प्रयास होते रहे हैं, जिससे लैंगिक समानता के प्रोत्साहन के लिए शासन द्वारा विभिन्न लाभकरी योजनाएं चलाई जा रही हैं।

अभ्यास कार्य

प्रश्न – मलाला युसुफज़ई के विचार से – ''एक किताब, एक कलम, एक बच्चा व एक शिक्षक दुनिया बदल सकते हैं।'' व्याख्या करें।

प्रश्न – बालिकाओं को शिक्षा के लिए प्रेरित करने में सावित्रीबाई फुले की भूमिका पर अपने विचार दें।

प्रश्न – शिक्षा के प्रसार हेतु दबाव/विरोधों का सामना करने वाले किसी अन्य महान व्यक्तित्व के बारे में पुस्तकालय से जानकारी प्राप्त कर लेख लिखे।

प्रश्न – शासकीय योजनाओं के लाभ की जानकारी आप समुदाय को किस प्रकार देंगे?

परियोजना कार्य –

- विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्धि प्राप्त व्यक्तित्व की सूची, जानकारी तैयार करें जिसमें लैंगिक समानता संबंधी चुनौतियाँ परिलक्षित होती हैं –

क्रमांक	कार्य क्षेत्र	महिला	पुरूष	तृतीय लिंग
01	पाक कला	–	शेफ अली राजीव कपूर	
02	बस ड्रायवर	बसंत कुमारी	–	
03				

- कक्षा में लैंगिक भेदभाव नहीं होता है इस विषय पर अवलोकन कर अपने विचार दीजिए।
- लैंगिक असमानता को समाप्त करने में आपके क्या प्रयास होंगे बिंदूवार योजना बनाइये।
- लैंगिक असमानता विषयक पोस्टर एवं स्लोगन तैयार कीजिए।

संदर्भ ग्रंथ –

सावित्री बाई फुले की सचित्र जीवनी।

♦♦♦♦♦

कुटुमसर गुफा, बस्तर

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् छत्तीसगढ़, रायपुर